Machine Translated by Google

THE COURAGE TO BE DISLIKED

The Japanese Phenomenon That Shows You How to Change Your Life and Achieve Real Happiness

Ichiro Kishimi and Fumitake Koga

Machine Translated by Google

THE COURAGE TO BE DISLIKED

The Japanese Phenomenon That Shows You How to Change Your Life and Achieve Real Happiness

ICHIRO KISHIMI
AND
FUMITAKE KOGA

ATRIA BOOKS
New York London Toronto Sydney New Delhi

Machine Translated by Google

अंतर्वस्तु

लेखकों का नोट

परिचय

पहली रात:

आघात से इनकार करें

अज्ञात तीसरा विशालकाय

लोग क्यों बदल सकते हैं

आघात का अस्तित्व नहीं है

लोग क्रोध का निर्माण करते हैं

अतीत के नियंत्रण से मुक्त होकर कैसे जियें

सुकरात और एडलर

क्या आप जैसे हैं वैसे ही ठीक हैं?

दुःख एक ऐसी चीज़ है जिसे आप स्वयं चुनते हैं

लोग हमेशा बदलना नहीं चुनते

आपका जीवन यहीं और अभी तय होता है

दूसरी रात:

सभी समस्याएं पारस्परिक संबंधों की समस्याएं हैं

आप खुद को नापसंद क्यों करते हैं?

Machine Translated by Google

सभी समस्याएं पारस्परिक संबंधों की समस्याएं हैं

हीनता की भावनाएँ व्यक्तिपरक धारणाएँ हैं

हीन भावना एक बहाना है

डींगें हांकने वालों में हीनता की भावना होती है

जीवन कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है

आप ही एकमात्र व्यक्ति हैं जो अपने रूप-रंग के बारे में चिंतित हैं

सत्ता संघर्ष से बदला लेने तक

गलती स्वीकार करना हार नहीं है

जीवन में आने वाली चुनौतियों पर विजय पाना

लाल धागा और कठोर जंजीरें

"जीवन-झूठ" के झांसे में न आएं

कब्जे के मनोविज्ञान से अभ्यास के मनोविज्ञान तक

तीसरी रात:

अन्य लोगों के कार्यों को त्यागें

मान्यता की इच्छा को अस्वीकार करें

दूसरों की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए मत जिएं

कार्यों को अलग कैसे करें

अन्य लोगों के कार्यों को त्यागें

पारस्परिक संबंधों की समस्याओं से कैसे छुटकारा पाएँ

गॉर्डियन नॉट को काटें

मान्यता की इच्छा आपको अस्वतंत्र बनाती है

Machine Translated by Google

असली आज़ादी क्या है?

आपके पास पारस्परिक संबंधों के कार्ड हैं

चौथी रात:

विश्व का केंद्र कहाँ है

व्यक्तिगत मनोविज्ञान और समग्रतावाद

पारस्परिक संबंधों का लक्ष्य समुदाय की भावना है

मैं केवल अपने आप में ही क्यों रुचि रखता हूँ?

आप दुनिया के केंद्र नहीं हैं

एक बड़े समुदाय की आवाज़ सुनें

डाँटें या प्रशंसा न करें

प्रोत्साहन दृष्टिकोण

कैसे महसूस करें कि आपका मूल्य है

वर्तमान में अस्तित्व में रहो

लोग स्वयं का उचित उपयोग नहीं कर पाते

पांचवीं रात:

यहीं और अभी ईमानदारी से जीना

अत्यधिक आत्म-चेतना स्वयं को दबा देती है

आत्म-पुष्टि नहीं—आत्म-स्वीकृति

विश्वास और आत्मविश्वास के बीच अंतर

कार्य का सार सामान्य भलाई में योगदान है

युवा लोग वयस्कों से आगे बढ़ते हैं

काम के प्रति जुनून एक जीवन-झूठ है

Machine Translated by Google

अब आप खुश रह सकते हैं

"विशेष व्यक्ति" बनने की चाह रखने वालों द्वारा अपनाए गए दो रास्ते

सामान्य होने का साहस

जीवन क्षणों की एक श्रृंखला है

ऐसे जियो जैसे तुम नाच रहे हो

यहाँ और अभी पर प्रकाश डालें

सबसे बड़ा जीवन-झूठ

अर्थहीन प्रतीत होने वाले जीवन को अर्थ दें

अंतभाषण

लेखकों के बारे में

Machine Translated by Google

लेखकों का नोट

सिगमंड फ्रायड, कार्ल जंग और अल्फ्रेड एडलर सभी मनोविज्ञान की दुनिया के दिग्गज हैं।
यह पुस्तक एडलर के दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक विचारों और शिक्षाओं का सार है, जो एक दार्शनिक और एक युवा के बीच कथात्मक संवाद का रूप लेती है।
आदमी।

एडलरियन मनोविज्ञान को यूरोप और अमेरिका में व्यापक समर्थन प्राप्त है, और यह इस दार्शनिक प्रश्न का सरल और सीधा उत्तर प्रस्तुत करता है: कोई कैसे खुश रह सकता है? एडलरियन मनोविज्ञान ही इसकी कुंजी हो सकता है। इस पुस्तक को पढ़ने से आपका जीवन बदल सकता है। अब, आइए इस युवक के साथ चलें और "दरवाजे" से आगे बढ़ें।

Machine Translated by Google

हज़ार साल पुराने शहर के बाहरी इलाके में एक दार्शनिक रहता था जो सिखाता था कि दुनिया सरल है और खुशी हर इंसान की पहुँच में है, और वह भी तुरंत। जीवन से असंतुष्ट एक युवक इस दार्शनिक से मिलने गया ताकि वह इस मुद्दे की तह तक पहुँच सके। इस युवक को दुनिया विरोधाभासों का एक अराजक ढेर लगी और उसकी चिंतित आँखों में खुशी की कोई भी कल्पना पूरी तरह से बेतुकी थी।

Machine Translated by Google

परिचय

युवक: मैं आपसे एक बार फिर पूछना चाहता हूं; क्या आप मानते हैं कि दुनिया हर तरह से एक सरल जगह है?

दार्शनिक: हां, यह दुनिया आश्चर्यजनक रूप से सरल है और जीवन भी।

युवक: तो क्या यह आपका आदर्शवादी तर्क है या कोई व्यावहारिक सिद्धांत? मेरा मतलब यह है कि क्या आप यह कह रहे हैं कि जीवन में आपके या मेरे सामने आने वाली कोई भी समस्या सरल है?

दार्शनिक: हां, बिल्कुल।

युवक: ठीक है, लेकिन मैं आपको बता दूँ कि मैं आज आपसे मिलने क्यों आया हूँ। सबसे पहले, मैं इस विषय पर आपसे तब तक बहस करना चाहता हूँ जब तक मैं संतुष्ट न हो जाऊँ, और फिर, अगर हो सके तो, मैं चाहता हूँ कि आप इस सिद्धांत को वापस ले लें।

दार्शनिक: हा-हा.

युवक: क्योंकि मैंने आपकी प्रतिष्ठा के बारे में सब कुछ सुन लिया है। खबर यह है कि यहाँ एक विलक्षण दार्शनिक रहते हैं जिनकी शिक्षाओं और तर्कों को नज़रअंदाज़ करना मुश्किल है, यानी कि लोग बदल सकते हैं, दुनिया सरल है और हर कोई खुश रह सकता है। मैंने भी ऐसी ही बातें सुनी हैं, लेकिन मुझे यह बात बिल्कुल अस्वीकार्य लगती है, इसलिए मैं खुद इस बात की पुष्टि करना चाहता था। अगर मुझे आपकी कही कोई बात बिल्कुल गलत लगे, तो मैं उसे बताऊँगा और फिर आपको सुधारूँगा... लेकिन क्या आपको यह बात परेशान करेगी?

दार्शनिक: नहीं, मैं इस अवसर का स्वागत करूँगा। मैं आप जैसे किसी युवा से सुनने और आपकी बातों से जितना हो सके सीखने की उम्मीद कर रहा था।

मुझे।

युवक: शुक्रिया। मेरा इरादा आपको तुरंत खारिज करने का नहीं है। मैं आपके विचारों पर विचार करूँगा और फिर आने वाली संभावनाओं पर विचार करूँगा। 'दुनिया है

Machine Translated by Google

'सरल और जीवन भी सरल है'—अगर इस सिद्धांत में कुछ भी सत्य हो सकता है, तो वह है एक बच्चे के दृष्टिकोण से जीवन। बच्चों के कोई स्पष्ट कर्तव्य नहीं होते, जैसे कर देना या काम पर जाना। वे अपने माता-पिता और समाज द्वारा संरक्षित होते हैं, और बिना किसी चिंता के दिन बिता सकते हैं। वे एक ऐसे भविष्य की कल्पना कर सकते हैं जो अनंत काल तक चलता रहे और जो चाहें कर सकें। उन्हें भयावह वास्तविकता देखने की ज़रूरत नहीं है—उनकी आँखों पर पट्टी बंधी है। इसलिए, उनके लिए दुनिया का एक सरल रूप होना चाहिए। हालाँकि, जैसे-जैसे बच्चा वयस्कता की ओर बढ़ता है, दुनिया अपना असली स्वरूप प्रकट करती है। बहुत जल्द, बच्चा जान जाएगा कि चीजें वास्तव में कैसी हैं और उसे वास्तव में क्या करने की अनुमति है। उसकी राय बदल जाएगी और उसे केवल असंभवता ही दिखाई देगी। उसका रोमांटिक दृष्टिकोण समाप्त हो जाएगा और उसकी जगह क्रूर यथार्थवाद ले लेगा।

दार्शनिक: मैं समझ गया। यह एक दिलचस्प दृष्टिकोण है।

युवा: बस इतना ही नहीं। बड़ा होने पर, बच्चा लोगों के साथ तरह-तरह के जटिल रिश्तों में उलझ जाएगा और उस पर तरह-तरह की ज़िम्मेदारियाँ थोपी जाएँगी। ज़िंदगी भी ऐसी ही होगी, काम पर भी और घर पर भी, और सार्वजनिक जीवन में उसकी किसी भी भूमिका में। कहने की ज़रूरत नहीं कि वह समाज के उन कई मुद्दों से वाकिफ़ होगा जिन्हें वह बचपन में नहीं समझ पाया था, जैसे भेदभाव, युद्ध और असमानता, और वह उन्हें नज़रअंदाज़ नहीं कर पाएगा। क्या मैं ग़लत हूँ?

दार्शनिक: मुझे तो ठीक लग रहा है। कृपया जारी रखें।

युवा: अच्छा, अगर हम अभी भी उस समय में जी रहे होते जब धर्म का बोलबाला था, तो मोक्ष एक विकल्प हो सकता था क्योंकि ईश्वर की शिक्षाएँ ही हमारे लिए सब कुछ थीं। हमें बस उनका पालन करना था और परिणामस्वरूप हमें ज़्यादा सोचने की ज़रूरत नहीं थी। लेकिन धर्म ने अपनी शक्ति खो दी है और अब ईश्वर में कोई वास्तविक विश्वास नहीं रहा। किसी सहारे के बिना, हर कोई चिंता और संदेह से भरा हुआ है। हर कोई अपने लिए जी रहा है। आज का समाज ऐसा ही है, तो कृपया मुझे बताएँ—इन वास्तविकताओं को देखते हुए और मैंने जो कहा है उसके आलोक में—क्या आप अब भी कह सकते हैं कि दुनिया सरल है?

दार्शनिक: मेरी बात में कोई बदलाव नहीं है। दुनिया सरल है और ज़िंदगी भी सरल है।

युवक: कैसे? कोई भी देख सकता है कि यह विरोधाभासों का एक अराजक ढेर है।

दार्शनिक: ऐसा इसलिए नहीं है कि दुनिया जटिल है। ऐसा इसलिए है क्योंकि आप दुनिया को जटिल बना रहे हैं।

Machine Translated by Google

युवक: मैं हूं?

दार्शनिक: हममें से कोई भी वस्तुनिष्ठ दुनिया में नहीं रहता, बल्कि एक व्यक्तिपरक दुनिया में रहता है जिसे हमने खुद अर्थ दिया है। आप जो दुनिया देखते हैं वह मेरी दुनिया से अलग है, और अपनी दुनिया को किसी और के साथ साझा करना असंभव है।

युवक: ऐसा कैसे हो सकता है? आप और मैं एक ही देश में, एक ही समय में रह रहे हैं, और हम एक ही चीज़ें देख रहे हैं—है ना?

दार्शनिक: आप मुझे तो काफी युवा लगते हैं, लेकिन क्या आपने कभी कुएं का पानी पिया है?

युवक: कुएँ का पानी? उम्म, बहुत समय पहले की बात है, लेकिन देहात में मेरी दादी के घर पर एक कुआँ था। मुझे याद है कि गर्मी के दिनों में मैं उस कुएँ से ताज़ा, ठंडा पानी पीकर आनंद लेता था।

दार्शनिक: आपको शायद पता हो, लेकिन कुएँ का पानी साल भर लगभग एक ही तापमान पर रहता है, लगभग साठ डिग्री। यह एक वस्तुनिष्ठ संख्या है—इसे मापने वाले हर व्यक्ति के लिए यह एक जैसी ही रहती है। लेकिन जब आप गर्मियों में पानी पीते हैं तो यह ठंडा लगता है और जब आप सर्दियों में वही पानी पीते हैं तो यह गर्म लगता है। हालाँकि थर्मामीटर के अनुसार यह वही पानी है, और साठ डिग्री पर, फिर भी यह कैसा लगता है यह इस बात पर निर्भर करता है कि गर्मी है या सर्दी।

युवक: तो, यह पर्यावरण में परिवर्तन के कारण उत्पन्न एक भ्रम है।

दार्शनिक: नहीं, यह कोई भ्रम नहीं है। देखिए, उस पल आपके लिए कुएँ के पानी की ठंडक या गर्माहट एक निर्विवाद तथ्य है। यही आपकी व्यक्तिपरक दुनिया में जीने का मतलब है। अपनी व्यक्तिपरकता से कोई बच नहीं सकता। अभी दुनिया आपको जटिल और रहस्यमय लगती है, लेकिन अगर आप बदल जाएँ, तो दुनिया ज़्यादा सरल लगने लगेगी। मुद्दा यह नहीं है कि दुनिया कैसी है, बल्कि यह है कि आप कैसे हैं।

युवक: मैं कैसा हूं?

दार्शनिक: ठीक है... यह ऐसा है जैसे आप दुनिया को काले चश्मे से देखते हैं, इसलिए स्वाभाविक रूप से सब कुछ अँधेरा लगता है। लेकिन अगर ऐसा है, तो दुनिया के अँधेरे पर विलाप करने के बजाय, आप बस अपना चश्मा उतार सकते हैं। शायद तब दुनिया आपको बहुत ज़्यादा उजली दिखाई देगी और आप अनजाने में अपनी आँखें बंद कर लेंगे। शायद आप चाहेंगे

Machine Translated by Google

चश्मा वापस तो लगा लो, पर क्या तुम उसे उतार भी सकते हो? क्या तुम दुनिया को सीधे देख सकते हो? क्या तुममें हिम्मत है?

युवक: साहस?

दार्शनिक: हाँ, यह साहस की बात है।

युवक: ठीक है, ठीक है। मैं ढेरों आपत्तियाँ उठाना चाहता हूँ, लेकिन मुझे लगता है कि उन पर बाद में बात करना बेहतर होगा। मैं इस बात की पुष्टि करना चाहता हूँ कि आप कह रहे हैं कि 'लोग बदल सकते हैं', है ना?

दार्शनिक: बेशक लोग बदल सकते हैं। वे खुशी भी पा सकते हैं।

युवा: बिना किसी अपवाद के सभी?

दार्शनिक: इसमें कोई अपवाद नहीं है।

युवक: हा-हा! अब तो तुम बड़ी-बड़ी बातें करने लगे हो! अब तो बात दिलचस्प हो रही है। मैं अभी तुमसे बहस शुरू करूँगा।

दार्शनिक: मैं भागने या कुछ छिपाने वाला नहीं हूँ। आइए इस पर थोड़ा समय लगाकर बहस करें। तो, आपका मानना है कि 'लोग बदल नहीं सकते?'

युवक: हाँ, ये तो सही है, वो बदल नहीं सकते। असल में, मैं खुद न बदल पाने की वजह से परेशान हूँ।

दार्शनिक: और साथ ही, आप चाहते हैं कि आप ऐसा कर सकें।

युवक: बिल्कुल। अगर मैं बदल सकता, अगर मैं ज़िंदगी को नए सिरे से शुरू कर सकता, तो मैं ख़ुशी-ख़ुशी तुम्हारे सामने घुटनों के बल गिर जाता। लेकिन हो सकता है कि तुम भी पहले घुटनों के बल गिर जाओ।
मुझे।

दार्शनिक: आप मुझे अपने विद्यार्थी जीवन की याद दिलाते हैं, जब मैं एक जोशीला युवक था, सत्य की खोज में, इधर-उधर घूमता हुआ, दार्शनिकों से संपर्क करता हुआ...

युवक: हाँ। मैं सत्य की खोज कर रहा हूँ। जीवन के सत्य की।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: मुझे कभी भी शिष्य बनाने की आवश्यकता महसूस नहीं हुई और मैंने कभी ऐसा नहीं किया।
हालाँकि, यूनानी दर्शन का छात्र बनने और फिर एक अन्य दर्शन के संपर्क में आने के बाद से, मैं आप जैसे युवा व्यक्ति से मिलने के लिए लंबे समय से प्रतीक्षा कर रहा था।

युवा: कोई और दर्शन? वह क्या होगा?

दार्शनिक: मेरा अध्ययन कक्ष वहीं है। उसमें जाओ। रात बहुत लंबी होने वाली है। मैं जाकर गरमागरम कॉफ़ी बनाता हूँ।

Machine Translated by Google

Machine Translated by Google

पहली रात:

आघात से इनकार करें

Machine Translated by Google

युवक अध्ययन कक्ष में आया और कुर्सी पर दुबका हुआ बैठ गया। वह दार्शनिक के सिद्धांतों को अस्वीकार करने पर इतना क्यों अड़ा हुआ था? उसके कारण बिल्कुल स्पष्ट थे।

उनमें आत्मविश्वास की कमी थी और बचपन से ही, अपनी व्यक्तिगत और शैक्षणिक पृष्ठभूमि के साथ-साथ अपने शारीरिक रूप-रंग को लेकर उनमें गहरी हीनता की भावनाएँ घर कर गई थीं। शायद इसी वजह से, जब लोग उन्हें देखते थे, तो वे अत्यधिक आत्म-संदेह से भर जाते थे। ज़्यादातर, वे दूसरों की खुशी की सच्ची कद्र करने में असमर्थ लगते थे और हमेशा खुद पर दया करते रहते थे। उनके लिए, दार्शनिक के दावे कल्पना से ज़्यादा कुछ नहीं थे।

Machine Translated by Google

अज्ञात तीसरा विशालकाय

युवक: अभी कुछ देर पहले आपने "एक अन्य दर्शन" शब्द का प्रयोग किया था, लेकिन मैंने सुना है कि आपकी विशेषज्ञता यूनानी दर्शन में है।

दार्शनिक: हाँ, किशोरावस्था से ही यूनानी दर्शन मेरे जीवन का केंद्र रहा है। महान बुद्धिजीवी: सुकरात, प्लेटो, अरस्तू। मैं इस समय प्लेटो की एक रचना का अनुवाद कर रहा हूँ, और मुझे उम्मीद है कि मैं अपना बाकी जीवन शास्त्रीय यूनानी विचारधारा का अध्ययन करते हुए बिताऊँगा।

युवक: तो फिर यह “अन्य दर्शन” क्या है?

दार्शनिक: यह मनोविज्ञान का एक बिल्कुल नया स्कूल है जिसकी स्थापना ऑस्ट्रियाई मनोचिकित्सक अल्फ्रेड एडलर ने बीसवीं सदी की शुरुआत में की थी। इसे आमतौर पर एडलरियन मनोविज्ञान कहा जाता है।

युवक: हुंह। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि यूनानी दर्शनशास्त्र का विशेषज्ञ मनोविज्ञान में रुचि रखेगा।

दार्शनिक: मैं मनोविज्ञान के अन्य विद्यालयों द्वारा अपनाए गए मार्गों से बहुत परिचित नहीं हूं।
हालाँकि, मुझे लगता है कि यह कहना उचित होगा कि एडलरियन मनोविज्ञान स्पष्ट रूप से ग्रीक दर्शन के अनुरूप है, और यह अध्ययन का एक उचित क्षेत्र है।

युवा: मुझे फ्रायड और जंग के मनोविज्ञान का थोड़ा-बहुत ज्ञान है। यह एक दिलचस्प क्षेत्र है।

दार्शनिक: हाँ, फ्रायड और जंग दोनों ही प्रसिद्ध हैं। एडलर वियना मनोविश्लेषण समिति के मूल सदस्यों में से एक थे, जिसका नेतृत्व फ्रायड करते थे। उनके विचार फ्रायड के विचारों के विपरीत थे, इसलिए उन्होंने समूह से अलग होकर अपने मूल सिद्धांतों पर आधारित एक "व्यक्तिगत मनोविज्ञान" का प्रस्ताव रखा।

Machine Translated by Google

युवा: व्यक्तिगत मनोविज्ञान? एक और अजीब शब्द। तो क्या एडलर फ्रायड के शिष्य थे?

दार्शनिक: नहीं, वह नहीं थे। यह ग़लतफ़हमी आम है; हमें इसे दूर करना होगा। एक बात तो यह है कि एडलर और फ्रायड उम्र में अपेक्षाकृत करीब थे, और शोधकर्ताओं के रूप में उनके बीच जो रिश्ता बना, वह समान स्तर पर था। इस लिहाज़ से, एडलर, जंग से बहुत अलग थे, जो फ्रायड को पितातुल्य मानते थे। हालाँकि मनोविज्ञान मुख्यतः फ्रायड और जंग से जुड़ा हुआ है, एडलर को दुनिया भर में, फ्रायड और जंग के साथ, इस क्षेत्र के तीन दिग्गजों में से एक माना जाता है।

युवक: मैं समझ गया। मुझे इसका और अध्ययन करना चाहिए था।

दार्शनिक: मुझे लगता है कि यह स्वाभाविक ही है कि आपने एडलर के बारे में नहीं सुना होगा। जैसा कि उन्होंने खुद कहा था, "एक समय ऐसा भी आ सकता है जब कोई मेरा नाम भी याद न रखे; हो सकता है कि कोई यह भी भूल जाए कि हमारा स्कूल कभी था।" फिर उन्होंने आगे कहा कि इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता। इसका तात्पर्य यह था कि अगर उनके स्कूल को भुला दिया गया, तो ऐसा इसलिए होगा क्योंकि उनके विचार विद्वत्ता के एक क्षेत्र की सीमाओं से आगे बढ़कर आम हो गए हैं, और एक ऐसी भावना बन गए हैं जो सभी को समझ में आती है। उदाहरण के लिए, डेल कार्नेगी, जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय बेस्टसेलर " हाउ टू विन फ्रेंड्स एंड इन्फ्लुएंस पीपल" और "हाउ टू स्टॉप वरीइंग एंड स्टार्ट लिविंग" लिखीं, ने एडलर को "एक महान मनोवैज्ञानिक" कहा, जिन्होंने अपना जीवन मनुष्यों और उनकी छिपी क्षमताओं पर शोध करने के लिए समर्पित कर दिया। एडलर के विचारों का प्रभाव उनके सभी लेखन में साफ़ दिखाई देता है। और स्टीफ़न कोवे की " द 7 हैबिट्स ऑफ़ हाईली इफेक्टिव पीपल" की अधिकांश सामग्री एडलर के विचारों से काफ़ी मिलती-जुलती है। दूसरे शब्दों में, एडलर के मनोविज्ञान को विद्वत्ता का एक कठोर क्षेत्र मानने के बजाय, एक अनुभूति, सत्य और मानवीय समझ की परिणति के रूप में स्वीकार किया जाता है। फिर भी, एडलर के विचारों को अपने समय से सौ साल आगे कहा जाता है, और आज भी हम उन्हें पूरी तरह से समझ नहीं पाए हैं। यही कारण है कि वे वास्तव में कितने क्रांतिकारी थे।

युवा: तो क्या आपके सिद्धांत प्रारम्भ में यूनानी दर्शन से नहीं बल्कि एडलरियन मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से विकसित हुए हैं?

दार्शनिक: हाँ, यह सही है।

युवक: ठीक है। मैं आपके मूल दृष्टिकोण के बारे में एक और बात पूछना चाहता हूँ। क्या आप दार्शनिक हैं? या मनोवैज्ञानिक?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: मैं एक दार्शनिक हूँ, एक ऐसा व्यक्ति जो दर्शनशास्त्र को जीता है। और मेरे लिए, एडलरियन मनोविज्ञान एक प्रकार की विचारधारा है जो यूनानी दर्शनशास्त्र के अनुरूप है, और यही दर्शनशास्त्र है ।

युवक: ठीक है, तो चलिए शुरू करते हैं।

Machine Translated by Google

लोग क्यों बदल सकते हैं

युवा: सबसे पहले, आइए चर्चा के बिंदुओं की योजना बनाएँ। आप कहते हैं कि लोग बदल सकते हैं। फिर आप एक कदम आगे बढ़ते हुए कहते हैं कि हर कोई खुशी पा सकता है।

दार्शनिक: हाँ, हर कोई, बिना किसी अपवाद के।

युवा: आइए, खुशी के बारे में चर्चा को बाद के लिए छोड़ दें और पहले बदलाव पर बात करें।
हर कोई चाहता है कि वो बदल सके। मुझे पता है मैं भी चाहता हूँ, और मुझे यकीन है कि आप सड़क पर किसी से भी पूछेंगे तो वो इस बात से सहमत होगा। लेकिन हर कोई क्यों चाहता है कि वो बदलना चाहता है?
इसका एक ही जवाब है: क्योंकि वे बदल नहीं सकते। अगर लोगों के लिए बदलना आसान होता, तो वे यह सोचने में इतना समय क्यों न लगाते कि वे बदल सकते हैं। चाहे वे कितनी भी इच्छा करें, लोग बदल नहीं सकते। और इसीलिए हमेशा बहुत से लोग नए धर्मों, संदिग्ध स्व-सहायता सेमिनारों और हर किसी के बदलने के उपदेशों के बहकावे में आ जाते हैं। क्या मैं गलत हूँ?

दार्शनिक: खैर, जवाब में मैं पूछूंगा कि आप इस बात पर इतने अड़े क्यों हैं कि लोग बदल नहीं सकते?

युवक: वजह तो यही है। मेरा एक दोस्त है, जिसने कई सालों से खुद को अपने कमरे में बंद कर रखा है। वह चाहता है कि वह बाहर जा सके और सोचता है कि अगर हो सके तो वह कोई नौकरी भी करना चाहेगा।
इसलिए वह अपना स्वभाव बदलना चाहता है। मैं यह बात उसके दोस्त होने के नाते कह रहा हूँ, लेकिन मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि वह एक बहुत ही गंभीर इंसान है जो समाज के लिए बहुत उपयोगी हो सकता है। बस उसे अपने कमरे से बाहर निकलने में डर लगता है। अगर वह बाहर एक कदम भी रखता है, तो उसकी धड़कनें तेज़ हो जाती हैं और उसके हाथ-पैर काँपने लगते हैं। मुझे लगता है कि यह एक तरह का न्यूरोसिस या घबराहट है। वह बदलना चाहता है, लेकिन बदल नहीं पाता।

दार्शनिक: आपको क्या लगता है कि वह बाहर क्यों नहीं जा सकता?

युवक: मुझे पूरा यकीन नहीं है। हो सकता है कि ऐसा उसके माता-पिता के साथ उसके रिश्ते की वजह से हुआ हो, या स्कूल या काम पर उसे तंग किया गया हो। हो सकता है उसने किसी तरह का अनुभव किया हो।

Machine Translated by Google

ऐसी किसी बात से सदमा लग सकता है। लेकिन हो सकता है कि इसका उल्टा भी हो—हो सकता है कि बचपन में उसे बहुत लाड़-प्यार मिला हो और वह हकीकत का सामना न कर पा रहा हो। मुझे नहीं पता, और मैं उसके अतीत या उसकी पारिवारिक स्थिति के बारे में भी नहीं जान सकती।

दार्शनिक: तो आप यह कह रहे हैं कि आपके मित्र के अतीत में ऐसी घटनाएं घटीं जो उसके लिए आघात या ऐसी ही किसी घटना का कारण बनीं, और परिणामस्वरूप वह अब बाहर नहीं जा सकता?

युवक: बिल्कुल। प्रभाव से पहले एक कारण होता है। इसमें कुछ भी रहस्यमय नहीं है।

दार्शनिक: तो शायद उसके अब बाहर न जा पाने की वजह उसके बचपन के घर के माहौल में है। उसके माता-पिता ने उसके साथ दुर्व्यवहार किया और वह बिना प्यार महसूस किए ही बड़ा हो गया। इसीलिए वह लोगों से मिलने-जुलने से डरता है और बाहर नहीं जा पाता। यह संभव है, है ना?

युवा: हाँ, यह पूरी तरह संभव है। मुझे लगता है कि यह वाकई चुनौतीपूर्ण होगा।

दार्शनिक: और फिर आप कहते हैं, "किसी प्रभाव से पहले, एक कारण होता है।" या, दूसरे शब्दों में, मैं अब जो हूँ (प्रभाव) वह अतीत की घटनाओं (कारणों) से निर्धारित होता है। क्या मैं सही समझ रहा हूँ?

युवक: हाँ, आप जानते हैं।

दार्शनिक: तो अगर दुनिया में हर किसी का वर्तमान और वर्तमान उसकी पिछली घटनाओं के कारण है, तो आपके अनुसार, क्या चीज़ें बहुत अजीब नहीं होंगी? समझ नहीं आ रहा?
हर वह व्यक्ति जो अपने माता-पिता द्वारा दुर्व्यवहार सहते हुए बड़ा हुआ है, उसे आपके दोस्त की तरह ही परिणाम भुगतने होंगे और एकांतवासी बनना होगा, वरना यह पूरी बात ही बेमानी है। यानी, अगर अतीत वास्तव में वर्तमान को निर्धारित करता है, और कारण प्रभावों को नियंत्रित करते हैं।

युवक: आप वास्तव में क्या कहना चाह रहे हैं?

दार्शनिक: अगर हम सिर्फ़ अतीत के कारणों पर ध्यान केंद्रित करें और चीज़ों को सिर्फ़ कारण और प्रभाव के आधार पर समझाने की कोशिश करें, तो हम "नियतिवाद" पर पहुँच जाएँगे। क्योंकि इसका मतलब है कि हमारा वर्तमान और भविष्य पहले से ही अतीत की घटनाओं से तय हो चुका है, और अपरिवर्तनीय है। क्या मैं ग़लत हूँ?

Machine Translated by Google

युवक: तो आप कह रहे हैं कि अतीत कोई मायने नहीं रखता?

दार्शनिक: हां, एडलरियन मनोविज्ञान का दृष्टिकोण यही है।

युवक: मैं समझ गया। अब टकराव के मुद्दे थोड़े साफ़ लग रहे हैं। लेकिन देखिए, अगर हम आपकी बात मानें, तो क्या इसका मतलब यह नहीं होगा कि अब मेरे दोस्त के बाहर न जाने की कोई वजह नहीं है? क्योंकि आप कह रहे हैं कि पिछली घटनाएँ मायने नहीं रखतीं। माफ़ कीजिए, लेकिन यह बात तो बिलकुल ही बेमानी है। उसके एकांतवास के पीछे कोई न कोई वजह ज़रूर होगी।

ऐसा होना ही चाहिए, अन्यथा कोई स्पष्टीकरण नहीं होगा!

दार्शनिक: सचमुच, इसका कोई स्पष्टीकरण नहीं होगा। इसलिए एडलरियन मनोविज्ञान में, हम अतीत के "कारणों" के बारे में नहीं, बल्कि वर्तमान "लक्ष्यों" के बारे में सोचते हैं।

युवा: वर्तमान लक्ष्य?

दार्शनिक: तुम्हारा दोस्त असुरक्षित है, इसलिए वो बाहर नहीं जा सकता। ज़रा सोचो, वो बाहर नहीं जाना चाहता, इसलिए वो चिंता की स्थिति पैदा कर रहा है।

युवक: हुह?

दार्शनिक: इसे इस तरह से सोचें। आपके दोस्त का लक्ष्य पहले से ही बाहर न जाना था, और वह उस लक्ष्य को पाने के लिए चिंता और भय की स्थिति पैदा कर रहा है। एडलरियन मनोविज्ञान में, इसे "टेलियोलॉजी" कहा जाता है।

युवक: तुम मज़ाक कर रहे हो! मेरे दोस्त ने अपनी चिंता और डर की कल्पना की है? तो क्या तुम यह कहोगे कि मेरा दोस्त बस बीमार होने का नाटक कर रहा है?

दार्शनिक: वह बीमार होने का नाटक नहीं कर रहा है। आपके दोस्त को जो चिंता और डर हो रहा है, वह असली है। कभी-कभी उसे माइग्रेन और पेट में तेज़ मरोड़ भी हो सकती है। हालाँकि, ये भी ऐसे लक्षण हैं जो उसने बाहर न जाने के अपने लक्ष्य को हासिल करने के लिए पैदा किए हैं।

युवक: यह सच नहीं है! बिलकुल नहीं! यह बहुत निराशाजनक है!

दार्शनिक: नहीं। यह एटिओलॉजी (कारण का अध्ययन) और टेलीओलॉजी (किसी घटना के कारण के बजाय उसके उद्देश्य का अध्ययन) के बीच का अंतर है।

Machine Translated by Google

आप जो कुछ भी मुझे बता रहे हैं, वह सब एटियलजि पर आधारित है। जब तक हम एटियलजि में ही रहेंगे, हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाएँगे।

Machine Translated by Google

आघात का अस्तित्व नहीं है

युवक: अगर आप इतनी ज़ोर देकर बातें कह रहे हैं, तो मैं विस्तार से समझाना चाहूँगा। सबसे पहले, आप एटिओलॉजी और टेलिओलॉजी में क्या अंतर बता रहे हैं?

दार्शनिक: मान लीजिए आपको तेज़ बुखार के साथ ज़ुकाम हो गया है, और आप डॉक्टर के पास जाते हैं। फिर, मान लीजिए डॉक्टर कहता है कि आपकी बीमारी का कारण यह है कि कल जब आप बाहर गए थे, तो आपने ठीक से कपड़े नहीं पहने थे, और इसी वजह से आपको ज़ुकाम हो गया।
अब, क्या आप इससे संतुष्ट होंगे?

युवक: बिल्कुल नहीं। मुझे इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि वजह क्या थी—मैंने कैसे कपड़े पहने थे या बारिश हो रही थी या कुछ और। मेरे लिए तो सिर्फ़ लक्षण मायने रखते हैं, यह बात कि मुझे अभी तेज़ बुखार है। अगर वह डॉक्टर है, तो मैं चाहूँगा कि वह दवा लिखकर, इंजेक्शन लगाकर, या जो भी ज़रूरी हो, विशेष उपाय करके मेरा इलाज करे।

दार्शनिक: फिर भी, जो लोग एटिऑलॉजिकल रुख अपनाते हैं, जिनमें ज़्यादातर परामर्शदाता और मनोचिकित्सक शामिल हैं, वे तर्क देंगे कि आप जिस बीमारी से पीड़ित थे, वह अतीत में किसी अमुक कारण से उपजी थी, और फिर आपको बस यह कहकर सांत्वना दे देंगे, "तो देखिए, यह आपकी गलती नहीं है।" तथाकथित आघातों से संबंधित तर्क एटिऑलॉजी की विशिष्टता है।

युवक: ज़रा रुको! क्या तुम आघात के अस्तित्व को ही नकार रहे हो?

दार्शनिक: हाँ, मैं हूँ। दृढ़तापूर्वक।

युवक: क्या! आप, या शायद मुझे एडलर कहना चाहिए, मनोविज्ञान के विशेषज्ञ नहीं हैं?

दार्शनिक: एडलरियन मनोविज्ञान में, आघात को पूरी तरह से नकार दिया गया है। यह एक बहुत ही नया और क्रांतिकारी बिंदु था। निश्चित रूप से, आघात के बारे में फ्रायडियन दृष्टिकोण आकर्षक है।
फ्रायड का विचार है कि किसी व्यक्ति के मानसिक घाव (आघात) उसके वर्तमान को प्रभावित करते हैं।

Machine Translated by Google

दुःख। जब आप किसी व्यक्ति के जीवन को एक विशाल आख्यान के रूप में देखते हैं, तो एक सहज रूप से समझ में आने वाला कार्य-कारण और नाटकीय विकास का भाव होता है जो गहरी छाप छोड़ता है और बेहद आकर्षक होता है। लेकिन एडलर, आघात के तर्क का खंडन करते हुए, निम्नलिखित कहते हैं: "कोई भी अनुभव अपने आप में हमारी सफलता या असफलता का कारण नहीं होता। हम अपने अनुभवों के आघात—तथाकथित आघात—से पीड़ित नहीं होते, बल्कि हम उनसे अपने उद्देश्यों के अनुकूल कुछ भी बनाते हैं। हम अपने अनुभवों से निर्धारित नहीं होते, बल्कि हम उन्हें जो अर्थ देते हैं वह स्वयं निर्धारित होता है।"

युवक: तो हम उनसे वही बनाते हैं जो हमारे उद्देश्यों के अनुकूल हो?

दार्शनिक: बिल्कुल। एडलर यहाँ जिस बात पर ज़ोर दे रहे हैं, उस पर ध्यान दीजिए जब वे कहते हैं कि हमारा आत्म-निर्धारण हमारे अनुभवों से नहीं, बल्कि उन अर्थों से होता है जो हम उन्हें देते हैं। वे यह नहीं कह रहे हैं कि बचपन में किसी भयानक विपत्ति या दुर्व्यवहार या ऐसी ही अन्य घटनाओं का व्यक्तित्व निर्माण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता; उनके प्रभाव प्रबल होते हैं। लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि वास्तव में उन प्रभावों से कुछ भी निर्धारित नहीं होता। हम अपने जीवन का निर्धारण उन पिछले अनुभवों को दिए गए अर्थ के अनुसार करते हैं। आपका जीवन कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो कोई आपको देता है, बल्कि वह है जिसे आप स्वयं चुनते हैं, और आप ही तय करते हैं कि आप कैसे जीते हैं।

युवक: अच्छा, तो आप कह रहे हैं कि मेरे दोस्त ने खुद को कमरे में बंद कर लिया है क्योंकि उसने सचमुच इस तरह जीना चुना है? यह गंभीर बात है। यकीन मानिए, वह ऐसा नहीं चाहता।
अगर कुछ है भी, तो वो ये कि हालात की वजह से उसे मजबूरन ये फैसला लेना पड़ा। उसके पास वो बनने के अलावा कोई चारा नहीं था जो वो आज है।

दार्शनिक: नहीं। मान लीजिए कि आपका मित्र वास्तव में सोचता है कि मैं समाज में फिट नहीं हो सकता, क्योंकि मेरे माता-पिता ने मेरे साथ दुर्व्यवहार किया था, तो भी ऐसा इसलिए है क्योंकि ऐसा सोचना उसका लक्ष्य है।

युवक: यह कैसा लक्ष्य है?

दार्शनिक: तात्कालिक लक्ष्य शायद "बाहर न जाने" का होगा। वह घर के अंदर रहने के लिए चिंता और भय पैदा कर रहा है।

युवक: लेकिन वह बाहर क्यों नहीं जाना चाहता? यहीं तो समस्या है।

दार्शनिक: ज़रा माता-पिता के नज़रिए से सोचिए। अगर आपके बच्चे को एक कमरे में बंद कर दिया जाए, तो आपको कैसा लगेगा?

Machine Translated by Google

युवक: बेशक, मैं चिंतित होऊँगा। मैं उसे समाज में वापस लाने में मदद करना चाहूँगा, मैं चाहूँगा कि वह ठीक हो जाए, और मुझे आश्चर्य होगा कि क्या मैंने उसका पालन-पोषण ठीक से नहीं किया। मुझे यकीन है कि मैं गंभीर रूप से चिंतित होऊँगा और उसे सामान्य जीवन में वापस लाने के लिए हर संभव कोशिश करूँगा।

दार्शनिक: यहीं तो समस्या है।

युवक: कहां?

दार्शनिक: अगर मैं हर समय अपने कमरे में ही रहूँ, बाहर न जाऊँ, तो मेरे माता-पिता चिंतित हो जाएँगे। मेरे माता-पिता का सारा ध्यान मुझ पर केंद्रित हो जाएगा। वे मेरे आस-पास बेहद सावधान रहेंगे और हमेशा मेरे साथ बहुत ही नरमी से पेश आएँगे। वहीं दूसरी ओर, अगर मैं घर से एक कदम भी बाहर निकलूँ, तो मैं एक गुमनाम भीड़ का हिस्सा बन जाऊँगा जिस पर कोई ध्यान नहीं देता। मैं ऐसे लोगों से घिरा रहूँगा जिन्हें मैं जानता तक नहीं और मैं बस औसत, या औसत से भी कमतर रह जाऊँगा। और कोई भी मेरा खास ख्याल नहीं रखेगा।

. एकांतप्रिय

लोगों के बारे में ऐसी कहानियाँ असामान्य नहीं हैं।

युवक: उस स्थिति में, आपके तर्क के अनुसार, क्या मेरे मित्र ने अपना लक्ष्य पूरा कर लिया है और वह अपनी वर्तमान स्थिति से संतुष्ट है?

दार्शनिक: मुझे शक है कि वह संतुष्ट है, और मुझे यकीन है कि वह खुश भी नहीं है। लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि वह अपने लक्ष्य के अनुरूप कदम भी उठा रहा है। यह कोई अनोखी बात नहीं है जो सिर्फ़ तुम्हारे दोस्त के लिए हो। हम में से हर कोई किसी न किसी लक्ष्य के अनुरूप जी रहा है। यही तो उद्देश्य विज्ञान हमें बताता है।

युवक: बिल्कुल नहीं। मैं इसे पूरी तरह से अस्वीकार्य मानता हूँ। देखो, मेरा दोस्त—

दार्शनिक: सुनो, अगर हम तुम्हारे दोस्त के बारे में ही बात करते रहेंगे तो यह चर्चा आगे नहीं बढ़ेगी। यह अनुपस्थिति में मुक़दमे में बदल जाएगी, और यह निराशाजनक होगा। चलो एक और उदाहरण लेते हैं।

युवक: अच्छा, ये कैसा है? ये मेरी अपनी कहानी है जो मैंने कल अनुभव की थी।

दार्शनिक: ओह? मैं कान लगाकर सुन रहा हूँ।

Machine Translated by Google

लोग क्रोध का निर्माण करते हैं

युवक: कल दोपहर, मैं एक कॉफ़ी शॉप में किताब पढ़ रहा था, तभी एक वेटर वहाँ से गुज़रा और मेरी जैकेट पर कॉफ़ी गिर गई। मैंने इसे अभी-अभी खरीदा था और यह मेरा सबसे अच्छा कपड़ा है। मैं खुद को रोक नहीं पाया, मैं गुस्से से आग बबूला हो गया। मैंने उस पर ज़ोर से चिल्लाया। मैं आमतौर पर सार्वजनिक जगहों पर ऊँची आवाज़ में बात करने वाला इंसान नहीं हूँ। लेकिन कल, मेरे चिल्लाने की आवाज़ से दुकान गूंज रही थी क्योंकि मैं गुस्से में आ गया था और भूल गया था कि मैं क्या कर रहा हूँ। तो फिर क्या हुआ? क्या इसमें किसी लक्ष्य की कोई गुंजाइश है? आप इसे किसी भी नज़रिए से देखें, क्या यह व्यवहार किसी कारण से उत्पन्न नहीं होता?

दार्शनिक: तो आप क्रोध की भावना से उत्तेजित हो गए और चिल्लाने लगे।
हालाँकि आप आम तौर पर सौम्य स्वभाव के हैं, फिर भी आप गुस्सा होने से खुद को नहीं रोक पाए। यह एक अपरिहार्य घटना थी, और आप इसके बारे में कुछ नहीं कर सके। क्या आप यही कह रहे हैं?

युवक: हाँ, क्योंकि ये सब अचानक हुआ। सोचने का समय मिलने से पहले ही ये शब्द मेरे मुँह से निकल गए।

दार्शनिक: तो मान लीजिए कल आपके पास एक चाकू था, और जब आप गुस्से में थे, तो आपने उसे चाकू मार दिया। क्या आप तब भी यह कहकर उसे सही ठहरा पाएँगे, "यह एक अपरिहार्य घटना थी, और मैं इसके बारे में कुछ नहीं कर सकता था?"

युवक: वह... चलो, यह तो अतिवादी तर्क है!

दार्शनिक: यह कोई अतिवादी तर्क नहीं है। अगर हम आपके तर्क पर आगे बढ़ें, तो क्रोध में किए गए किसी भी अपराध के लिए क्रोध को ज़िम्मेदार ठहराया जा सकता है और वह व्यक्ति अब ज़िम्मेदार नहीं रहेगा क्योंकि, मूलतः, आप कह रहे हैं कि लोग अपनी भावनाओं पर नियंत्रण नहीं रख सकते।

युवक: तो फिर आप मेरे गुस्से को कैसे समझाएंगे?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: यह आसान है। आप अचानक गुस्से में आकर चिल्लाने नहीं लगे। बात सिर्फ़ इतनी है कि आपको गुस्सा आया ताकि आप चिल्ला सकें। दूसरे शब्दों में, चिल्लाने के उद्देश्य को पूरा करने के लिए आपने क्रोध की भावना पैदा की।

युवक: आपका क्या मतलब है?

दार्शनिक: चिल्लाने का मकसद किसी भी चीज़ से पहले था। यानी, चिल्लाकर आप वेटर को अपने अधीन करना चाहते थे और अपनी बात सुनना चाहते थे। ऐसा करने के लिए, आपने गुस्से की भावना को गढ़ा।

युवक: मैंने ये सब बनाया है? तुम मज़ाक कर रहे हो!

दार्शनिक: तो फिर आपने अपनी आवाज़ क्यों उठाई?

युवक: जैसा कि मैंने पहले कहा, मैं बहुत गुस्से में था। मैं बहुत निराश था।

दार्शनिक: नहीं। आप बिना आवाज़ उठाए भी बात समझा सकते थे, और वेटर शायद आपसे सच्चे दिल से माफ़ी मांग लेता, आपकी जैकेट साफ़ कपड़े से पोंछ देता, और दूसरे ज़रूरी कदम उठाता। हो सकता है कि उसने उसे ड्राई-क्लीन भी करवा लिया होता। और कहीं न कहीं आपके मन में यह आशंका भी थी कि वह ऐसा कुछ कर सकता है, फिर भी आप चिल्ला पड़े। सामान्य शब्दों में बात समझाने की प्रक्रिया बहुत ज़्यादा परेशानी भरी लग रही थी, और आपने उससे बाहर निकलने और इस अड़ियल व्यक्ति को अपने अधीन करने की कोशिश की। ऐसा करने के लिए आपने गुस्से का सहारा लिया।

युवक: बिल्कुल नहीं। तुम मुझे बेवकूफ़ नहीं बना सकते। मैंने उसे अपने अधीन करने के लिए गुस्सा पैदा किया? कसम से, ऐसा सोचने के लिए एक पल भी नहीं मिला। मैंने पहले सोचा नहीं था और फिर गुस्सा हो गया। गुस्सा एक ज़्यादा आवेगपूर्ण भावना है।

दार्शनिक: बिलकुल सही, क्रोध एक तात्कालिक भावना है। अब सुनो, मेरे पास एक कहानी है। एक दिन, एक माँ और बेटी ज़ोर-ज़ोर से झगड़ रही थीं। तभी अचानक टेलीफोन की घंटी बजी। "हैलो?" माँ ने जल्दी से रिसीवर उठाया, उसकी आवाज़ अभी भी गुस्से से भरी हुई थी। फ़ोन करने वाली उसकी बेटी की कक्षा की शिक्षिका थी। जैसे ही माँ को पता चला कि फ़ोन कौन कर रहा है, उसकी आवाज़ का लहजा बदल गया और वह बहुत विनम्र हो गई। फिर, अगले पाँच मिनट तक, वह अपनी सबसे अच्छी टेलीफोन आवाज़ में बातचीत करती रही। जैसे ही उसने फ़ोन रखा, एक पल में, उसके हाव-भाव फिर से बदल गए और वह अपनी बेटी पर फिर से चिल्लाने लगी।

Machine Translated by Google

युवक: खैर, यह कोई विशेष असामान्य कहानी नहीं है।

दार्शनिक: समझ नहीं आ रहा? संक्षेप में, गुस्सा एक ऐसा हथियार है जिसे ज़रूरत पड़ने पर बाहर निकाला जा सकता है। फ़ोन बजते ही इसे दूर रखा जा सकता है और फ़ोन कटते ही फिर से बाहर निकाला जा सकता है। माँ गुस्से में चिल्ला नहीं रही है, जिसे वह नियंत्रित नहीं कर सकती। वह बस गुस्से का इस्तेमाल अपनी बेटी पर ऊँची आवाज़ में हावी होने और अपनी राय मनवाने के लिए कर रही है।

युवक: तो क्या क्रोध लक्ष्य प्राप्ति का साधन है?

दार्शनिक: यही तो टेलिओलोजी कहती है।

युवक: आह, अब समझ आया। इस सौम्य मुखौटे के पीछे, तुम घोर शून्यवादी हो! चाहे हम गुस्से की बात करें या मेरे एकांतप्रिय दोस्त की, तुम्हारी सारी अंतर्दृष्टि इंसानों के प्रति अविश्वास की भावनाओं से भरी है!

Machine Translated by Google

अतीत के नियंत्रण से मुक्त होकर कैसे जियें

दार्शनिक: मैं शून्यवादी कैसे हो सकता हूँ?

युवक: ज़रा सोचो। सीधे शब्दों में कहें तो, आप मानवीय भावनाओं को नकारते हैं। आप कहते हैं कि भावनाएँ सिर्फ़ औज़ारों से ज़्यादा कुछ नहीं हैं, कि वे सिर्फ़ लक्ष्य प्राप्ति के साधन हैं। लेकिन सुनो।
यदि आप भावनाओं को नकारते हैं, तो आप एक ऐसे दृष्टिकोण को बढ़ावा दे रहे हैं जो हमारी मानवता को भी नकारने का प्रयास करता है।
क्योंकि ये हमारी भावनाएँ हैं, और यह तथ्य कि हम हर तरह की भावनाओं से प्रभावित होते हैं, हमें इंसान बनाती हैं। अगर भावनाओं को नकार दिया जाए, तो इंसान मशीनों के लिए एक बेकार बहाना बनकर रह जाएगा। अगर यह शून्यवाद नहीं है, तो और क्या है?

दार्शनिक: मैं इस बात से इनकार नहीं कर रहा कि भावनाएँ होती हैं। हर किसी में भावनाएँ होती हैं। यह तो ज़ाहिर है। लेकिन अगर आप मुझसे कहेंगे कि लोग ऐसे प्राणी हैं जो भावनाओं का विरोध नहीं कर सकते, तो मैं इसके ख़िलाफ़ तर्क दूँगा। एडलरियन मनोविज्ञान एक प्रकार की विचारधारा है, एक ऐसा दर्शन जो शून्यवाद के बिल्कुल विपरीत है। हम भावनाओं से नियंत्रित नहीं होते। इस अर्थ में, जहाँ यह दर्शाता है कि लोग भावनाओं से नियंत्रित नहीं होते, वहीं यह यह भी दर्शाता है कि हम अतीत से नियंत्रित नहीं होते।

युवा: तो क्या लोग भावनाओं या अतीत से नियंत्रित नहीं होते?

दार्शनिक: ठीक है, मान लीजिए किसी के माता-पिता का उसके अतीत में तलाक हो गया था। क्या यह कोई वस्तुनिष्ठ बात नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे कुएँ का पानी हमेशा साठ डिग्री पर रहता है? लेकिन फिर, क्या वह तलाक ठंडा लगता है या गर्म? तो यह एक "अभी" की बात है, एक व्यक्तिपरक बात। अतीत में चाहे जो भी हुआ हो, उससे जुड़ा अर्थ ही तय करता है कि किसी का वर्तमान कैसा होगा।

युवा: सवाल यह नहीं है कि “क्या हुआ?” बल्कि यह है कि “इसका समाधान कैसे हुआ?”

दार्शनिक: बिल्कुल। हम टाइम मशीन में बैठकर अतीत में नहीं जा सकते। हम समय की सुइयों को पीछे नहीं मोड़ सकते। अगर आप एटिओलॉजी में ही रहेंगे, तो आप अतीत से बंधे रहेंगे।

Machine Translated by Google

और कभी भी खुशी नहीं पा सकेंगे.

युवक: बिलकुल सही! हम अतीत को नहीं बदल सकते, और यही वजह है कि ज़िंदगी इतनी मुश्किल है।

दार्शनिक: ज़िंदगी सिर्फ़ मुश्किल नहीं है। अगर अतीत ही सब कुछ तय करता और उसे बदला नहीं जा सकता, तो हम जो आज जी रहे हैं, अपने जीवन में आगे बढ़ने के लिए कोई कारगर कदम नहीं उठा पाएँगे। नतीजा क्या होगा? हम उस तरह के शून्यवाद और निराशावाद में फँस जाएँगे जो दुनिया से उम्मीद खो देता है और ज़िंदगी से हार मान लेता है। फ्रायडियन एटियलजि, जो आघात के तर्क का प्रतीक है, एक अलग रूप में नियतिवाद है, और यही शून्यवाद की राह है। क्या आप ऐसे मूल्यों को स्वीकार करेंगे?

युवक: मैं उन्हें स्वीकार नहीं करना चाहता, लेकिन अतीत बहुत शक्तिशाली है।

दार्शनिक: संभावनाओं के बारे में सोचो। अगर कोई यह मान ले कि लोग ऐसे प्राणी हैं जो बदल सकते हैं, तो एटियलजि पर आधारित मूल्यों का समूह अस्थिर हो जाता है, और व्यक्ति स्वाभाविक रूप से उद्देश्य-विज्ञान की स्थिति अपनाने के लिए बाध्य हो जाता है।

युवा: तो आप यह कह रहे हैं कि हमें हमेशा यह मानकर चलना चाहिए कि “लोग बदल सकते हैं”?

दार्शनिक: बिल्कुल। और कृपया समझिए, यह फ्रायडियन एटियलजि ही है जो हमारी स्वतंत्र इच्छा को नकारती है और मनुष्यों के साथ मशीनों जैसा व्यवहार करती है।

युवक रुका और दार्शनिक के अध्ययन कक्ष में चारों ओर नज़र दौड़ाई। दीवारों पर फ़र्श से छत तक किताबों की अलमारियाँ भरी हुई थीं, और एक छोटी सी लकड़ी की मेज़ पर एक फ़ाउंटेन पेन और एक अधूरी लिखी पांडुलिपि रखी थी। "लोग अतीत के कारणों से प्रेरित नहीं होते, बल्कि उन लक्ष्यों की ओर बढ़ते हैं जिन्हें वे स्वयं निर्धारित करते हैं"—यह दार्शनिक का दावा था। जिस उद्देश्यवाद (teoology) का उसने समर्थन किया, वह एक ऐसा विचार था जो सम्मानजनक मनोविज्ञान की कार्य-कारणता को मूल रूप से उलट देता था, और युवक को यह स्वीकार करना असंभव लगा। तो अब वह किस दृष्टिकोण से इस पर तर्क करना शुरू करे? युवक ने गहरी साँस ली।

Machine Translated by Google

सुकरात और एडलर

युवक: ठीक है। मैं तुम्हें अपने एक और दोस्त के बारे में बताता हूँ, जिसका नाम वाई है। वह हमेशा से ही एक उज्ज्वल व्यक्तित्व वाला व्यक्ति रहा है और किसी से भी आसानी से बात कर लेता है।
वह सूरजमुखी की तरह है - हर कोई उससे प्यार करता है, और जब भी वह आसपास होता है तो लोग मुस्कुराते हैं।
इसके विपरीत, मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जिसे सामाजिक रूप से कभी भी सहजता नहीं मिली और जो कई मायनों में विकृत है। अब, आप दावा कर रहे हैं कि एडलर के उद्देश्यवाद के ज़रिए लोग बदल सकते हैं?

दार्शनिक: हाँ। आप, मैं और हर कोई बदल सकता है।

युवक: तो क्या तुम्हें लगता है कि मैं वाई जैसा बन सकता हूँ? मैं दिल से चाहता हूँ कि मैं भी उसके जैसा बन सकूँ।

दार्शनिक: इस समय तो मुझे कहना होगा कि यह प्रश्न ही नहीं उठता।

युवक: अहा! अब तो तुम अपना असली रंग दिखा रहे हो! तो क्या तुम अपनी बात से मुकर जाओगे?

दार्शनिक: नहीं, मैं नहीं हूँ। दुर्भाग्य से, आपको अभी तक एडलरियन मनोविज्ञान की लगभग कोई समझ नहीं है। बदलाव का पहला कदम है जानना।

युवक: तो अगर मैं एडलरियन मनोविज्ञान के बारे में कुछ समझ सकता हूं, तो क्या मैं वाई जैसा व्यक्ति बन सकता हूं?

दार्शनिक: आप उत्तर पाने की जल्दी में क्यों हैं? आपको स्वयं उत्तर प्राप्त करने चाहिए, किसी और से मिले उत्तर पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। दूसरों के उत्तर अस्थायी उपाय मात्र हैं; उनका कोई मूल्य नहीं है। सुकरात को ही लीजिए, जिन्होंने अपनी लिखी एक भी किताब नहीं छोड़ी। उन्होंने अपना पूरा जीवन एथेंस के नागरिकों, खासकर युवाओं के साथ सार्वजनिक वाद-विवाद में बिताया, और उनके शिष्य प्लेटो ने ही उनके दर्शन को भावी पीढ़ियों के लिए लिखित रूप में प्रस्तुत किया। एडलर ने भी इसमें बहुत कम रुचि दिखाई।

Machine Translated by Google

साहित्यिक गतिविधियों में रुचि रखते थे, वियना के कैफ़े में व्यक्तिगत बातचीत करना और छोटे-छोटे विचार-विमर्श समूह आयोजित करना पसंद करते थे। वे निश्चित रूप से आरामकुर्सी पर बैठे रहने वाले बुद्धिजीवी नहीं थे।

युवक: तो क्या सुकरात और एडलर दोनों ने अपने विचार संवाद के माध्यम से व्यक्त किये?

दार्शनिक: बिलकुल सही। इस संवाद से तुम्हारे सारे संदेह दूर हो जाएँगे। और तुम बदलने लगोगे। मेरे शब्दों से नहीं, बल्कि अपने कर्मों से। मैं संवाद के ज़रिए जवाब पाने की उस अनमोल प्रक्रिया को छीनना नहीं चाहता।

युवा: तो क्या हम इस छोटे से अध्ययन में सुकरात और एडलर के बीच हुए संवाद को दोहराने की कोशिश करेंगे?

दार्शनिक: क्या यह आपके लिए पर्याप्त नहीं है?

युवक: यही तो मैं जानना चाहता हूँ! तो चलिए, बात को जितना हो सके आगे बढ़ाते हैं, जब तक कि या तो आप अपनी बात वापस न ले लें या मैं आपके सामने झुक जाऊँ।

Machine Translated by Google

क्या आप जैसे हैं वैसे ही ठीक हैं?

दार्शनिक: ठीक है, चलिए आपके प्रश्न पर वापस आते हैं। तो क्या आप Y की तरह ज़्यादा खुशमिजाज़ इंसान बनना चाहेंगे?

युवक: लेकिन आपने तो बस उसे नकार दिया और कहा कि ऐसा हो ही नहीं सकता। खैर, मुझे लगता है कि ऐसा ही है। मैं तो बस आपको परेशान करने के लिए ऐसा कह रहा था—मैं खुद को अच्छी तरह जानता हूँ। मैं कभी ऐसा नहीं हो सकता।

दार्शनिक: क्यों नहीं?

युवा: यह तो ज़ाहिर है। क्योंकि हमारे व्यक्तित्व अलग-अलग हैं, या यूँ कहें कि स्वभाव भी अलग-अलग हैं।

दार्शनिक: हम्म.

युवा: उदाहरण के लिए, आप इन सभी किताबों से घिरे रहते हैं। आप एक नई किताब पढ़ते हैं और नया ज्ञान प्राप्त करते हैं। मूलतः, आप ज्ञान संचय करते रहते हैं। जितना अधिक आप पढ़ते हैं, उतना ही आपका ज्ञान बढ़ता है। आपको मूल्य की नई अवधारणाएँ मिलती हैं, और आपको लगता है कि वे आपको बदल देती हैं। देखिए, मुझे आपको यह बताने में दुःख हो रहा है, लेकिन आप चाहे कितना भी ज्ञान प्राप्त कर लें, आपका स्वभाव या व्यक्तित्व मूलतः नहीं बदलने वाला। यदि आपका आधार विकृत हो गया, तो आपने जो कुछ भी सीखा है वह बेकार हो जाएगा। हाँ, आपने जो भी ज्ञान अर्जित किया है वह आपके चारों ओर बिखर जाएगा, और फिर अगली बात जो आप जानेंगे, वह यह कि आप वहीं वापस पहुँच जाएँगे जहाँ से आपने शुरुआत की थी! और यही बात एडलर के विचारों पर भी लागू होती है। मैं उनके बारे में चाहे जितने भी तथ्य इकट्ठा करने की कोशिश करूँ, उनका मेरे व्यक्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला। ज्ञान बस ज्ञान के रूप में जमा होता रहता है, जब तक कि देर-सवेर उसे त्याग नहीं दिया जाता।

दार्शनिक: तो फिर मैं आपसे यह पूछता हूँ। आपको क्या लगता है कि आप Y जैसे क्यों बनना चाहते हैं? मुझे लगता है कि आप बस एक अलग इंसान बनना चाहते हैं, चाहे वह Y हो या कोई और। लेकिन इसका लक्ष्य क्या है?

Machine Translated by Google

युवा: आप फिर से लक्ष्यों की बात कर रहे हैं? जैसा कि मैंने पहले कहा, बात बस इतनी है कि मैं उनका प्रशंसक हूँ और मुझे लगता है कि अगर मैं उनके जैसा होता तो ज़्यादा खुश होता।

दार्शनिक: तुम्हें लगता है कि अगर तुम उसके जैसे होते तो ज़्यादा खुश होते। इसका मतलब है कि तुम अभी खुश नहीं हो, है ना?

युवक: क्या?

दार्शनिक: अभी, तुम सच में खुश महसूस नहीं कर पा रहे हो। ऐसा इसलिए है क्योंकि तुमने खुद से प्यार करना नहीं सीखा है। और खुद से प्यार करने की कोशिश में, तुम एक अलग इंसान के रूप में पुनर्जन्म की कामना कर रहे हो। तुम Y जैसे बनने की उम्मीद कर रहे हो और जो तुम अभी हो उसे त्याग दो। सही कहा ना?

युवक: हाँ, लगता है सही है! सच कहूँ तो: मुझे खुद से नफ़रत है! मैं, जो पुराने ज़माने के दार्शनिक विमर्श के साथ खेल रहा हूँ, और जो इस तरह की हरकतें करने से खुद को रोक नहीं पाता—हाँ, मुझे खुद से सचमुच नफ़रत है।

दार्शनिक: ठीक है। अगर आप ऐसे लोगों से पूछें जो कहते हैं कि वे खुद को पसंद करते हैं, तो आपको शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति मिलेगा जो गर्व से सीना फुलाकर कहे, "हाँ, मैं खुद को पसंद करता हूँ।"

युवक: आप कैसे हैं? क्या आप खुद को पसंद करते हैं?

दार्शनिक: कम से कम, मुझे नहीं लगता कि मैं एक अलग व्यक्ति बनना चाहूंगा और मैं जो हूं उसे स्वीकार करता हूं।

युवक: आप स्वीकार करते हैं कि आप कौन हैं?

दार्शनिक: देखो, तुम चाहे कितना भी Y बनना चाहो, तुम उसके रूप में पुनर्जन्म नहीं ले सकते। तुम Y नहीं हो। तुम्हारा तुम होना ठीक है। हालाँकि, मैं यह नहीं कह रहा कि "जैसे हो वैसे ही रहना" ठीक है। अगर तुम सचमुच खुश नहीं हो पा रहे हो, तो साफ़ है कि चीज़ें जैसी हैं वैसी नहीं हैं। तुम्हें एक पैर दूसरे के आगे रखना होगा, और रुकना नहीं होगा।

युवक: यह कहने का एक कठोर तरीका है, लेकिन मैं आपकी बात समझ गया। यह स्पष्ट है कि मैं जैसा हूँ, वैसा सही नहीं हूँ। मुझे आगे बढ़ना होगा।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: एडलर के शब्दों में कहें तो: "महत्वपूर्ण बात यह नहीं है कि आप किस चीज़ के साथ पैदा हुए हैं, बल्कि यह है कि आप उस उपकरण का क्या उपयोग करते हैं।" आप Y या कोई और बनना चाहते हैं क्योंकि आपका पूरा ध्यान उस चीज़ पर है जिसके साथ आप पैदा हुए थे। इसके बजाय, आपको इस बात पर ध्यान केंद्रित करना होगा कि आप अपने उपकरण का क्या उपयोग कर सकते हैं।

Machine Translated by Google

दुःख एक ऐसी चीज़ है जिसे आप स्वयं चुनते हैं

युवक: बिल्कुल नहीं। यह अनुचित है।

दार्शनिक: यह अनुचित क्यों है?

युवा: क्यों? कुछ लोग अच्छे माता-पिता के साथ संपन्न परिस्थितियों में पैदा होते हैं, और कुछ बुरे माता-पिता के साथ गरीब पैदा होते हैं। क्योंकि दुनिया ऐसी ही है। और मैं वास्तव में इस तरह के विषय में नहीं पड़ना चाहता, लेकिन दुनिया में चीजें समान नहीं हैं और नस्ल, राष्ट्रीयता और जातीयता के बीच के अंतर पहले की तरह ही गहरे हैं। आप जिस चीज के साथ पैदा हुए हैं, उस पर ध्यान केंद्रित करना स्वाभाविक है। आपकी सारी बातें केवल अकादमिक सिद्धांत हैं - आप वास्तविक दुनिया को अनदेखा कर रहे हैं!

दार्शनिक: आप ही हैं जो वास्तविकता को नज़रअंदाज़ कर रहे हैं। क्या जन्म से ही जो मिला है, उसी पर अड़े रहने से वास्तविकता बदल जाती है? हम कोई बदली जा सकने वाली मशीन नहीं हैं। हमें प्रतिस्थापन की नहीं, बल्कि नवीनीकरण की ज़रूरत है।

युवक: मेरे लिए, प्रतिस्थापन और नवीनीकरण एक ही हैं। आप मुख्य बात से बच रहे हैं। देखिए, जन्म से ही दुःख जैसी कोई चीज़ होती है। कृपया सबसे पहले इसे स्वीकार करें।

दार्शनिक: मैं इसे स्वीकार नहीं करूंगा।

युवक: क्यों?

दार्शनिक: एक बात तो यह है कि अभी आप सच्ची खुशी महसूस नहीं कर पा रहे हैं। आपको जीना मुश्किल लग रहा है, और आप तो यहाँ तक चाहते हैं कि आपका पुनर्जन्म किसी और के रूप में हो। लेकिन आप अभी दुखी इसलिए हैं क्योंकि आपने खुद दुखी होना चुना है। इसलिए नहीं कि आपका जन्म किसी अशुभ नक्षत्र में हुआ है।

युवक: मैंने दुखी रहना चुना? मैं इसे कैसे स्वीकार कर सकता हूँ?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: इसमें कुछ भी असाधारण नहीं है। यह शास्त्रीय यूनानी युग से ही दोहराया जाता रहा है। क्या आपने यह कहावत सुनी है, "कोई भी बुराई नहीं चाहता"? यह एक ऐसा प्रस्ताव है जिसे आमतौर पर सुकरातीय विरोधाभास कहा जाता है।

युवक: बुराई चाहने वालों की तो कमी नहीं है, है ना? हाँ, चोर और हत्यारे तो बहुत हैं, और उन राजनेताओं और अफसरों को भी मत भूलना जिनके साथ उनके काले सौदे होते हैं। शायद एक सच्चा, सच्चा इंसान ढूँढ़ना मुश्किल है जो बुराई की इच्छा न रखता हो।

दार्शनिक: निस्संदेह, बुरे व्यवहार की कोई कमी नहीं है। लेकिन कोई भी व्यक्ति, यहाँ तक कि सबसे कठोर अपराधी भी, सिर्फ़ बुरे काम करने की इच्छा से अपराध में शामिल नहीं होता। हर अपराधी के पास अपराध में शामिल होने का एक आंतरिक औचित्य होता है। उदाहरण के लिए, पैसों को लेकर हुआ विवाद किसी को हत्या करने के लिए प्रेरित करता है। अपराधी के लिए, यह एक ऐसी चीज़ है जिसके लिए एक औचित्य है और जिसे "अच्छाई" की उपलब्धि के रूप में दोहराया जा सकता है। बेशक, यह नैतिक दृष्टि से अच्छा नहीं है, बल्कि "स्वयं के लिए लाभदायक" होने के अर्थ में अच्छा है।

युवक: अपने लाभ के लिए?

दार्शनिक: "अच्छा" (अगाथोन) के लिए यूनानी शब्द का कोई नैतिक अर्थ नहीं है। इसका मतलब सिर्फ़ "फ़ायदेमंद" है। इसके विपरीत, "बुराई" (काकोन) के लिए शब्द का अर्थ है "फ़ायदेमंद नहीं।"
हमारा संसार सभी प्रकार के अन्याय और कुकर्मों से भरा पड़ा है, फिर भी ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है जो शब्द के शुद्धतम अर्थ में बुराई की इच्छा रखता हो, अर्थात् ऐसी चीज़ की जो “लाभकारी न हो।”

युवक: इसका मुझसे क्या संबंध है?

दार्शनिक: आपने अपने जीवन के किसी मोड़ पर "दुखी रहना" चुना। ऐसा इसलिए नहीं है कि आप दुखी परिस्थितियों में पैदा हुए थे या किसी दुखी स्थिति में ही समाप्त हुए। बल्कि इसलिए कि आपने "दुखी रहना" अपने लिए अच्छा समझा।

युवक: क्यों? किसलिए?

दार्शनिक: आप इसे कैसे सही ठहराते हैं? आपने दुखी रहना क्यों चुना? मुझे इसका सटीक उत्तर या विवरण जानने का कोई तरीका नहीं है। शायद इस पर बहस करने पर यह और स्पष्ट हो जाएगा।

Machine Translated by Google

युवक: तुम सच में मुझे बेवकूफ़ बनाने की कोशिश कर रहे हो। तुम्हें लगता है कि ये सब दर्शनशास्त्र है? मैं इसे बिल्कुल नहीं मानता।

मन की बात न मानते हुए, वह युवक उठा और दार्शनिक को घूरने लगा। मैंने एक दुखी जीवन चुना? क्योंकि यह मेरे लिए अच्छा था? क्या बेतुका तर्क है! वह मेरा मज़ाक उड़ाने के लिए इतनी दूर क्यों जा रहा है? मैंने क्या ग़लती की है? मैं उसके तर्क को तोड़ दूँगा, चाहे इसके लिए कुछ भी करना पड़े। मैं उसे अपने सामने घुटने टेकने पर मजबूर करूँगा। युवक का चेहरा उत्साह से लाल हो गया।

Machine Translated by Google

लोग हमेशा बदलना नहीं चुनते

दार्शनिक: बैठ जाइए। जैसी स्थिति है, हमारे विचारों का आपस में टकराना स्वाभाविक है। अब मैं एडलरियन मनोविज्ञान में मनुष्यों को किस तरह समझा जाता है, इसकी एक सरल व्याख्या करूँगा।

युवक: ठीक है, लेकिन कृपया संक्षिप्त रहें।

दार्शनिक: पहले आपने कहा था कि किसी भी व्यक्ति का स्वभाव या व्यक्तित्व नहीं बदला जा सकता। एडलरियन मनोविज्ञान में, हम व्यक्तित्व और स्वभाव को "जीवनशैली" शब्द से परिभाषित करते हैं।

युवा: जीवनशैली?

दार्शनिक: हाँ। जीवनशैली जीवन में विचार और क्रिया की प्रवृत्तियाँ हैं।

युवा: विचार और कार्य की प्रवृत्तियाँ?

दार्शनिक: दुनिया को कैसे देखा जाए। और खुद को कैसे देखा जाए। जीवनशैली को एक ऐसी अवधारणा के रूप में सोचें जो अर्थ खोजने के इन तरीकों को एक साथ लाती है। संकीर्ण अर्थ में, जीवनशैली को किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के रूप में परिभाषित किया जा सकता है; व्यापक रूप से, यह एक ऐसा शब्द है जो उस व्यक्ति के विश्वदृष्टिकोण और जीवन के प्रति उसके दृष्टिकोण को समाहित करता है।

युवा: दुनिया के प्रति एक व्यक्ति का दृष्टिकोण?

दार्शनिक: मान लीजिए कोई व्यक्ति अपने बारे में चिंता करता है और कहता है, "मैं निराशावादी हूँ।" इसे इस तरह भी कहा जा सकता है, "दुनिया के बारे में मेरा नज़रिया निराशावादी है।" आप मान सकते हैं कि मुद्दा व्यक्तित्व का नहीं, बल्कि दुनिया के प्रति नज़रिए का है। ऐसा लगता है कि "व्यक्तित्व" शब्द सूक्ष्म है और अपरिवर्तनीय होने का संकेत देता है। लेकिन अगर हम दुनिया के प्रति नज़रिए की बात कर रहे हैं, तो उसे बदलना संभव होना चाहिए।

Machine Translated by Google

युवक: हम्म। यह थोड़ा उलझन भरा है। जब आप जीवनशैली की बात करते हैं, तो क्या आपका मतलब जीने के तरीके से है?

दार्शनिक: हाँ, आप इसे इस तरह कह सकते हैं। थोड़ा और सटीक रूप से कहें तो, यही वह तरीका है जिस तरह किसी का जीवन होना चाहिए। आप शायद स्वभाव या व्यक्तित्व को ऐसी चीज़ मानते हैं जो आपको दी गई है, आपकी इच्छाशक्ति से इसका कोई संबंध नहीं है। हालाँकि, एडलरियन मनोविज्ञान में, जीवनशैली को ऐसी चीज़ माना जाता है जिसे आप अपने लिए चुनते हैं।

युवक: क्या आप स्वयं चुनते हैं?

दार्शनिक: हाँ, बिल्कुल। अपनी जीवनशैली आप खुद चुनें।

युवक: तो क्या मैंने न केवल दुखी रहना चुना, बल्कि इस विकृत व्यक्तित्व को भी चुना?

दार्शनिक: बिल्कुल.

युवक: हा! अब तो आप सचमुच हद पार कर रहे हैं। जब मुझे होश आया, तब मेरा भी यही व्यक्तित्व था। मुझे तो बिल्कुल याद नहीं कि मैंने इसे चुना था। लेकिन आपके लिए भी यही बात है, है ना? अपनी मर्ज़ी से अपना व्यक्तित्व चुनने की क्षमता।

... अब ऐसा लग रहा है कि आप इंसानों की नहीं, बल्कि रोबोट की बात कर रहे हैं।

दार्शनिक: बेशक, आपने जानबूझकर "इस तरह का स्व" नहीं चुना। आपकी पहली पसंद शायद अनजाने में हुई होगी, और आपके द्वारा बताए गए बाहरी कारकों—यानी नस्ल, राष्ट्रीयता, संस्कृति और घर के माहौल—के साथ मिलकर हुई होगी। इन सबका उस चुनाव पर निश्चित रूप से गहरा प्रभाव पड़ा होगा। फिर भी, यह आप ही थे जिन्होंने "इस तरह का स्व" चुना।

युवक: मुझे समझ नहीं आ रहा आप क्या कह रहे हैं। आख़िर मैंने इसे कैसे चुना?

दार्शनिक: एडलरियन मनोविज्ञान का दृष्टिकोण है कि यह दस वर्ष की आयु के आसपास होता है।

युवा: खैर, तर्क के लिए—और अब मैं सचमुच एक कदम आगे जा रहा हूँ—मान लीजिए कि जब मैं दस साल का था, तो मैंने अनजाने में जीवनशैली या कुछ और का यह चुनाव किया था। क्या इससे कोई फर्क पड़ता? आप इसे व्यक्तित्व कह सकते हैं, स्वभाव कह सकते हैं, या जीवनशैली कह सकते हैं, लेकिन, खैर, मैं पहले ही "इस तरह का स्वभाव" बन चुका था। हालात बिल्कुल नहीं बदलते।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: यह सच नहीं है। अगर आपकी जीवनशैली ऐसी नहीं है जो आपको जन्मजात मिली हो, बल्कि आपने खुद चुनी हो, तो उसे दोबारा चुनना भी संभव होगा।

युवक: अब आप कह रहे हैं कि मैं सब कुछ चुन सकता हूँ?

दार्शनिक: हो सकता है कि अब तक आपको अपनी जीवनशैली का एहसास न हुआ हो, और शायद आपको जीवनशैली की अवधारणा का भी एहसास न हुआ हो। बेशक, कोई भी अपना जन्म खुद नहीं चुन सकता। इस देश में, इस युग में, और इन माता-पिता के साथ जन्म लेना ऐसी चीज़ें हैं जिन्हें आपने नहीं चुना। और इन सब चीज़ों का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ता है। आपको शायद निराशा का सामना करना पड़ेगा और आप दूसरों को देखकर सोचने लगेंगे, काश मैं उनकी परिस्थितियों में पैदा हुआ होता। लेकिन आप इसे यहीं खत्म नहीं होने दे सकते। मुद्दा अतीत का नहीं, बल्कि यहीं, वर्तमान का है। और अब आप जीवनशैली के बारे में जान गए हैं।

लेकिन अब से आप इसके साथ क्या करते हैं, यह आपकी ज़िम्मेदारी है। आप अब तक अपनाई गई जीवनशैली को ही जारी रखें या पूरी तरह से एक नई जीवनशैली अपनाएँ, यह पूरी तरह आप पर निर्भर है।

युवक: तो फिर मैं दोबारा कैसे चुनूँ? तुम मुझसे कह रहे हो, "तुमने खुद ही वह जीवनशैली चुनी है, तो जाओ और तुरंत एक नई जीवनशैली चुन लो," लेकिन ऐसा कोई तरीका नहीं है जिससे मैं तुरंत बदल सकूँ!

दार्शनिक: हाँ, आप बदल सकते हैं। लोग कभी भी बदल सकते हैं, चाहे वे किसी भी माहौल में हों। आप सिर्फ़ इसलिए नहीं बदल सकते क्योंकि आपने न बदलने का फ़ैसला किया है।

युवक: आपका वास्तव में क्या मतलब है?

दार्शनिक: लोग लगातार अपनी जीवनशैली चुनते रहते हैं। अभी, जब हम इस निजी बातचीत में व्यस्त हैं, हम अपनी जीवनशैली चुन रहे हैं। आप खुद को एक दुखी इंसान बताते हैं। आप कहते हैं कि आप अभी बदलना चाहते हैं। आप यह भी दावा करते हैं कि आप एक अलग इंसान के रूप में पुनर्जन्म लेना चाहते हैं। इतना सब कुछ होने के बाद भी, आप बदल क्यों नहीं पा रहे हैं? ऐसा इसलिए है क्योंकि आप अपनी जीवनशैली न बदलने का लगातार फैसला कर रहे हैं।

युवक: नहीं, क्या आपको नहीं लगता कि यह बिल्कुल अतार्किक है? मैं बदलना चाहता हूँ; यह मेरी सच्ची इच्छा है। तो मैं न बदलने का फ़ैसला कैसे कर सकता हूँ?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: हालाँकि कुछ छोटी-मोटी असुविधाएँ और सीमाएँ हैं, फिर भी आप शायद सोचते होंगे कि आपकी वर्तमान जीवनशैली सबसे व्यावहारिक है, और चीज़ों को जैसी हैं वैसी ही रहने देना ज़्यादा आसान है। अगर आप ऐसे ही बने रहें, तो अनुभव आपको घटनाओं के अनुसार सही प्रतिक्रिया देने में सक्षम बनाता है, साथ ही अपने कार्यों के परिणामों का अनुमान लगाने में भी।

आप कह सकते हैं कि यह आपकी पुरानी, जानी-पहचानी कार चलाने जैसा है। हो सकता है कि यह थोड़ी-सी खड़खड़ाहट करे, लेकिन इसे ध्यान में रखकर आसानी से चला जा सकता है। दूसरी ओर, अगर कोई नई जीवनशैली अपनाता है, तो कोई भी यह अनुमान नहीं लगा सकता कि उसके नए रूप का क्या होगा, या यह भी नहीं जान सकता कि आने वाली घटनाओं से कैसे निपटा जाए। भविष्य की कल्पना करना मुश्किल होगा, और जीवन चिंताओं से भर जाएगा। आगे एक और भी दर्दनाक और दुखी जीवन हो सकता है। सीधे शब्दों में कहें तो, लोगों को चीज़ों को लेकर कई तरह की शिकायतें होती हैं, लेकिन जैसा है वैसा ही रहना ज़्यादा आसान और सुरक्षित होता है।

युवा: कोई बदलना चाहता है, लेकिन बदलना डरावना है?

दार्शनिक: जब हम अपनी जीवनशैली बदलने की कोशिश करते हैं, तो हम अपने अदम्य साहस की परीक्षा लेते हैं। बदलाव से उत्पन्न चिंता और न बदलने से उत्पन्न निराशा, दोनों एक साथ आती हैं। मुझे यकीन है कि आपने बाद वाले विकल्प को चुना है।

युवक: रुको... अभी-अभी आपने "साहस" शब्द का प्रयोग किया था।

दार्शनिक: हाँ। एडलरियन मनोविज्ञान साहस का मनोविज्ञान है। आपके दुख का दोष आपके अतीत या आपके परिवेश पर नहीं मढ़ा जा सकता। और ऐसा नहीं है कि आपमें योग्यता की कमी है। बस साहस की कमी है। कोई कह सकता है कि आपमें खुश रहने का साहस नहीं है।

Machine Translated by Google

आपका जीवन यहीं और अभी तय होता है

युवा: खुश रहने का साहस, है ना?

दार्शनिक: क्या आपको और स्पष्टीकरण की आवश्यकता है?

युवक: नहीं, रुकिए। यह थोड़ा उलझा हुआ लग रहा है। पहले तो आप मुझे बताते हैं कि दुनिया एक साधारण जगह है। यह सिर्फ़ मेरी वजह से जटिल लगती है, और मेरा व्यक्तिपरक नज़रिया इसे ऐसा बना रहा है। और यह भी कि ज़िंदगी सिर्फ़ इसलिए जटिल लगती है क्योंकि मैं इसे जटिल बनाता हूँ, यही सब मेरे लिए खुशी से जीना मुश्किल बनाता है। फिर आप कहते हैं कि हमें फ्रायडियन एटिओलॉजी के बजाय, उद्देश्य विज्ञान का रुख़ अपनाना चाहिए —कि हमें अपने अतीत में कारणों की तलाश नहीं करनी चाहिए, और आघात को नकारना चाहिए। आप कहते हैं कि लोग किसी न किसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कार्य करते हैं, न कि ऐसे प्राणी होने के बजाय जो अपने अतीत के कारणों से प्रेरित होते हैं। है ना?

दार्शनिक: हाँ.

युवा: इसके अलावा, उद्देश्यवाद के प्रमुख आधार के रूप में, आप कहते हैं कि लोग बदल सकते हैं। लोग हमेशा अपनी जीवनशैली खुद चुनते हैं।

दार्शनिक: यह सही है।

युवा: तो मैं बदल नहीं पा रहा हूँ क्योंकि मैं खुद बार-बार यही फैसला लेता रहता हूँ कि मैं नहीं बदलूँगा। मुझमें नई जीवनशैली अपनाने की हिम्मत नहीं है। दूसरे शब्दों में, मुझमें खुश रहने की हिम्मत नहीं है, और इसीलिए मैं दुखी हूँ।

क्या मैंने कुछ ग़लत कहा है?

दार्शनिक: नहीं, आपने ऐसा नहीं किया है।

युवक: ठीक है, उस स्थिति में, मेरा प्रश्न यह है कि मुझे वास्तव में क्या उपाय करने चाहिए?
मुझे अपनी ज़िंदगी बदलने के लिए क्या करना होगा? आपने अभी तक यह सब नहीं बताया है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: आप सही कह रहे हैं। अब आपको अपनी मौजूदा जीवनशैली को छोड़ने का फ़ैसला लेना चाहिए। मिसाल के तौर पर, आपने पहले कहा था, "काश मैं Y जैसा बन पाता, तो मैं खुश रहता।" जब तक आप इस तरह, "काश ऐसा होता" की संभावना के दायरे में जीते रहेंगे, तब तक आप कभी नहीं बदल पाएँगे। क्योंकि "काश मैं Y जैसा बन पाता" कहना खुद को न बदलने का बहाना है।

युवा: न बदलने का बहाना?

दार्शनिक: हाँ। मेरा एक युवा मित्र है जो उपन्यासकार बनने का सपना देखता है, लेकिन लगता है वह अपना काम कभी पूरा नहीं कर पाता। उसके अनुसार, उसकी नौकरी उसे बहुत व्यस्त रखती है, और उसे उपन्यास लिखने के लिए पर्याप्त समय नहीं मिल पाता, और इसीलिए वह अपना काम पूरा नहीं कर पाता और उसे लेखन पुरस्कारों के लिए नामांकित नहीं कर पाता। लेकिन क्या यही असली वजह है? नहीं! दरअसल वह किसी भी चीज़ के लिए प्रतिबद्ध न होकर, "अगर मैं कोशिश करूँ तो मैं यह कर सकता हूँ" की संभावना को खुला छोड़ना चाहता है। वह अपने काम को आलोचना के दायरे में नहीं लाना चाहता, और वह इस वास्तविकता का सामना बिल्कुल नहीं करना चाहता कि वह घटिया लेखन कर सकता है और अस्वीकृति का सामना कर सकता है। वह संभावनाओं के उस दायरे में जीना चाहता है, जहाँ वह कह सके कि अगर उसके पास समय होता तो वह यह कर सकता था, या कि अगर उसे सही माहौल मिलता तो वह लिख सकता था, और कि उसके पास सचमुच इसके लिए प्रतिभा है। अगले पाँच या दस सालों में, वह शायद "मैं अब जवान नहीं रहा" या "मुझे अभी परिवार के बारे में सोचना है" जैसे दूसरे बहाने बनाने शुरू कर देगा।

युवक: मैं अच्छी तरह समझ सकता हूं कि वह कैसा महसूस कर रहा होगा।

दार्शनिक: उसे अपनी रचनाएँ किसी पुरस्कार के लिए भेज देनी चाहिए, और अगर वह अस्वीकृत भी हो जाए, तो भी नहीं। अगर ऐसा हुआ, तो शायद उसकी प्रगति हो, या उसे लगे कि उसे कुछ अलग करना चाहिए।
किसी भी तरह, वह आगे बढ़ पाएगा। यही तो अपनी मौजूदा जीवनशैली बदलने का मतलब है। कुछ भी न जमा करने से उसे कुछ नहीं मिलेगा।

युवक: लेकिन हो सकता है उसके सपने टूट जाएं।

दार्शनिक: अच्छा, मुझे आश्चर्य हो रहा है। साधारण काम करते रहना—जो करने ही चाहिए—और साथ ही उन्हें न कर पाने के लिए बार-बार तरह-तरह के कारण गढ़ते रहना, जीने का एक कठिन तरीका लगता है, है ना? तो मेरे उस दोस्त के मामले में, जो उपन्यासकार बनने का सपना देखता है, यह स्पष्ट रूप से "मैं" या "स्व" ही है जो जीवन को जटिल और खुशी से जीना बहुत मुश्किल बना रहा है।

युवक: लेकिन... यह तो बहुत कठोर है। आपका दर्शन बहुत कठोर है!

Machine Translated by Google

दार्शनिक: सचमुच, यह शक्तिशाली औषधि है।

युवक: बहुत तेज़ दवा! हाँ, मैं सहमत हूँ।

दार्शनिक: लेकिन अगर आप अपनी जीवनशैली—दुनिया और खुद को अर्थ देने का तरीका—बदलते हैं, तो दुनिया के साथ आपके व्यवहार और व्यवहार, दोनों को बदलना होगा। इस बात को मत भूलना: आपको बदलना ही होगा। आपको, जैसे आप हैं, अपनी जीवनशैली चुननी होगी। यह मुश्किल लग सकता है, लेकिन यह वाकई बहुत आसान है।

युवा: आपके अनुसार, आघात जैसी कोई चीज़ नहीं होती, और माहौल भी मायने नहीं रखता। ये सब बस बोझ है, और मेरी नाखुशी मेरी ही गलती है, है ना? मुझे लगने लगा है कि मैं जो कुछ भी रहा हूँ और किया है, उसके लिए मेरी आलोचना हो रही है!

दार्शनिक: नहीं, आपकी आलोचना नहीं की जा रही है। बल्कि, जैसा कि एडलर का उद्देश्यवाद हमें बताता है, "अब तक आपके जीवन में चाहे जो भी हुआ हो, उसका आपके आगे के जीवन पर कोई असर नहीं पड़ना चाहिए।" आप, जो वर्तमान में जी रहे हैं, वही अपने जीवन का निर्धारण स्वयं करते हैं।

युवक: क्या मेरा जीवन इसी बिंदु पर निर्धारित है?

दार्शनिक: हां, क्योंकि अतीत अस्तित्व में नहीं है।

युवक: ठीक है। खैर, मैं आपके सिद्धांतों से सौ प्रतिशत सहमत नहीं हूँ। कई ऐसे बिंदु हैं जिन पर मैं सहमत नहीं हूँ और जिनके विरुद्ध मैं तर्क दूँगा। साथ ही, आपके सिद्धांत और भी विचारणीय हैं, और मुझे एडलरियन मनोविज्ञान के बारे में और जानने में निश्चित रूप से रुचि है। मुझे लगता है कि आज रात के लिए मैंने काफी कुछ कर लिया है, लेकिन मुझे उम्मीद है कि अगर मैं अगले हफ्ते फिर आऊँ तो आपको कोई आपत्ति नहीं होगी। अगर मैं ब्रेक नहीं लूँगा, तो मुझे लगता है मेरा सिर फट जाएगा।

दार्शनिक: मुझे यकीन है कि आपको सोचने के लिए कुछ समय चाहिए। मैं हमेशा यहाँ हूँ, इसलिए आप जब चाहें आ सकते हैं। मुझे बहुत मज़ा आया। शुक्रिया। चलो फिर बात करते हैं।

युवक: वाह! एक आखिरी बात, अगर पूछूँ तो। आज हमारी बातचीत बहुत लंबी और तीखी हो गई थी, और मुझे लगता है कि मैंने कुछ ज़्यादा ही रूखापन से बात की। इसके लिए मैं माफ़ी चाहता हूँ।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: इसकी चिंता मत करो। तुम्हें प्लेटो के संवाद पढ़ने चाहिए। सुकरात के शिष्यों का आचरण और भाषा आश्चर्यजनक रूप से ढीली है। संवाद ऐसे ही होने चाहिए।

Machine Translated by Google

Machine Translated by Google

दूसरी रात:

सभी समस्याएं पारस्परिक संबंधों की समस्याएं हैं

Machine Translated by Google

युवक अपनी बात पर अड़ा रहा। ठीक एक हफ़्ते बाद, वह दार्शनिक के अध्ययन कक्ष में वापस लौटा। सच कहूँ तो, अपनी पहली मुलाक़ात के दो-तीन दिन बाद ही उसे वहाँ वापस जाने की इच्छा हुई थी। उसने अपने मन में बहुत सोच-विचार किया था, और उसके संदेह अब निश्चितता में बदल गए थे। संक्षेप में, किसी घटना के कारण के बजाय उसके उद्देश्य को बताना, यानी उद्देश्यवाद, एक कुतर्क था, और आघात का अस्तित्व संदेह से परे था। लोग अतीत को आसानी से भूल नहीं सकते, और न ही उससे मुक्त हो सकते हैं।

आज, उस युवक ने निश्चय किया कि वह इस विलक्षण दार्शनिक के सिद्धांतों को पूरी तरह से ध्वस्त कर देगा तथा मामले को हमेशा के लिए सुलझा देगा।

Machine Translated by Google

आप खुद को नापसंद क्यों करते हैं?

युवा: तो पिछली बार के बाद, मैंने खुद को शांत किया, ध्यान केंद्रित किया, और चीजों पर विचार किया।
और फिर भी, मुझे कहना होगा कि मैं अभी भी आपके सिद्धांतों से सहमत नहीं हो सकता।

दार्शनिक: ओह? आपको उनमें क्या संदिग्ध लगता है?

युवक: मान लीजिए, पिछले दिनों मैंने माना कि मुझे खुद से नफ़रत है। मैं चाहे कुछ भी करूँ, मुझे कमियाँ ही नज़र आती हैं, और मुझे कोई वजह नज़र नहीं आती कि मैं खुद को पसंद करने लगूँ। लेकिन फिर भी मैं खुद को पसंद करना चाहता हूँ। आप हर बात को लक्ष्यों से जुड़ा हुआ बताते हैं, लेकिन यहाँ मेरा लक्ष्य क्या हो सकता है? मेरा मतलब है, खुद को न पसंद करने से मुझे क्या फ़ायदा हो सकता है? मैं सोच भी नहीं सकता कि इससे मुझे कोई फ़ायदा होगा।

दार्शनिक: मैं समझ गया। तुम्हें लगता है कि तुममें कोई भी खूबी नहीं है, कि तुम्हारे अंदर कमियाँ ही कमियाँ हैं। सच जो भी हो, तुम्हें ऐसा ही लगता है। दूसरे शब्दों में, तुम्हारा आत्म-सम्मान बेहद कम है। तो फिर, सवाल यह है कि तुम इतने निराश क्यों महसूस करते हो? और, तुम खुद को इतना कम क्यों समझते हो?

युवा: क्योंकि यह एक तथ्य है - वास्तव में मेरे पास कोई मजबूत पक्ष नहीं है।

दार्शनिक: आप ग़लत हैं। आपको सिर्फ़ अपनी कमियाँ ही नज़र आती हैं क्योंकि आपने ठान लिया है कि आप ख़ुद को पसंद नहीं करेंगे। ख़ुद को पसंद न करने के लिए, आप अपनी खूबियों को नहीं देखते और सिर्फ़ अपनी कमियों पर ही ध्यान देते हैं। पहले इस बात को समझिए।

युवा: क्या मैंने खुद को पसंद न करने का संकल्प लिया है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। आपके लिए खुद को नापसंद करना एक गुण है।

युवक: क्यों? किसलिए?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: शायद आपको अपने बारे में सोचना चाहिए। आपको क्या लगता है कि आपमें किस तरह की कमियाँ हैं?

युवा: मुझे यकीन है कि आपने पहले ही गौर कर लिया होगा। सबसे पहले, मेरे व्यक्तित्व की बात करें। मुझमें ज़रा भी आत्मविश्वास नहीं है, और मैं हर चीज़ को लेकर हमेशा निराशावादी रहता हूँ। और शायद मैं बहुत ज़्यादा आत्म-चेतन हूँ, क्योंकि मुझे इस बात की चिंता रहती है कि दूसरे लोग क्या देखेंगे, और फिर, मैं दूसरों के प्रति लगातार अविश्वास के साथ जीता हूँ। मैं कभी भी स्वाभाविक रूप से व्यवहार नहीं कर पाता; मैं जो कहता और करता हूँ, उसमें हमेशा कुछ नाटकीयता होती है। और यह सिर्फ़ मेरे व्यक्तित्व की बात नहीं है—मेरे चेहरे या मेरे शरीर में भी पसंद करने लायक कुछ नहीं है।

दार्शनिक: जब आप अपनी कमियों को इस तरह गिनाते हैं, तो आप किस प्रकार की मनोदशा में आ जाते हैं?

युवक: वाह, ये तो घिनौना है! ज़ाहिर है, एक अप्रिय मनोदशा। मुझे यकीन है कि कोई भी मेरे जैसे विकृत आदमी के साथ संबंध नहीं बनाना चाहेगा। अगर मेरे आस-पास भी कोई इतना घटिया और परेशान करने वाला होता, तो मैं भी उससे दूरी बनाए रखता।

दार्शनिक: मैं समझ गया। खैर, अब बात यहीं खत्म हो गई।

युवक: आपका क्या मतलब है?

दार्शनिक: आपके अपने उदाहरण से इसे समझना मुश्किल हो सकता है, इसलिए मैं किसी दूसरे उदाहरण का इस्तेमाल करूँगा। मैं इस अध्ययन का इस्तेमाल साधारण परामर्श सत्रों के लिए करता हूँ। यह कुछ साल पहले की बात होगी, लेकिन एक छात्रा आई थी। वह ठीक उसी कुर्सी पर बैठी थी जहाँ आप अभी बैठे हैं। खैर, उसकी चिंता शरमाने के डर से थी। उसने मुझे बताया कि जब भी वह सार्वजनिक रूप से बाहर जाती है, तो उसका चेहरा हमेशा लाल हो जाता है, और वह इससे छुटकारा पाने के लिए कुछ भी करने को तैयार है। तो मैंने उससे पूछा, "अच्छा, अगर तुम इसे ठीक कर सकती हो , तो तुम क्या करना चाहोगी?" और उसने कहा कि वह एक आदमी को चाहती है। उसके मन में उसके लिए भावनाएँ थीं, लेकिन वह उन्हें ज़ाहिर करने को तैयार नहीं थी। एक बार जब उसका शरमाने का डर दूर हो गया, तो उसने उसके साथ रहने की अपनी इच्छा ज़ाहिर की।

युवक: हुंह! ठीक है, लगता है ये आम बात है जिसके लिए कोई भी छात्रा काउंसलिंग करवाती होगी। उसके लिए अपनी भावनाओं को ज़ाहिर करने के लिए, पहले उसे अपनी शरमाने की समस्या का इलाज करवाना होगा।

दार्शनिक: लेकिन क्या सच में यही है? मेरी राय अलग है। उसे शरमाने का डर क्यों लगा? और ये ठीक क्यों नहीं हुआ? क्योंकि उसे इसकी ज़रूरत थी।

Machine Translated by Google

शर्मिंदगी का लक्षण.

युवक: क्या कह रहे हो? वो तो तुमसे इलाज के लिए कह रही थी, है ना?

दार्शनिक: आपको क्या लगता है, उसके लिए सबसे डरावनी बात क्या थी, वह चीज़ जिससे वह सबसे ज़्यादा बचना चाहती थी? यह कि वह आदमी उसे अस्वीकार कर देगा, ज़ाहिर है। यह तथ्य कि उसका एकतरफ़ा प्यार उसके लिए सब कुछ, "मैं" के अस्तित्व और संभावना को नकार देगा। यह पहलू किशोरावस्था के एकतरफ़ा प्यार में गहराई से मौजूद है। लेकिन जब तक उसे शरमाने का डर है, वह सोचती रह सकती है, मैं उसके साथ नहीं रह सकती क्योंकि मुझे शरमाने का डर है। यह उसके द्वारा अपनी भावनाओं को उसके सामने स्वीकार करने का साहस जुटाए बिना ही खत्म हो सकता है, और वह खुद को यह यकीन दिला सकती है कि वह उसे वैसे भी अस्वीकार कर देगा। और अंततः, वह इस संभावना में जी सकती है कि काश मेरे शरमाने का डर कम हो जाता, तो मैं...

युवक: ठीक है, तो उसने अपनी भावनाओं को ज़ाहिर न कर पाने का बहाना बनाने के लिए शरमाने के डर को गढ़ा था। या शायद जब उसने उसे ठुकरा दिया, तो उसके लिए एक तरह का बीमा।

दार्शनिक: हाँ, आप इसे इस तरह कह सकते हैं।

युवक: ठीक है, यह एक दिलचस्प व्याख्या है । लेकिन अगर सच में ऐसा होता, तो क्या उसकी मदद करना नामुमकिन नहीं होता? चूँकि उसे एक तरफ़ शरमाने के डर की ज़रूरत है और दूसरी तरफ़ वह इससे परेशान भी है, तो उसकी परेशानियों का कोई अंत नहीं होगा।

दार्शनिक: खैर, मैंने उससे यही कहा था: "शरमाने का डर आसानी से ठीक हो जाता है।" उसने पूछा, "सच में?" मैंने आगे कहा: "लेकिन मैं इसका इलाज नहीं करूँगा।" उसने ज़ोर देकर पूछा, "क्यों?" मैंने समझाया, "देखो, शरमाने के डर की वजह से ही तुम खुद से, अपने आस-पास की दुनिया से, और एक ऐसे जीवन से जो ठीक नहीं चल रहा है, अपनी असंतुष्टि को स्वीकार कर पाती हो। यह तुम्हारे शरमाने के डर की वजह से है, और इसी की वजह से होता है।" उसने पूछा, "ऐसा कैसे हो सकता है..."

. ?" मैंने आगे

कहा: "अगर मैं इसे ठीक कर दूँ, और आपकी स्थिति में कोई भी बदलाव न आए, तो आप क्या करेंगे?
आप शायद फिर से यहां आएंगे और कहेंगे, 'मुझे मेरा शरमाने का डर वापस दे दो।' और यह मेरी क्षमता से परे होगा।"

युवक: हम्म.

दार्शनिक: उसकी कहानी वाकई अनोखी नहीं है। परीक्षा की तैयारी कर रहे छात्र सोचते हैं, " अगर मैं पास हो गया, तो ज़िंदगी आसान हो जाएगी।" कंपनी के कर्मचारी सोचते हैं, " अगर मेरा तबादला हो गया, तो सब कुछ ठीक हो जाएगा।"

Machine Translated by Google

सब ठीक हो जाएगा। लेकिन जब ये इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं, तब भी कई मामलों में उनकी स्थिति में कोई बदलाव नहीं आता।

युवक: बिल्कुल।

दार्शनिक: जब कोई ग्राहक शरमाने के डर से छुटकारा पाने की गुहार लेकर आता है, तो परामर्शदाता को उसके लक्षणों का इलाज नहीं करना चाहिए। तब उसका ठीक होना और भी मुश्किल हो सकता है। एडलरियन मनोविज्ञान में इस तरह की चीज़ों के बारे में यही सोचा जाता है।

युवा: तो फिर आप क्या करते हैं? क्या आप पूछते हैं कि उन्हें किस बात की चिंता है और फिर उसे यूँ ही छोड़ देते हैं?

दार्शनिक: उसे खुद पर भरोसा नहीं था। उसे बहुत डर था कि हालात ऐसे ही रहे, अगर उसने उसे अपनी गलती मान भी ली, तो भी वह उसे ठुकरा देगा। और अगर ऐसा हुआ, तो उसका आत्मविश्वास और भी कम हो जाएगा और उसे ठेस पहुँचेगी। इसीलिए उसने शरमाने के डर का लक्षण पैदा किया। मैं जो कर सकता हूँ, वह यह है कि पहले उस व्यक्ति को "अभी खुद को" स्वीकार करने के लिए प्रेरित करूँ, और फिर परिणाम चाहे जो भी हो, आगे बढ़ने का साहस जुटाऊँ।

एडलरियन मनोविज्ञान में, इस तरह के दृष्टिकोण को “प्रोत्साहन” कहा जाता है।

युवा: प्रोत्साहन?

दार्शनिक: हाँ। जब हमारी चर्चा थोड़ी आगे बढ़ जाएगी, तो मैं सिलसिलेवार ढंग से समझाऊँगा कि इसमें क्या-क्या शामिल है। अभी हम उस स्तर पर नहीं हैं।

युवक: मेरे लिए तो यही सही है। तब तक, मैं "प्रोत्साहन" शब्द को ध्यान में रखूँगा। तो उसके साथ जो भी हुआ?

दार्शनिक: ज़ाहिर है, उसे दोस्तों के एक समूह में शामिल होने और उस आदमी के साथ समय बिताने का मौका मिला था, और आखिरकार उसी ने उसके साथ रहने की इच्छा ज़ाहिर की। बेशक, उसके बाद वह कभी उस अध्ययन कक्ष में नहीं आई। मुझे नहीं पता कि शरमाने के उसके डर का क्या हुआ। लेकिन शायद अब उसे इसकी ज़रूरत नहीं रही।

युवक: हां, अब उसे इसकी कोई आवश्यकता नहीं रही।

दार्शनिक: बिलकुल सही। अब, इस छात्र की कहानी को ध्यान में रखते हुए, आइए आपकी समस्याओं के बारे में सोचें। आप कहते हैं कि फ़िलहाल आपको सिर्फ़ अपनी कमियाँ ही नज़र आती हैं, और यह मुमकिन नहीं कि आप कभी खुद को पसंद करें। और फिर आपने कहा, "मुझे यकीन है कि कोई भी नहीं।"

Machine Translated by Google

मैं तो मेरे जैसे विकृत आदमी के साथ संबंध बनाना चाहूँगी।" मुझे यकीन है कि आप यह बात समझ ही गए होंगे। आप खुद को नापसंद क्यों करते हैं? आप सिर्फ़ अपनी कमियों पर ही क्यों ध्यान देते हैं, और आपने खुद को पसंद न करने का फ़ैसला क्यों किया है? ऐसा इसलिए है क्योंकि आपको दूसरों द्वारा नापसंद किए जाने और अपने पारस्परिक संबंधों में चोट लगने का बहुत ज़्यादा डर है।

युवक: आपका क्या मतलब है?

दार्शनिक: जिस युवती को शर्मिंदगी महसूस होती थी और जो पुरुष द्वारा अस्वीकार किए जाने से डरती थी, उसी तरह आपको भी दूसरों द्वारा अस्वीकार किए जाने का डर है। आपको अपमानजनक व्यवहार, अस्वीकार किए जाने और गहरे मानसिक आघात सहने का डर है। आपको लगता है कि ऐसी परिस्थितियों में उलझने के बजाय, बेहतर होगा कि आप शुरू से ही किसी के साथ संबंध न रखें। दूसरे शब्दों में, आपका लक्ष्य दूसरों के साथ अपने संबंधों में आहत न होना है।

युवक: हुंह...

दार्शनिक: अब, यह लक्ष्य कैसे प्राप्त किया जा सकता है? इसका उत्तर आसान है। बस अपनी कमियों को पहचानो, खुद से नफ़रत करना शुरू करो, और ऐसे व्यक्ति बनो जो पारस्परिक संबंधों में न पड़े। इस तरह, अगर तुम खुद को अपने खोल में बंद कर सको, तो तुम्हें किसी से बातचीत करने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी, और जब भी दूसरे लोग तुम्हें नज़रअंदाज़ करेंगे, तो तुम्हारे पास एक बहाना भी तैयार रहेगा। कि तुम्हारी कमियों की वजह से ही तुम्हें नज़रअंदाज़ किया जाता है, और अगर हालात ऐसे न होते, तो तुम्हें भी प्यार किया जा सकता था।

युवक: हा-हा! अब तो तुमने मुझे मेरी जगह पर ला खड़ा किया है।

दार्शनिक: टालमटोल मत करो। इन सारी कमियों के बावजूद "मैं जैसा हूँ वैसा ही रहना" तुम्हारे लिए एक अनमोल गुण है। दूसरे शब्दों में, कुछ ऐसा जो तुम्हारे फ़ायदे में है।

युवक: आह, बहुत दर्द हो रहा है। क्या परपीड़क हो तुम; तुम तो शैतान हो! ठीक है, हाँ, यह सच है: मुझे डर लग रहा है। मैं पारस्परिक संबंधों में आहत नहीं होना चाहता। मुझे अपने वास्तविक रूप में तिरस्कृत किए जाने का डर है। यह स्वीकार करना मुश्किल है, लेकिन तुम सही हो।

दार्शनिक: स्वीकार करना एक अच्छा रवैया है। लेकिन यह मत भूलिए कि दूसरों के साथ अपने संबंधों में आहत न होना लगभग असंभव है। जब आप पारस्परिक संबंधों में प्रवेश करते हैं, तो यह अनिवार्य है कि कम या ज़्यादा हद तक आपको चोट पहुँचेगी, और आप

Machine Translated by Google

किसी को चोट भी पहुँचाएगा। एडलर कहते हैं, "अपनी समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए, कोई बस इतना ही कर सकता है कि ब्रह्मांड में अकेला रह जाए।" लेकिन कोई ऐसा नहीं कर सकता।

Machine Translated by Google

सभी समस्याएं पारस्परिक संबंधों की समस्याएं हैं

युवक: ज़रा रुको! क्या मुझे इसे यूँ ही छोड़ देना चाहिए? "अपनी समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए, कोई बस ब्रह्मांड में अकेले रह सकता है"? आपका क्या मतलब है?
यदि आप अकेले रहते तो क्या आप बहुत अकेले नहीं होते?

दार्शनिक: ओह, लेकिन अकेले रहना आपको अकेलापन महसूस नहीं कराता। अकेलापन आपके आस-पास दूसरे लोगों, समाज और समुदाय का होना है, और उनसे अलग-थलग होने का गहरा एहसास होना है। अकेलापन महसूस करने के लिए हमें दूसरे लोगों की ज़रूरत होती है। यानी, सिर्फ़ सामाजिक संदर्भों में ही कोई व्यक्ति "व्यक्ति" बनता है।

युवा: यदि आप सचमुच अकेले होते, यानी यदि आप ब्रह्मांड में पूरी तरह अकेले होते, तो आप एक व्यक्ति नहीं होते और आपको अकेलापन भी महसूस नहीं होता?

दार्शनिक: मुझे लगता है अकेलेपन की बात ही मन में नहीं आएगी। आपको भाषा की ज़रूरत नहीं होगी, और तर्क या सामान्य ज्ञान की भी कोई ज़रूरत नहीं होगी। लेकिन ऐसा होना नामुमकिन है। अगर आप किसी निर्जन द्वीप पर भी रहते, तो भी आप समुद्र के उस पार किसी के बारे में सोचते। अगर आप रातें अकेले भी बिताते, तो भी किसी की साँसों की आवाज़ सुनने के लिए अपने कान तानते। जब तक कहीं कोई है, तब तक आपको अकेलापन सताता रहेगा।

युवा: लेकिन फिर आप इसे इस तरह से भी कह सकते हैं, "यदि कोई व्यक्ति ब्रह्मांड में अकेले रह सके, तो उसकी समस्याएं दूर हो जाएंगी," है न?

दार्शनिक: सिद्धांततः, हाँ। जैसा कि एडलर यहाँ तक कहते हैं, "सारी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं।"

युवक: क्या आप यह बात दोबारा कह सकते हैं?

दार्शनिक: हम इसे जितनी बार चाहें दोहरा सकते हैं: सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। यह एक ऐसी अवधारणा है जो मूल तक जाती है।

Machine Translated by Google

एडलरियन मनोविज्ञान। अगर इस दुनिया से सभी पारस्परिक संबंध खत्म हो जाएँ, यानी अगर कोई इस ब्रह्मांड में अकेला रह जाए और बाकी सभी लोग चले जाएँ, तो सभी तरह की समस्याएँ गायब हो जाएँगी।

युवक: यह झूठ है! यह अकादमिक कुतर्क के अलावा और कुछ नहीं है।

दार्शनिक: बेशक, हम पारस्परिक संबंधों के बिना नहीं रह सकते। एक इंसान का अस्तित्व, अपने मूल में, दूसरे इंसानों के अस्तित्व पर निर्भर करता है।
सिद्धांततः, दूसरों से पूरी तरह अलग रहना असंभव है। जैसा कि आप बता रहे हैं, "काश कोई ब्रह्मांड में अकेला रह पाता" यह धारणा बेमानी है।

युवा: मैं इस मुद्दे की बात नहीं कर रहा हूँ। हाँ, पारस्परिक संबंध शायद एक बड़ी समस्या हैं। यह मैं मानता हूँ। लेकिन यह कहना कि सब कुछ पारस्परिक संबंधों की समस्याओं पर निर्भर करता है, वाकई एक अतिवादी स्थिति है।

पारस्परिक संबंधों से कट जाने की चिंता, एक व्यक्ति के रूप में जिस तरह की समस्याओं से वह परेशान होता है, और जो समस्याएँ उसे खुद से जुड़ी होती हैं, उनके बारे में आप क्या सोचते हैं? क्या आप इन सब बातों से इनकार करते हैं?

दार्शनिक: चिंता जैसी कोई चीज़ पूरी तरह से व्यक्ति विशेष द्वारा परिभाषित नहीं होती; तथाकथित आंतरिक चिंता का कोई अस्तित्व ही नहीं है। चाहे कोई भी चिंता क्यों न हो, दूसरों की परछाइयाँ हमेशा मौजूद रहती हैं।

युवक: लेकिन फिर भी, आप एक दार्शनिक हैं। इंसानों के सामने पारस्परिक संबंधों जैसी चीज़ों से भी कहीं ज़्यादा बड़ी और गंभीर समस्याएँ हैं। खुशी क्या है? आज़ादी क्या है? और जीवन का अर्थ क्या है? क्या ये वो विषय नहीं हैं जिनकी खोज प्राचीन यूनानियों के ज़माने से ही दार्शनिक करते आ रहे हैं? और आप कह रहे हैं, "तो क्या?"

पारस्परिक संबंध ही सब कुछ हैं? मुझे तो यह बात थोड़ी बेतुकी लगती है। यकीन करना मुश्किल है कि कोई दार्शनिक ऐसी बातें कहेगा।

दार्शनिक: तो फिर, ऐसा लगता है कि चीजों को थोड़ा और ठोस ढंग से समझाने की जरूरत है।

युवक: हाँ, ज़रूर बताइए! अगर आप मुझे बता रहे हैं कि आप एक दार्शनिक हैं, तो आपको चीज़ों को अच्छी तरह समझाना होगा, वरना इसका कोई मतलब नहीं है।

दार्शनिक: आप पारस्परिक संबंधों से इतना डरते थे कि आपको खुद से ही नफ़रत हो गई। खुद से नफ़रत करके आपने पारस्परिक संबंधों से परहेज़ किया है।

Machine Translated by Google

इन बातों ने उस युवक को अंदर तक झकझोर दिया। इन शब्दों में एक ऐसा निर्विवाद सत्य था जो मानो उसके दिल को चीर गया हो। फिर भी, उसे इस बात का स्पष्ट खंडन ढूँढ़ना था कि लोगों की सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। एडलर लोगों की समस्याओं को तुच्छ बना रहा था। मैं जिन समस्याओं से जूझ रहा हूँ, वे इतनी साधारण नहीं हैं!

Machine Translated by Google

हीनता की भावनाएँ व्यक्तिपरक धारणाएँ हैं

दार्शनिक: आइए पारस्परिक संबंधों को थोड़े अलग नज़रिए से देखें। क्या आप "हीनता की भावना" शब्द से परिचित हैं?

युवक: क्या बेतुका सवाल है! जैसा कि आप अब तक की हमारी बातचीत से साफ़ समझ गए होंगे, मैं तो बस हीनता की भावना का एक बड़ा सा गोला हूँ।

दार्शनिक: विशेष रूप से वे भावनाएँ क्या हैं?

युवा: मान लीजिए, अगर मैं अखबार में अपनी उम्र के किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में कुछ देखता हूँ, जो वाकई कामयाब है, तो मैं हमेशा हीनता की भावना से घिर जाता हूँ। अगर कोई और, जिसने मेरे जितना ही जीवन जिया है, इतना कामयाब है, तो मैं अपने साथ क्या कर रहा हूँ? या जब मैं किसी दोस्त को खुश देखता हूँ, तो उसके साथ जश्न मनाने का मन भी नहीं करता, मैं ईर्ष्या और निराशा से भर जाता हूँ। बेशक, मुँहासों से भरा यह चेहरा कोई मदद नहीं करता, और जब बात मेरी शिक्षा और व्यवसाय की आती है, तो मुझे हीनता की गहरी भावनाएँ होती हैं। और फिर मेरी आमदनी और सामाजिक प्रतिष्ठा की भी बात है। मुझे लगता है कि मैं पूरी तरह से हीनता की भावना से ग्रस्त हूँ।

दार्शनिक: मैं समझ गया। संयोग से, माना जाता है कि एडलर ही वह व्यक्ति थे जिन्होंने आज जिस संदर्भ में "हीनता की भावना" शब्द का प्रयोग किया है, उसका इस्तेमाल सबसे पहले किया था।

युवक: हुंह, मुझे यह नहीं पता था।

दार्शनिक: एडलर की मूल जर्मन भाषा में, यह शब्द है माइंडरवर्टिग्केइट्सगेफुहल, जिसका अर्थ है कम (माइंडर) मूल्य (वर्ट) होने का एहसास (गेफुहल) । तो "हीनता की भावना" का संबंध स्वयं के मूल्यांकन से है।

युवा: मूल्य निर्णय?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: यह वह भावना है कि व्यक्ति का कोई मूल्य नहीं है, या वह केवल इतना ही मूल्यवान है।

युवक: आह, ये एहसास तो मैं अच्छी तरह जानता हूँ। संक्षेप में मैं यही हूँ। एक भी दिन ऐसा नहीं जाता जब मैं खुद को ये सोचकर परेशान न करूँ कि जीने का कोई मतलब नहीं है।

दार्शनिक: तो फिर, आइए मेरी हीनता की भावनाओं पर एक नज़र डालें। जब आप पहली बार मुझसे मिले थे, तो आपकी क्या राय थी? शारीरिक विशेषताओं के संदर्भ में।

युवक: उम, अच्छा...

दार्शनिक: पीछे हटने की कोई ज़रूरत नहीं है। सीधे बोलो।

युवक: ठीक है, मुझे लगता है कि आप मेरी कल्पना से भी छोटे थे।

दार्शनिक: शुक्रिया। मेरी लंबाई 61 इंच है। एडलर की लंबाई भी लगभग इतनी ही थी। एक समय था—दरअसल, जब तक मैं आपकी उम्र के आसपास नहीं पहुँच गया—जब मैं अपनी लंबाई को लेकर चिंतित रहता था। मुझे यकीन था कि अगर मैं औसत कद का होता, आठ या सिर्फ़ चार इंच लंबा होता, तो चीज़ें अलग होतीं। मानो एक ज़्यादा सुखद ज़िंदगी मेरा इंतज़ार कर रही हो। जब मुझे ये एहसास हो रहे थे, तो मैंने अपने एक दोस्त से इस बारे में बात की, और उसने कहा कि यह "बकवास" है और इसे सिरे से खारिज कर दिया।

युवक: यह तो भयानक है! कोई दोस्त!

दार्शनिक: और फिर उन्होंने कहा, "अगर तुम लंबे हो जाओ तो क्या करोगे? तुम्हें पता है, लोगों को सहज करने का हुनर तुम्हारे अंदर है।" सच है, एक बड़े और ताकतवर आदमी के साथ ऐसा लगता है कि वह अपने कद की वजह से लोगों को डरा सकता है। दूसरी ओर, मेरे जैसे छोटे कद वाले व्यक्ति के साथ, लोग अपनी सावधानी छोड़ देते हैं। तो मुझे एहसास हुआ कि छोटा कद होना मेरे और मेरे आस-पास के लोगों, दोनों के लिए एक वांछनीय चीज़ है। दूसरे शब्दों में, मेरे मूल्यों में बदलाव आया। अब मुझे अपने कद की चिंता नहीं है।

युवक: ठीक है, लेकिन यह—

दार्शनिक: रुको, मेरी बात पूरी हो गई। यहाँ ज़रूरी बात यह है कि मेरी 61 इंच की ऊँचाई कोई कम नहीं थी।

युवक: यह घटिया नहीं था?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: दरअसल, इसमें किसी चीज़ की कमी या उससे कम नहीं था। हाँ, मेरी 61 इंच की लंबाई औसत ऊँचाई से कम है, और एक निष्पक्ष रूप से मापी गई संख्या है। पहली नज़र में, कोई इसे कमतर समझ सकता है। लेकिन असल मुद्दा यह है कि मैं उस ऊँचाई को किस तरह का अर्थ देता हूँ, मैं उसे किस तरह का मूल्य देता हूँ।

युवक: इसका क्या मतलब है?

दार्शनिक: अपनी ऊँचाई को लेकर मेरी भावनाएँ हीनता की व्यक्तिपरक भावनाएँ थीं, जो पूरी तरह से दूसरों से अपनी तुलना करने के कारण पैदा हुईं। यानी मेरे पारस्परिक संबंधों में। क्योंकि अगर कोई ऐसा न होता जिससे मैं अपनी तुलना कर पाता, तो मुझे यह सोचने का कोई मौका ही नहीं मिलता कि मैं छोटा हूँ। इस समय, आप भी हीनता की विभिन्न भावनाओं से ग्रस्त हैं। लेकिन कृपया समझें कि आप जो महसूस कर रहे हैं वह कोई वस्तुनिष्ठ हीनता नहीं, बल्कि एक व्यक्तिपरक हीनता की भावना है। ऊँचाई जैसे मुद्दे के साथ भी, यह सब उसकी व्यक्तिपरकता तक सीमित है।

युवा: दूसरे शब्दों में, हम जिस हीनता की भावना से ग्रस्त हैं, वह वस्तुपरक तथ्यों के बजाय व्यक्तिपरक व्याख्याएं हैं?

दार्शनिक: बिल्कुल। मेरे दोस्त के नज़रिए से देखें तो, मैं लोगों को सहज महसूस कराता हूँ या उन्हें डराता नहीं हूँ—ऐसे पहलू मज़बूत बिंदु बन सकते हैं। बेशक, यह एक व्यक्तिपरक व्याख्या है। आप यह भी कह सकते हैं कि यह एक मनमाना अनुमान है।

हालाँकि, व्यक्तिपरकता की एक अच्छी बात यह है: यह आपको अपनी पसंद खुद चुनने की आज़ादी देती है। चूँकि मैं इसे व्यक्तिपरकता पर छोड़ रहा हूँ, इसलिए अपनी ऊँचाई को फ़ायदे या नुकसान के तौर पर देखने का विकल्प मेरे पास खुला है।

युवा: यह तर्क कि आप एक नई जीवनशैली चुन सकते हैं?

दार्शनिक: बिलकुल सही। हम वस्तुनिष्ठ तथ्यों को नहीं बदल सकते। लेकिन व्यक्तिपरक व्याख्याओं को जितना चाहें उतना बदला जा सकता है। और हम एक व्यक्तिपरक दुनिया के निवासी हैं। हमने इस बारे में शुरुआत में ही बात की थी, है ना?

युवक: हाँ; कुएँ का पानी जो साठ डिग्री है।

दार्शनिक: अब, हीनता की भावना के लिए जर्मन शब्द " माइंडरवर्टिगकेइट्सगेफुहल" याद कीजिए। जैसा कि मैंने कुछ देर पहले बताया था, "हीनता की भावना" एक ऐसा शब्द है जिसका संबंध स्वयं के मूल्यांकन से है। तो आखिर यह मूल्य क्या हो सकता है? उदाहरण के लिए, हीरे को ही लीजिए, जिनका व्यापार बहुत ऊँचे मूल्य पर होता है। या मुद्रा को।

Machine Translated by Google

हम इन चीज़ों के लिए खास-खास मूल्य निकालते हैं और कहते हैं कि एक कैरेट इतना होता है, कि कीमतें इतनी-इतनी होती हैं। लेकिन अगर आप अपना नज़रिया बदलें, तो हीरा एक छोटा-सा पत्थर है।

युवक: हां, बौद्धिक रूप से तो यह सही है।

दार्शनिक: दूसरे शब्दों में, मूल्य एक ऐसी चीज़ है जो सामाजिक संदर्भ पर आधारित होती है। एक डॉलर के नोट को दिया गया मूल्य वस्तुनिष्ठ रूप से निर्धारित मूल्य नहीं है, हालाँकि यह एक व्यावहारिक दृष्टिकोण हो सकता है। अगर कोई मुद्रित सामग्री के रूप में इसकी वास्तविक लागत पर विचार करे, तो इसका मूल्य एक डॉलर के आसपास भी नहीं है। अगर मैं इस दुनिया में अकेला व्यक्ति होता और कोई और नहीं होता, तो शायद मैं सर्दियों में उन एक डॉलर के नोटों को अपनी चिमनी में रख रहा होता।

शायद मैं नाक साफ़ करने के लिए इनका इस्तेमाल कर रहा होता। ठीक इसी तर्क से, मुझे अपनी लंबाई को लेकर चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं होती।

युवक: यदि आप इस दुनिया में अकेले व्यक्ति होते और कोई अन्य अस्तित्व में नहीं होता?

दार्शनिक: हाँ। मूल्य की समस्या अंततः हमें फिर से पारस्परिक संबंधों की ओर ले जाती है।

युवा: तो क्या यह उस बात से जुड़ता है जो आप कह रहे थे कि सभी समस्याएं पारस्परिक संबंधों की समस्याएं हैं?

दार्शनिक: हाँ, यह सही है।

Machine Translated by Google

हीन भावना एक बहाना है

युवक: लेकिन क्या आप पक्के तौर पर कह सकते हैं कि हीनता की भावनाएँ वाकई पारस्परिक संबंधों की समस्या हैं? यहाँ तक कि जिस व्यक्ति को सामाजिक रूप से सफल माना जाता है, जिसे दूसरों के साथ संबंधों में खुद को नीचा दिखाने की ज़रूरत नहीं होती, उसमें भी हीनता की भावनाएँ होती हैं? यहाँ तक कि वह व्यापारी जो अपार धन-संपत्ति अर्जित करता है, वह अद्वितीय सुंदरी जिससे सभी ईर्ष्या करते हैं, और ओलंपिक स्वर्ण पदक विजेता—इनमें से हर कोई हीनता की भावना से ग्रस्त होगा। खैर, मुझे तो ऐसा ही लगता है। मुझे इस बारे में कैसे सोचना चाहिए ?

दार्शनिक: एडलर मानते हैं कि हीनता की भावना हर किसी में होती है।
हीनता की भावना होना कोई बुरी बात नहीं है।

युवा: तो फिर लोग इन्हें पहले स्थान पर क्यों रखते हैं?

दार्शनिक: इसे शायद एक निश्चित क्रम में समझना ज़रूरी है। सबसे पहले, लोग इस दुनिया में असहाय प्राणी के रूप में प्रवेश करते हैं। और लोगों में उस असहाय अवस्था से बचने की सार्वभौमिक इच्छा होती है। एडलर ने इसे "श्रेष्ठता की खोज" कहा है।

युवा: श्रेष्ठता की खोज?

दार्शनिक: इसे आप बस "सुधार की उम्मीद" या "आदर्श स्थिति की तलाश" के रूप में सोच सकते हैं। उदाहरण के लिए, एक बच्चा दोनों पैरों पर खुद को स्थिर करना सीखता है।
उनमें भाषा सीखने और उसमें सुधार लाने की सार्वभौमिक इच्छा है। और मानव इतिहास में विज्ञान की सभी प्रगतियाँ भी इसी "श्रेष्ठता की खोज" के कारण हैं।

युवक: ठीक है। और फिर?

दार्शनिक: इसका प्रतिरूप हीनता की भावना है। हर कोई इस "सुधार की चाहत" में है, जो श्रेष्ठता की खोज है। कोई रुकता है

Machine Translated by Google

विभिन्न आदर्शों या लक्ष्यों को निर्धारित करता है और उनकी ओर बढ़ता है। हालाँकि, अपने आदर्शों तक न पहुँच पाने पर, व्यक्ति खुद को कमतर समझने लगता है। उदाहरण के लिए, कुछ शेफ़, जितने ज़्यादा प्रेरित और निपुण होते जाते हैं, उतने ही हमेशा हीनता की भावना से घिरे रहते हैं, जिसके कारण वे खुद से कहते हैं, " मैं अभी भी उतना अच्छा नहीं हूँ, या मुझे अपने खाना पकाने को अगले स्तर पर ले जाना है, " वगैरह।

युवक: यह सच है।

दार्शनिक: एडलर कह रहे हैं कि श्रेष्ठता की चाह और हीनता की भावना रोग नहीं, बल्कि सामान्य, स्वस्थ प्रयास और विकास के लिए प्रेरक हैं। अगर इसका गलत इस्तेमाल न किया जाए, तो हीनता की भावना भी प्रयास और विकास को बढ़ावा दे सकती है।

युवा: हीनता की भावना एक प्रकार का लांच पैड है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। व्यक्ति अपनी हीनता की भावना से मुक्त होकर आगे बढ़ने की कोशिश करता है। वह अपनी वर्तमान स्थिति से कभी संतुष्ट नहीं होता—चाहे वह एक कदम ही क्यों न हो, वह प्रगति करना चाहता है। वह अधिक खुश रहना चाहता है। इस प्रकार की हीनता की भावना में कुछ भी गलत नहीं है। हालाँकि, कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो एक कदम आगे बढ़ने का साहस खो देते हैं, जो इस तथ्य को स्वीकार नहीं कर पाते कि यथार्थवादी प्रयास करके स्थिति को बदला जा सकता है। वे लोग जो कुछ भी करने से पहले ही हार मान लेते हैं और कहते हैं, "मैं वैसे भी उतना अच्छा नहीं हूँ" या "अगर मैं कोशिश भी करूँ, तो भी मेरे पास कोई मौका नहीं होगा।"

युवा: हाँ, यह सच है। इसमें कोई शक नहीं—अगर हीनता की भावना प्रबल हो, तो ज़्यादातर लोग नकारात्मक हो जाएँगे और कहेंगे, "मैं वैसे भी काफ़ी अच्छा नहीं हूँ।" क्योंकि हीनता की भावना यही होती है।

दार्शनिक: नहीं, यह हीनता की भावना नहीं है - यह हीन भावना है।

युवक: एक जटिलता? हीनता की भावना यही तो है, है ना?

दार्शनिक: सावधान रहें। आजकल "कॉम्प्लेक्स" शब्द का प्रयोग जिस तरह से किया जाता है, उसका अर्थ "हीनता की भावना" जैसा ही लगता है। आप लोगों को कहते सुनते होंगे, "मुझे अपनी पलकों को लेकर कॉम्प्लेक्स है," या "उसे अपनी शिक्षा को लेकर कॉम्प्लेक्स है," इस तरह की बातें। यह इस शब्द का सरासर दुरुपयोग है। मूलतः, "कॉम्प्लेक्स" भावनाओं और विचारों के एक जटिल समूह से बनी एक असामान्य मानसिक स्थिति को दर्शाता है, और इसका हीनता की भावना से कोई लेना-देना नहीं है। उदाहरण के लिए, फ्रायड का ओडिपस कॉम्प्लेक्स है,

Machine Translated by Google

जिसका प्रयोग विपरीत लिंगी माता-पिता के प्रति बच्चे के असामान्य आकर्षण पर चर्चा करने के संदर्भ में किया जाता है।

युवा: हाँ। असामान्यता की बारीकियाँ विशेष रूप से तब प्रबल होती हैं जब बात माँ और पिता की जटिलता की आती है।

दार्शनिक: इसी कारण से, यह महत्वपूर्ण है कि "हीनता की भावना" और "हीन भावना" को एक साथ न मिलाया जाए, तथा उन्हें स्पष्ट रूप से अलग-अलग समझा जाए।

युवा: ठोस रूप से, वे किस प्रकार भिन्न हैं?

दार्शनिक: हीनता की भावना में कोई विशेष बुराई नहीं है।
अब आप इस बात को समझ गए होंगे, है ना? जैसा कि एडलर कहते हैं, हीनता की भावना प्रयास और विकास के लिए एक प्रेरक शक्ति हो सकती है। उदाहरण के लिए, अगर किसी को अपनी शिक्षा को लेकर हीनता का एहसास हो और वह खुद से यह संकल्प ले कि, " मैं ज़्यादा पढ़ा-लिखा नहीं हूँ, इसलिए मुझे दूसरों से ज़्यादा मेहनत करनी होगी," तो यह एक वांछनीय दिशा होगी। दूसरी ओर, हीनता की भावना, उस स्थिति को संदर्भित करती है जब कोई अपनी हीनता की भावना को एक बहाने के रूप में इस्तेमाल करने लगता है। इसलिए व्यक्ति खुद से सोचता है, " मैं ज़्यादा पढ़ा-लिखा नहीं हूँ, इसलिए मैं सफल नहीं हो सकता, या मैं दिखने में अच्छा नहीं हूँ, इसलिए मैं शादी नहीं कर सकता।" जब कोई रोज़मर्रा की ज़िंदगी में इस तरह "अ, परिस्थिति ऐसी है, इसलिए ब, नहीं किया जा सकता" के तर्क पर ज़ोर देता है, तो यह हीनता की श्रेणी में नहीं आता। यह एक हीनता की भावना है।

युवक: नहीं, यह एक वैध कारण-कार्य संबंध है। अगर आप अच्छी तरह शिक्षित नहीं हैं, तो यह आपके काम पाने या दुनिया में आगे बढ़ने के अवसरों को छीन लेता है। आपको सामाजिक स्तर पर निम्न माना जाता है, और आप सफल नहीं हो सकते। यह कोई बहाना नहीं है। यह बस एक कठोर सच्चाई है, है ना?

दार्शनिक: नहीं, आप ग़लत हैं।

युवक: कैसे? मैं कहाँ ग़लत हूँ?

दार्शनिक: जिसे आप कार्य-कारण संबंध कह रहे हैं, उसे एडलर "प्रतीत कारण और प्रभाव" के रूप में समझाते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि आप स्वयं को यह विश्वास दिलाते हैं कि कोई गंभीर कार्य-कारण संबंध है, जबकि ऐसा कुछ भी नहीं है। पिछले दिनों किसी ने मुझसे कहा, "मैं आसानी से शादी नहीं कर पाता क्योंकि मेरे माता-पिता का बचपन में ही तलाक हो गया था।" फ्रायडियन एटियलजि (विशेषण) के दृष्टिकोण से

Machine Translated by Google

कारणों के आधार पर, माता-पिता का तलाक एक बड़ा आघात था, जो विवाह के बारे में व्यक्ति के विचारों के साथ एक स्पष्ट कारण-कार्य संबंध में जुड़ता है। हालाँकि, एडलर, अपने उद्देश्य-निर्धारण (उद्देश्य का आरोपण) के दृष्टिकोण से, "प्रतीत कारण और प्रभाव" जैसे तर्कों को खारिज करते हैं।

युवक: लेकिन फिर भी, सच्चाई यह है कि अच्छी शिक्षा मिलने से समाज में सफल होना आसान हो जाता है। मैंने सोचा था कि तुम दुनियादारी के तौर-तरीकों से वाकिफ़ हो।

दार्शनिक: असली मुद्दा यह है कि उस सच्चाई का सामना कैसे किया जाए। अगर आप सोच रहे हैं कि मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ, इसलिए मैं सफल नहीं हो सकता, तो "मैं सफल नहीं हो सकता" के बजाय , आपको सोचना चाहिए कि मैं सफल नहीं होना चाहता।

युवक: मैं सफल नहीं होना चाहता? ये कैसा तर्क है?

दार्शनिक: बात बस इतनी है कि एक कदम भी आगे बढ़ना डरावना लगता है; और आप यथार्थवादी प्रयास नहीं करना चाहते। आप इतना बदलना नहीं चाहते कि आप उन सुखों का त्याग करने को तैयार हो जाएँ जिनका आप अभी आनंद लेते हैं—उदाहरण के लिए, खेलने और शौक़ में बिताया गया समय। दूसरे शब्दों में, आप अपनी जीवनशैली बदलने का साहस नहीं जुटा पा रहे हैं । चीज़ें जैसी हैं, वैसी ही रहना आसान है, भले ही आपकी कुछ शिकायतें या सीमाएँ हों।

Machine Translated by Google

डींगें हांकने वालों में हीनता की भावना होती है

युवक: शायद ऐसा हो, लेकिन. . .

दार्शनिक: और हाँ, आप शिक्षा को लेकर हीन भावना रखते हैं और सोचते हैं, " मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ, इसलिए मैं सफल नहीं हो सकता।" दूसरी तरफ़, तर्क यह हो सकता है, " काश मैं पढ़ा-लिखा होता, तो मैं सचमुच सफल हो सकता था।"

युवक: हम्म, सच है।

दार्शनिक: यह हीन भावना का दूसरा पहलू है। जो लोग अपनी हीन भावना को शब्दों या व्यवहारों में प्रकट करते हैं, जो कहते हैं कि "A ही स्थिति है, इसलिए B नहीं किया जा सकता," वे यह कह रहे होते हैं कि अगर A न होता, तो वे सक्षम होते और उनका मूल्य होता।

युवक: यदि ऐसा न होता तो मैं भी ऐसा कर सकता था।

दार्शनिक: हाँ। जैसा कि एडलर कहते हैं, कोई भी लंबे समय तक हीनता की भावना को सहन नहीं कर सकता। हीनता की भावना हर किसी में होती है, लेकिन उस स्थिति में हमेशा के लिए रहना बहुत भारी है।

युवक: हुह? यह तो बहुत उलझन भरा हो रहा है।

दार्शनिक: ठीक है, आइए एक-एक करके सभी बातों पर गौर करें। हीनता की भावना का मतलब है वर्तमान परिस्थिति में खुद में किसी तरह की कमी महसूस करना। तो फिर सवाल यह है कि—

युवक: आप उस भाग को कैसे भरेंगे जो छूट गया है, है ना?

दार्शनिक: बिल्कुल। जिस हिस्से की कमी है उसकी भरपाई कैसे करें। सबसे स्वस्थ तरीका है प्रयास और विकास के ज़रिए भरपाई करने की कोशिश करना। उदाहरण के लिए, यह इस तरह हो सकता है:

Machine Translated by Google

अपनी पढ़ाई में पूरी तरह लग जाना, लगातार प्रशिक्षण लेना, या अपने काम में लगन से जुट जाना। हालाँकि, जिन लोगों में यह साहस नहीं होता, वे अंततः हीन भावना में फँस जाते हैं। यह फिर से यही सोच है कि मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ, इसलिए मैं सफल नहीं हो सकता। और यह आपकी क्षमता को यह कहकर दर्शाता है, "काश मैं पढ़ा-लिखा होता, तो मैं सचमुच सफल हो सकता था।" वह "असली मैं", जो अभी शिक्षा के मामले में छिपा हुआ है, श्रेष्ठ है।

युवक: नहीं, इसका कोई मतलब नहीं है—आप जो दूसरी बात कह रहे हैं, वह हीनता की भावना से परे है। यह तो वाकई किसी भी चीज़ से ज़्यादा बहादुरी है, है ना?

दार्शनिक: बिल्कुल। हीन भावना एक और विशेष मानसिक स्थिति में भी विकसित हो सकती है।

युवक: और वह क्या है?

दार्शनिक: मुझे शक है कि आपने इसके बारे में ज़्यादा सुना होगा। यह "श्रेष्ठता की भावना" है।

युवा: श्रेष्ठता की भावना?

दार्शनिक: व्यक्ति हीनता की तीव्र भावना से ग्रस्त है, और उसके ऊपर, स्वस्थ प्रयासों और विकास के माध्यम से क्षतिपूर्ति करने का साहस नहीं है। ऐसा कहने के बावजूद, व्यक्ति यह सोचने की हीन भावना को बर्दाश्त नहीं कर सकता कि, " अ" स्थिति है, इसलिए "ब" नहीं किया जा सकता। वह "अपने अक्षम स्व" को स्वीकार नहीं कर सकता। उस स्थिति में, व्यक्ति किसी अन्य तरीके से क्षतिपूर्ति करने की कोशिश करने के बारे में सोचता है और कोई आसान रास्ता ढूँढ़ता है।

युवक: वह कौन सा तरीका है?

दार्शनिक: यह ऐसा व्यवहार करना है मानो कोई सचमुच श्रेष्ठ है और श्रेष्ठता की झूठी भावना में लिप्त हो जाना है।

युवा: श्रेष्ठता की बनावटी भावना?

दार्शनिक: एक जाना-पहचाना उदाहरण होगा “अधिकार देना।”

युवक: इसका क्या मतलब है?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: कोई व्यक्ति किसी शक्तिशाली व्यक्ति (मोटे तौर पर कहें तो—वह आपके स्कूल के किसी नेता से लेकर किसी प्रसिद्ध हस्ती तक, कोई भी हो सकता है) के साथ अच्छे संबंध होने का दिखावा करता है। और ऐसा करके, वह यह ज़ाहिर करता है कि वह ख़ास है।

अपने कार्य अनुभव को गलत तरीके से प्रस्तुत करना या किसी खास ब्रांड के कपड़ों के प्रति अत्यधिक निष्ठा जैसे व्यवहार अधिकार देने के ही रूप हैं, और संभवतः इनमें श्रेष्ठताबोध के पहलू भी शामिल हैं। हर मामले में, ऐसा नहीं है कि "मैं" वास्तव में श्रेष्ठ या विशिष्ट है। बात बस इतनी है कि व्यक्ति "मैं" को अधिकार से जोड़कर उसे श्रेष्ठ दिखा रहा है। संक्षेप में, यह श्रेष्ठता का एक बनावटी एहसास है।

युवक: और इसके मूल में हीनता की तीव्र भावना है?

दार्शनिक: बिल्कुल। मुझे फ़ैशन के बारे में ज़्यादा जानकारी नहीं है, लेकिन मुझे लगता है कि जो लोग अपनी सभी उंगलियों में माणिक और पन्ने वाली अंगूठियाँ पहनते हैं, उन्हें सौंदर्यबोध की बजाय हीनता की भावना से ग्रस्त समझना उचित होगा। दूसरे शब्दों में, उनमें श्रेष्ठताबोध के लक्षण होते हैं।

युवक: ठीक है।

दार्शनिक: लेकिन जो लोग उधार की ताकत के दम पर खुद को बड़ा दिखाते हैं, वे असल में दूसरों के मूल्यों के हिसाब से जी रहे होते हैं—वे दूसरों की ज़िंदगी जी रहे होते हैं। यह एक ऐसा मुद्दा है जिस पर ज़ोर देना ज़रूरी है।

युवक: तो, श्रेष्ठताबोध। यह बहुत ही दिलचस्प मनोविज्ञान है। क्या आप मुझे कोई दूसरा उदाहरण दे सकते हैं?

दार्शनिक: एक प्रकार का व्यक्ति होता है जो अपनी उपलब्धियों के बारे में शेखी बघारना पसंद करता है।
कोई ऐसा व्यक्ति जो अपने अतीत के गौरव से चिपका रहता है और हमेशा उस समय की यादें ताज़ा करता रहता है जब उसका प्रकाश सबसे तेज़ था। हो सकता है आप ऐसे कुछ लोगों को जानते हों। ऐसे सभी लोगों के बारे में कहा जा सकता है कि वे श्रेष्ठता-ग्रंथि से ग्रस्त हैं।

युवक: वह आदमी जो अपनी उपलब्धियों पर शेखी बघारता है? हाँ, यह एक अहंकारी रवैया है, लेकिन वह शेखी बघार सकता है क्योंकि वह वास्तव में श्रेष्ठ है। आप इसे श्रेष्ठता का बनावटी एहसास नहीं कह सकते।

दार्शनिक: आह, लेकिन आप ग़लत हैं। जो लोग चीज़ों के बारे में इतनी शेखी बघारते हैं, उन्हें असल में खुद पर भरोसा नहीं होता। जैसा कि एडलर साफ़ तौर पर कहते हैं, "जो शेखी बघारता है, वह सिर्फ़ हीनता की भावना से प्रेरित होता है।"

Machine Translated by Google

युवक: आप कह रहे हैं कि शेखी बघारना हीनता की उल्टी भावना है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। अगर किसी को खुद पर सचमुच भरोसा है, तो उसे शेखी बघारने की ज़रूरत महसूस नहीं होती। क्योंकि उसकी हीनता की भावना प्रबल होती है, इसलिए वह शेखी बघारता है। उसे अपनी श्रेष्ठता का और भी ज़्यादा दिखावा करने की ज़रूरत महसूस होती है। डर रहता है कि अगर वह ऐसा नहीं करेगा, तो कोई भी उसे "जैसा मैं हूँ" वैसा स्वीकार नहीं करेगा। यह एक पूरी तरह से विकसित श्रेष्ठता-ग्रंथि है।

युवा: तो यद्यपि इन शब्दों को सुनकर ऐसा लगता है कि हीन भावना और श्रेष्ठता भावना एक दूसरे के बिल्कुल विपरीत हैं, परन्तु वास्तव में ये दोनों एक दूसरे की सीमा पर हैं?

दार्शनिक: हाँ, ये दोनों स्पष्ट रूप से जुड़े हुए हैं। अब, मैं एक आखिरी उदाहरण देना चाहूँगा, एक जटिल उदाहरण जो शेखी बघारने से जुड़ा है। यह एक ऐसा पैटर्न है जो श्रेष्ठता की एक खास भावना को जन्म देता है, जो हीनता की भावना के तीव्र होने के कारण प्रकट होती है। सीधे शब्दों में कहें तो, यह अपने दुर्भाग्य का बखान करना है।

युवक: अपने दुर्भाग्य के बारे में शेखी बघारना?

दार्शनिक: वह व्यक्ति जो अपनी परवरिश और उस पर आई विपत्तियों के बारे में बात करते समय शेखी बघारता है। अगर कोई उसे दिलासा देने की कोशिश करे, या कोई बदलाव लाने का सुझाव दे, तो वह यह कहकर मदद करने से इनकार कर देगा, "तुम समझ नहीं पा रहे हो कि मैं कैसा महसूस कर रहा हूँ।"

युवक: हां, ऐसे लोग तो होते हैं, लेकिन...

दार्शनिक: ऐसे लोग अपने दुर्भाग्य के अनुभवों के ज़रिए खुद को "ख़ास" बनाने की कोशिश करते हैं, और अपने दुर्भाग्य के एक ही तथ्य के सहारे ख़ुद को दूसरों से ऊपर दिखाने की कोशिश करते हैं। मिसाल के तौर पर, इस बात को ही लीजिए कि मैं छोटा हूँ। मान लीजिए कि दयालु लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं, "इसमें चिंता की कोई बात नहीं है," या "ऐसी बातों का मानवीय मूल्यों से कोई लेना-देना नहीं है।" अब, अगर मैं उन्हें मना कर दूँ और कहूँ, "तुम्हें लगता है कि तुम जानते हो कि छोटे लोग क्या झेलते हैं, है ना?" तो कोई भी मुझसे कुछ नहीं कहेगा। मुझे यकीन है कि मेरे आस-पास के सभी लोग मेरे साथ ऐसे व्यवहार करने लगेंगे जैसे मैं कोई फटने वाला फोड़ा हूँ और मुझे बहुत सावधानी से—या यूँ कहूँ, सावधानी से—संभालेंगे।

युवक: बिल्कुल सच है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: ऐसा करने से मेरी स्थिति दूसरों से बेहतर हो जाती है, और मैं ख़ास बन सकता हूँ। बहुत से लोग बीमार या घायल होने पर, या दिल टूटने की मानसिक पीड़ा से गुज़रते समय इस तरह का रवैया अपनाकर "ख़ास" बनने की कोशिश करते हैं।

युवा: तो क्या वे अपनी हीनता की भावना को प्रकट करते हैं और उसका अपने लाभ के लिए उपयोग करते हैं?

दार्शनिक: हाँ। वे अपने दुर्भाग्य का अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करते हैं और उससे दूसरे पक्ष को नियंत्रित करने की कोशिश करते हैं। यह बताकर कि वे कितने दुर्भाग्यशाली हैं और उन्होंने कितना कष्ट सहा है, वे अपने आस-पास के लोगों (उदाहरण के लिए, अपने परिवार और दोस्तों) को चिंतित करने, उनकी वाणी और व्यवहार पर अंकुश लगाने और उन्हें नियंत्रित करने की कोशिश कर रहे हैं। जिन लोगों के बारे में मैं शुरुआत में बात कर रहा था, वे अपने कमरों में बंद रहते हैं, अक्सर श्रेष्ठता की भावना में लिप्त रहते हैं और दुर्भाग्य का अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करते हैं। इतना कि एडलर ने खुद कहा था, "हमारी संस्कृति में कमजोरी काफी मजबूत और शक्तिशाली हो सकती है।"

युवक: तो क्या कमजोरी शक्तिशाली है?

दार्शनिक: एडलर कहते हैं, "दरअसल, अगर हम खुद से पूछें कि हमारी संस्कृति में सबसे ताकतवर व्यक्ति कौन है, तो तार्किक जवाब होगा, शिशु। शिशु शासन करता है और उस पर कोई हावी नहीं हो सकता।" शिशु अपनी कमज़ोरी से बड़ों पर शासन करता है। और इसी कमज़ोरी की वजह से कोई भी उसे नियंत्रित नहीं कर सकता।

युवक: मैंने कभी इस दृष्टिकोण का सामना नहीं किया।

दार्शनिक: बेशक, जिस व्यक्ति को ठेस पहुँची है, उसके ये शब्द—“तुम नहीं समझते कि मैं कैसा महसूस कर रहा हूँ”—कुछ हद तक सच ज़रूर होंगे। पीड़ित व्यक्ति की भावनाओं को पूरी तरह समझना कोई भी नहीं कर सकता। लेकिन जब तक कोई अपनी बदकिस्मती का इस्तेमाल "ख़ास" बनने के लिए अपने फ़ायदे के लिए करता रहेगा, तब तक उसे उस बदकिस्मती की ज़रूरत हमेशा रहेगी।

युवा और दार्शनिक ने अब चर्चा के कई विषयों पर चर्चा की थी: हीनता की भावना, हीन भावना और श्रेष्ठता भावना।

हालाँकि ये मनोविज्ञान के मुख्य शब्द थे, लेकिन उनमें निहित सत्य युवक के कल्पित अर्थों से बहुत भिन्न थे। फिर भी, कुछ समझ नहीं आया।

Machine Translated by Google

किसी तरह, उसे सही। इस सब में ऐसा क्या है जो मुझे स्वीकार करने में मुश्किल हो रही है? खैर, शायद यह परिचयात्मक भाग, यानी आधार, ही है जो मुझे संदेह में डाल रहा है। युवक ने शांति से बोलने के लिए अपना मुँह खोला।

Machine Translated by Google

जीवन कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है

युवक: लेकिन मुझे लगता है कि मैं अभी भी इसे पूरी तरह समझ नहीं पाया हूं।

दार्शनिक: ठीक है, जो चाहो पूछो।

युवा: एडलर मानते हैं कि श्रेष्ठता की चाहत—और खुद को और श्रेष्ठ बनाने की कोशिश—एक सार्वभौमिक इच्छा है, है ना? दूसरी ओर, वे हीनता और श्रेष्ठता की अतिशय भावनाओं के बारे में चेतावनी दे रहे हैं। अगर वे श्रेष्ठता की चाहत को त्याग सकें, तो यह समझना आसान होगा—तब मैं इसे स्वीकार कर सकता हूँ। हमें क्या करना चाहिए?

दार्शनिक: इस बारे में इस तरह सोचें। जब हम श्रेष्ठता की चाहत की बात करते हैं, तो एक प्रवृत्ति इसे दूसरों से श्रेष्ठ बनने की चाहत के रूप में देखने की होती है; ऊँचा चढ़ने की, भले ही इसका मतलब दूसरों को नीचे गिराना ही क्यों न हो—आप जानते हैं, ऊपर पहुँचने के लिए सीढ़ियाँ चढ़कर लोगों को रास्ते से हटाने की छवि। बेशक, एडलर ऐसे नज़रिए का समर्थन नहीं करते। बल्कि, वह कह रहे हैं कि समान स्तर के खेल के मैदान पर, कुछ लोग आगे बढ़ रहे हैं, और कुछ लोग उनके पीछे आगे बढ़ रहे हैं। उस छवि को ध्यान में रखें। हालाँकि तय की गई दूरी और चलने की गति अलग-अलग होती है, फिर भी हर कोई एक ही समतल जगह पर समान रूप से चल रहा है। श्रेष्ठता की चाहत अपने पैरों पर एक कदम आगे बढ़ने की मानसिकता है, न कि उस तरह की प्रतिस्पर्धा की मानसिकता जो दूसरों से बड़ा बनने का लक्ष्य रखती है।

युवक: तो क्या जीवन कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। किसी से प्रतिस्पर्धा किए बिना, बस आगे बढ़ते रहना ही काफी है। और हाँ, दूसरों से अपनी तुलना करने की भी कोई ज़रूरत नहीं है।

Machine Translated by Google

युवक: नहीं, यह नामुमकिन है। हम हमेशा अपनी तुलना दूसरों से करेंगे, चाहे कुछ भी हो जाए। यहीं से हमारी हीनता की भावना आती है, है ना?

दार्शनिक: हीनता की स्वस्थ भावना कोई ऐसी चीज नहीं है जो स्वयं की दूसरों से तुलना करने से आती है; यह अपने आदर्श स्वयं के साथ तुलना करने से आती है।

युवक: लेकिन...

दार्शनिक: देखो, हम सब अलग-अलग हैं। लिंग, उम्र, ज्ञान, अनुभव, रूप-रंग—हममें से कोई भी दो लोग बिल्कुल एक जैसे नहीं हैं। आइए इस बात को सकारात्मक रूप से स्वीकार करें कि दूसरे लोग हमसे अलग हैं। और हम एक जैसे नहीं हैं, बल्कि बराबर हैं।

युवा: हम एक जैसे नहीं हैं, लेकिन हम बराबर हैं?

दार्शनिक: बिलकुल सही। हर कोई अलग है। इस अंतर को अच्छे-बुरे, श्रेष्ठ-हीन के साथ मत मिलाओ। हमारे बीच चाहे जितने भी अंतर हों, हम सब बराबर हैं।

युवक: लोगों के लिए पद का कोई भेद नहीं। आदर्शवादी तौर पर, मुझे लगता है कि ऐसा ही है। लेकिन क्या हम अब वास्तविकता पर ईमानदारी से चर्चा करने की कोशिश नहीं कर रहे हैं? क्या आप सचमुच कहेंगे, उदाहरण के लिए, कि मैं, एक वयस्क, और एक बच्चा जो अभी भी अंकगणित में संघर्ष कर रहा है, बराबर हैं?

दार्शनिक: ज्ञान और अनुभव की मात्रा, और फिर ली जा सकने वाली ज़िम्मेदारी की मात्रा के संदर्भ में, अंतर तो होना ही चाहिए। हो सकता है कि बच्चा अपने जूते ठीक से न बाँध पाए, या जटिल गणितीय समीकरण न समझ पाए, या समस्या आने पर वयस्कों जितनी ज़िम्मेदारी न ले पाए। हालाँकि, ऐसी बातों का मानवीय मूल्यों से कोई लेना-देना नहीं होना चाहिए। मेरा जवाब भी यही है। सभी मनुष्य समान हैं, लेकिन एक जैसे नहीं।

युवक: तो क्या आप यह कह रहे हैं कि एक बच्चे के साथ एक पूर्ण विकसित वयस्क की तरह व्यवहार किया जाना चाहिए?

दार्शनिक: नहीं। बच्चे के साथ बड़ों जैसा या बच्चे जैसा व्यवहार करने के बजाय, उसे एक इंसान की तरह व्यवहार करना चाहिए। बच्चे के साथ पूरी ईमानदारी से, अपने जैसा ही एक इंसान बनकर व्यवहार करना चाहिए।

Machine Translated by Google

युवा: चलिए सवाल बदलते हैं। सभी लोग समान हैं। वे समान स्तर पर हैं। लेकिन असल में, यहाँ असमानता है, है ना? जो आगे बढ़ते हैं वे श्रेष्ठ हैं, और जो पीछे से उनका पीछा करते हैं वे हीन हैं। तो हम श्रेष्ठ और हीन की समस्या पर पहुँच जाते हैं, है ना?

दार्शनिक: नहीं, हम ऐसा नहीं करते। इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि कोई दूसरों के आगे चलने की कोशिश कर रहा है या उनके पीछे। यह ऐसा है मानो हम एक समतल जगह में चल रहे हैं जिसका कोई ऊर्ध्वाधर अक्ष नहीं है। हम किसी से प्रतिस्पर्धा करने के लिए नहीं चलते। जो हम अभी हैं उससे आगे बढ़ने की कोशिश में ही मूल्य है।

युवक: क्या आप सभी प्रकार की प्रतिस्पर्धा से मुक्त हो गये हैं?

दार्शनिक: बिल्कुल। मैं पद या सम्मान पाने के बारे में नहीं सोचता, और मैं सांसारिक प्रतिस्पर्धा से दूर, एक बाहरी दार्शनिक की तरह अपना जीवन जीता हूँ।

युवा: क्या इसका मतलब यह है कि आप प्रतियोगिता से बाहर हो गए? या आपने किसी तरह हार मान ली?

दार्शनिक: नहीं। मैं उन स्थानों से दूर चला गया जहां जीत और हार का खेल खेला जाता है।
जब कोई व्यक्ति स्वयं बनने का प्रयास करता है, तो प्रतिस्पर्धा अवश्यंभावी रूप से उसके रास्ते में आ जाती है।

युवा: बिल्कुल नहीं! यह एक थके हुए बुज़ुर्ग का तर्क है। मेरे जैसे युवाओं को प्रतिस्पर्धा के तनाव में खुद को ऊपर खींचना पड़ता है। क्योंकि मेरे साथ कोई प्रतिद्वंद्वी नहीं है, इसलिए मैं खुद से आगे नहीं निकल सकता। पारस्परिक संबंधों को प्रतिस्पर्धात्मक समझने में क्या बुराई है?

दार्शनिक: अगर वह प्रतिद्वंद्वी कोई ऐसा व्यक्ति होता जिसे आप अपना साथी कह सकते, तो संभव है कि इससे आत्म-सुधार होता। लेकिन कई मामलों में, कोई प्रतियोगी आपका साथी नहीं होता।

युवक: वास्तव में इसका क्या मतलब है?

Machine Translated by Google

आप ही एकमात्र व्यक्ति हैं जो अपने रूप-रंग के बारे में चिंतित हैं

दार्शनिक: चलिए, अब उलझे हुए मुद्दों को सुलझाते हैं। शुरुआत में, आपने एडलर की इस परिभाषा पर असंतोष जताया था कि सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं, है ना?
यही हीनता की भावना पर हमारी चर्चा का आधार था।

युवक: हाँ, यह सही है। हीनता की भावना का विषय बहुत गहरा था, और मैं उसे भूलने ही वाला था। आपने यह विषय ही क्यों उठाया?

दार्शनिक: यह प्रतिस्पर्धा के विषय से जुड़ा है। कृपया इसे याद रखें। अगर किसी व्यक्ति के पारस्परिक संबंधों के मूल में प्रतिस्पर्धा है, तो वह पारस्परिक संबंधों की समस्याओं या दुर्भाग्य से बच नहीं पाएगा।

युवक: क्यों नहीं?

दार्शनिक: क्योंकि प्रतियोगिता के अंत में विजेता और हारने वाले होते हैं।

युवा: विजेता और हारने वाले होना बिल्कुल ठीक है!

दार्शनिक: ज़रा सोचिए, अगर आप ही होते, तो अपने आस-पास के लोगों से प्रतिस्पर्धा करने का एहसास होता। उनके साथ अपने रिश्तों में, आपके पास जीत या हार के एहसास के अलावा कोई चारा नहीं होता। मिस्टर 'ए' को इस मशहूर यूनिवर्सिटी में दाखिला मिल गया, मिस्टर 'बी' को उस बड़ी कंपनी में नौकरी मिल गई, और मिस्टर 'सी' का रिश्ता एक बहुत ही खूबसूरत महिला से हो गया—और आप अपनी तुलना उनसे करेंगे और सोचेंगे, " मेरे पास तो बस यही है।"

युवक: हा-हा। यह तो बहुत सटीक बात है।

दार्शनिक: जब कोई प्रतिस्पर्धा और जीत-हार के प्रति सचेत होता है, तो हीनता की भावनाएँ पैदा होना स्वाभाविक है। क्योंकि व्यक्ति लगातार तुलना करता रहता है।

Machine Translated by Google

खुद को दूसरों के सामने पेश करना और यह सोचना कि मैंने उस व्यक्ति को हरा दिया या मैं उससे हार गया। हीन भावना और श्रेष्ठता भावना इसी का विस्तार हैं। अब, उस समय आपको क्या लगता है कि दूसरा व्यक्ति आपके लिए कैसा है?

युवक: मुझे नहीं पता - शायद कोई प्रतिद्वन्द्वी?

दार्शनिक: नहीं, कोई साधारण प्रतिद्वंद्वी नहीं। पता ही नहीं चलता कि आप दुनिया के हर इंसान को, हर किसी को अपना दुश्मन समझने लगते हैं।

युवक: मेरा दुश्मन?

दार्शनिक: आपको लगने लगता है कि लोग हमेशा आपको नीची नज़र से देखते हैं और आपका तिरस्कार करते हैं, कि वे सब दुश्मन हैं जिन्हें कभी कम नहीं आँका जाना चाहिए, जो किसी भी मौके की ताक में रहते हैं और पल भर में हमला कर देते हैं। संक्षेप में, दुनिया एक डरावनी जगह है।

युवा: शत्रु जिन्हें कभी कम नहीं आंकना चाहिए.. . तो फिर मेरा मुकाबला किससे है?

दार्शनिक: प्रतिस्पर्धा में यही सबसे ज़्यादा भयावह है। भले ही आप हारे हुए न हों, भले ही आप लगातार जीतते रहें, अगर आप खुद को प्रतिस्पर्धा में डाल चुके हैं, तो आपको एक पल की भी शांति नहीं मिलेगी। आप हारना नहीं चाहते। और अगर आप हारना नहीं चाहते, तो आपको हमेशा जीतते रहना होगा। आप दूसरों पर भरोसा नहीं कर सकते। समाज की नज़रों में अपनी सफलता का परचम लहराते हुए भी बहुत से लोग खुश नहीं रहते, इसकी वजह यह है कि वे प्रतिस्पर्धा में जी रहे हैं। क्योंकि उनके लिए, दुनिया एक खतरनाक जगह है जो दुश्मनों से भरी पड़ी है।

युवक: मुझे ऐसा लगता है, लेकिन. . .

दार्शनिक: लेकिन क्या दूसरे लोग सचमुच आपको इतना देखते हैं? क्या वे सचमुच चौबीसों घंटे आप पर नज़र रखते हैं और हमला करने के लिए सही मौके का इंतज़ार करते हैं? यह नामुमकिन सा लगता है। मेरा एक युवा दोस्त, जब वह किशोर था, तो शीशे के सामने अपने बाल संवारने में बहुत समय बिताता था। और एक बार, जब वह ऐसा कर रहा था, तो उसकी दादी ने कहा, "तुम ही हो जो अपने दिखने की चिंता करते हो।" वह कहता है कि उसके बाद उसके लिए ज़िंदगी से निपटना थोड़ा आसान हो गया।

Machine Translated by Google

युवक: अरे, ये तो मुझ पर कटाक्ष है, है ना? हाँ, हो सकता है मैं अपने आस-पास के लोगों को दुश्मन समझता हूँ। मुझे हमेशा डर लगा रहता है कि कहीं मुझ पर हमला न हो जाए, उन तीरों से जो कभी भी मुझ पर वार कर सकते हैं। मुझे हमेशा लगता है कि दूसरे लोग मुझे देख रहे हैं, मुझे कठोर न्याय दिया जा रहा है, और मुझ पर हमला होने वाला है। और शायद ये सच भी है कि ये एक आत्म-चेतन प्रतिक्रिया है, बिल्कुल उस आईने के दीवाने किशोर की तरह। दुनिया के लोग मेरी तरफ़ ध्यान नहीं दे रहे हैं। अगर मैं सड़क पर हाथों के बल भी चलूँ, तो भी उनका ध्यान नहीं जाएगा! पर मुझे नहीं पता। आख़िरकार, क्या आप ये कह रहे हैं कि मेरी हीनता की भावना एक ऐसी चीज़ है जिसे मैंने चुना है, जिसका कोई न कोई लक्ष्य है?

मुझे तो इसका कोई मतलब ही नहीं समझ आता।

दार्शनिक: और ऐसा क्यों?

युवा: मेरा एक भाई है जो मुझसे तीन साल बड़ा है। वह बड़े भाई की पारंपरिक छवि में बिल्कुल फिट बैठता है—वह हमेशा वही करता है जो हमारे माता-पिता कहते हैं, वह पढ़ाई और खेलकूद में अव्वल रहता है, और वह मेहनती इंसान है। और जब मैं छोटा था, तब से ही मेरी तुलना हमेशा उससे की जाती थी। वह मुझसे बड़ा है और ज़्यादा उन्नत है, इसलिए ज़ाहिर है कि मैं उसे किसी भी चीज़ में कभी नहीं हरा सकता था। हमारे माता-पिता को ऐसी परिस्थितियों की बिल्कुल भी परवाह नहीं थी, और उन्होंने मुझे कभी कोई पहचान भी नहीं दी। मैं जो भी करता, मेरे साथ बच्चों जैसा व्यवहार होता, और हर मौके पर मुझे डाँटा जाता और चुप रहने को कहा जाता। मैंने अपनी भावनाओं को अपने तक ही रखना सीख लिया। मैंने अपना जीवन पूरी तरह से हीनता की भावना में डूबा हुआ बिताया है, और मेरे पास अपने भाई से प्रतिस्पर्धा करने के प्रति सचेत रहने के अलावा कोई विकल्प नहीं था!

दार्शनिक: मैं समझ गया।

युवा: कभी-कभी मैं इसके बारे में ऐसे सोचता हूँ: मैं उस लौकी की तरह हूँ जो बिना पर्याप्त धूप के ही बड़ी हो गई। इसलिए स्वाभाविक है कि मैं हीनता की भावना से ग्रस्त हूँ। अगर कोई ऐसा है जो ऐसी स्थिति में भी सीधा बढ़ सकता है, तो मैं उससे मिलना चाहूँगा!

दार्शनिक: मैं समझता हूँ। मैं सचमुच समझता हूँ कि आप कैसा महसूस करते हैं। अब, आइए अपने भाई के साथ अपने रिश्ते को ध्यान में रखते हुए "प्रतिस्पर्धा" पर विचार करें। अगर आप अपने भाई और अपने अन्य पारस्परिक संबंधों के संबंध में प्रतिस्पर्धा की दृष्टि से नहीं सोचते, तो लोग आपको कैसे लगते?

युवक: खैर, मेरा भाई मेरा भाई है, और मुझे लगता है कि अन्य लोग एक अलग कहानी हैं।

दार्शनिक: नहीं, उन्हें और अधिक सकारात्मक साथी बनना चाहिए।

Machine Translated by Google

युवक: साथियों?

दार्शनिक: क्या आपने पहले नहीं कहा था, "मैं दूसरों की खुशियों का पूरे दिल से जश्न नहीं मना सकता?" आप पारस्परिक संबंधों को प्रतिस्पर्धा समझते हैं; आप दूसरों की खुशी को "अपनी हार" समझते हैं, और इसीलिए आप उसका जश्न नहीं मना पाते। हालाँकि, एक बार जब आप प्रतिस्पर्धा की इस भावना से मुक्त हो जाते हैं, तो किसी पर विजय पाने की चाहत गायब हो जाती है। आप उस डर से भी मुक्त हो जाते हैं जो कहता है, " शायद मैं हार जाऊँगा।"

और वह दूसरों की खुशियों का पूरे दिल से जश्न मनाने में सक्षम हो जाता है। वह दूसरों की खुशियों में सक्रिय रूप से योगदान देने में सक्षम हो जाता है। वह व्यक्ति जो ज़रूरत के समय हमेशा दूसरों की मदद करने की इच्छा रखता है—उसे ही आपका साथी कहा जा सकता है।

युवक: हम्म.

दार्शनिक: अब हम महत्वपूर्ण बात पर आते हैं। जब आप सचमुच यह महसूस कर पाएँगे कि "लोग मेरे साथी हैं", तो दुनिया को देखने का आपका नज़रिया पूरी तरह बदल जाएगा। अब आप दुनिया को एक ख़तरनाक जगह नहीं समझेंगे, या बेवजह की शंकाओं से ग्रस्त नहीं होंगे; दुनिया आपके सामने एक सुरक्षित और सुखद जगह के रूप में दिखाई देगी। और आपके पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ नाटकीय रूप से कम हो जाएँगी।

युवक: तुम कितने खुशमिजाज़ इंसान हो! लेकिन जानते हो, ये सब सूरजमुखी जैसा है। ये सूरजमुखी का तर्क है जिसे रोज़ाना पूरी धूप में नहलाया जाता है और खूब पानी दिया जाता है। मंद छाया में उगने वाला लौकी इतना अच्छा नहीं होता!

दार्शनिक: आप पुनः एटिओलॉजी (कारणों का निर्धारण) पर लौट रहे हैं।

युवक: ओह, हाँ, मैं निश्चित रूप से हूँ!

सख्त माता-पिता द्वारा पाले गए इस युवक को बचपन से ही प्रताड़ित किया जाता था और उसकी तुलना उसके बड़े भाई से की जाती थी। उसकी कोई भी राय कभी नहीं सुनी जाती थी, और उसे यह कहकर ताना मारा जाता था कि वह एक छोटे भाई के लिए एक घटिया बहाना है। स्कूल में भी दोस्त न बना पाने के कारण, वह अपना सारा खाली समय अकेले पुस्तकालय में बिताता था, जो उसकी एकमात्र शरणस्थली बन गई थी। इस युवक ने, जिसने अपने शुरुआती साल इसी तरह बिताए थे, वास्तव में एटियलजि का निवासी था। अगर वह

Machine Translated by Google

अगर वह बड़ा भाई न होता और अगर वह उस स्कूल में न गया होता, तो शायद उसकी ज़िंदगी उन माँ-बाप ने न पाली होती, और शायद वह ज़्यादा खुशहाल होता। वह युवक जितना हो सके, शांत मन से इस चर्चा में हिस्सा लेने की कोशिश कर रहा था, लेकिन अब उसके बरसों के दबे हुए जज़्बात फूट पड़े।

Machine Translated by Google

सत्ता संघर्ष से बदला लेने तक

युवा: ठीक है, उद्देश्यवाद वगैरह की ये सारी बातें शुद्ध कुतर्क हैं, और आघात निश्चित रूप से मौजूद हैं। और लोग अतीत से मुक्त नहीं हो सकते। क्या आपको इसका एहसास है? हम टाइम मशीन में अतीत में वापस नहीं जा सकते। जब तक अतीत अतीत के रूप में मौजूद है, हम अतीत के संदर्भों में जीते हैं। अगर कोई अतीत को ऐसी चीज़ समझे जो अस्तित्व में नहीं है, तो यह अपने पूरे जीवन को नकारने के समान होगा। क्या आप यह सुझाव दे रहे हैं कि मैं ऐसा गैर-ज़िम्मेदाराना जीवन चुनूँ?

दार्शनिक: यह सच है कि कोई टाइम मशीन इस्तेमाल नहीं कर सकता या समय को पीछे नहीं घुमा सकता। लेकिन अतीत की घटनाओं को किस तरह का अर्थ दिया जाए? यह वह काम है जो "अभी तुम्हें" दिया गया है।

युवा: ठीक है, तो चलिए "अभी" की बात करते हैं। पिछली बार आपने कहा था कि लोग क्रोध की भावनाएँ गढ़ते हैं, है ना? और यही उद्देश्यवाद का दृष्टिकोण है। मैं अभी भी इस कथन को स्वीकार नहीं कर पा रहा हूँ। उदाहरण के लिए, आप समाज के प्रति क्रोध या सरकार के प्रति क्रोध के उदाहरणों को कैसे समझाएँगे? क्या आप कहेंगे कि ये भी अपनी राय थोपने के लिए गढ़ी गई भावनाएँ हैं?

दार्शनिक: निश्चित रूप से, कई बार सामाजिक समस्याओं को लेकर मुझे आक्रोश होता है। लेकिन मैं कहूँगा कि यह अचानक भड़की भावनाओं के बजाय तर्क पर आधारित आक्रोश है। व्यक्तिगत क्रोध (व्यक्तिगत द्वेष) और समाज के विरोधाभासों और अन्यायों के प्रति आक्रोश (धार्मिक आक्रोश) में अंतर है। व्यक्तिगत क्रोध जल्दी शांत हो जाता है। दूसरी ओर, धार्मिक आक्रोश लंबे समय तक बना रहता है। व्यक्तिगत द्वेष की अभिव्यक्ति के रूप में क्रोध, दूसरों को अपने अधीन करने का एक साधन मात्र है।

युवक: आप कहते हैं कि व्यक्तिगत द्वेष और धार्मिक आक्रोश अलग-अलग हैं?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: ये बिलकुल अलग हैं। क्योंकि धार्मिक क्रोध व्यक्ति के अपने हितों से परे होता है।

युवक: तो फिर मैं निजी रंजिशों के बारे में पूछूँगा। आपको भी कभी-कभी गुस्सा आता होगा—जैसे, अगर कोई बिना किसी खास वजह के आपको गाली दे—तो नहीं आता?

दार्शनिक: नहीं, मुझे नहीं मालूम।

युवक: चलो, ईमानदार बनो।

दार्शनिक: अगर कोई मेरे मुँह पर मुझे गाली दे, तो मैं उसके छिपे हुए मकसद के बारे में सोचूँगा। भले ही आप सीधे तौर पर गाली न दे रहे हों, लेकिन जब आपको किसी दूसरे व्यक्ति के शब्दों या व्यवहार से सचमुच गुस्सा आता है, तो कृपया यह मान लीजिए कि वह व्यक्ति आपको सत्ता संघर्ष के लिए चुनौती दे रहा है।

युवा: सत्ता संघर्ष?

दार्शनिक: उदाहरण के लिए, एक बच्चा किसी वयस्क को तरह-तरह की शरारतों और बदतमीज़ी से चिढ़ाता है। कई मामलों में, ऐसा ध्यान आकर्षित करने के लिए किया जाता है और वयस्क के सचमुच गुस्सा होने से ठीक पहले वह ऐसा करना बंद कर देता है। हालाँकि, अगर बच्चा वयस्क के सचमुच गुस्सा होने से पहले ऐसा करना बंद नहीं करता, तो उसका असल मकसद झगड़ा करना होता है।

युवक: वह लड़ाई में क्यों पड़ना चाहेगा?

दार्शनिक: वह जीतना चाहता है। वह जीतकर अपनी ताकत साबित करना चाहता है।

युवक: मुझे समझ नहीं आ रहा। क्या आप मुझे कुछ ठोस उदाहरण दे सकते हैं?

दार्शनिक: मान लीजिए आप और आपका दोस्त मौजूदा राजनीतिक हालात पर चर्चा कर रहे हैं। देखते ही देखते यह बहस गरमागरम बहस में बदल जाती है, और आप दोनों में से कोई भी मतभेद स्वीकार करने को तैयार नहीं होता, आखिरकार बात उस मुकाम पर पहुँच जाती है जहाँ वह व्यक्तिगत हमले करने लगता है—कि तुम मूर्ख हो, और तुम्हारे जैसे लोगों की वजह से ही यह देश नहीं बदलता, वगैरह-वगैरह।

युवक: लेकिन अगर कोई मुझसे ऐसा कहे तो मैं बर्दाश्त नहीं कर पाऊंगा।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: इस मामले में, दूसरे व्यक्ति का उद्देश्य क्या है? क्या सिर्फ़ यही कि वह राजनीति पर चर्चा करना चाहता है? नहीं, ऐसा नहीं है। बात यह है कि वह आपको असहनीय पाता है, और वह आपकी आलोचना करना, आपको उकसाना और सत्ता संघर्ष के ज़रिए आपको झुकाना चाहता है। अगर आप इस समय क्रोधित हो जाते हैं, तो वह क्षण आ जाएगा जिसका वह इंतज़ार कर रहा था, और रिश्ता अचानक सत्ता संघर्ष में बदल जाएगा। चाहे कोई भी उकसावा हो, आपको उसके बहकावे में नहीं आना चाहिए।

युवक: नहीं, इससे भागने की कोई ज़रूरत नहीं है। अगर कोई झगड़ा शुरू करना चाहता है, तो उसे स्वीकार कर लेना ठीक है। क्योंकि गलती तो वैसे भी दूसरे की ही है। आप उस बेवकूफ़ की नाक में दम कर सकते हैं। यानी शब्दों से।

दार्शनिक: अब मान लीजिए कि आप झगड़े पर कब्ज़ा कर लेते हैं। और फिर दूसरा आदमी, जो आपको हराना चाहता था, खेल भावना से पीछे हट जाता है। बात यह है कि सत्ता का संघर्ष यहीं खत्म नहीं होता। झगड़ा हारकर, वह अगले चरण की ओर भागता है।

युवा: अगला चरण?

दार्शनिक: हाँ। यह बदला लेने का दौर है। हालाँकि वह फिलहाल पीछे हट गया है, लेकिन वह किसी और जगह और किसी और रूप में बदला लेने की योजना बनाएगा और बदले की कार्रवाई के साथ फिर से प्रकट होगा।

युवा: उदाहरण के लिए, क्या?

दार्शनिक: माता-पिता द्वारा प्रताड़ित बच्चा अपराधी प्रवृत्ति की ओर अग्रसर होगा। वह स्कूल जाना बंद कर देगा। वह अपनी कलाई काट लेगा या आत्म-क्षति के अन्य कृत्यों में संलग्न हो जाएगा। फ्रायडियन एटियलजि में, इसे सरल कारण और प्रभाव माना जाता है: माता-पिता ने बच्चे का पालन-पोषण इस तरह किया, और इसीलिए बच्चा बड़ा होकर ऐसा बना। यह ठीक वैसा ही है जैसे किसी पौधे को पानी न दिया गया हो, इसलिए वह मुरझा गया। यह एक ऐसी व्याख्या है जिसे समझना निश्चित रूप से आसान है। लेकिन एडलरियन उद्देश्यवाद उस लक्ष्य से आँखें नहीं मूंदता जिसे बच्चा छिपा रहा है। यानी, माता-पिता से बदला लेने का लक्ष्य। अगर वह अपराधी बन जाता है, स्कूल जाना बंद कर देता है, अपनी कलाई काट लेता है, या ऐसा ही कुछ करता है, तो माता-पिता परेशान हो जाएँगे। वे घबरा जाएँगे और उसके लिए चिंता करने लगेंगे। यह जानते हुए कि ऐसा होगा, बच्चा समस्याग्रस्त व्यवहार में लिप्त हो जाता है। ताकि वर्तमान लक्ष्य (माता-पिता से बदला) पूरा हो सके, न कि इसलिए कि वह पिछले कारणों (घर के माहौल) से प्रेरित है।

Machine Translated by Google

युवक: क्या वह अपने माता-पिता को परेशान करने के लिए समस्याग्रस्त व्यवहार करता है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। शायद बहुत से लोग किसी बच्चे को अपनी कलाई काटते देखकर हैरान हो जाते हैं और सोचते हैं, " उसने ऐसा क्यों किया?" लेकिन ज़रा सोचिए कि बच्चे के आस-पास के लोग—जैसे उसके माता-पिता—उसकी कलाई काटने की आदत से कैसा महसूस करेंगे। अगर आप ऐसा करेंगे, तो उस हरकत के पीछे का मकसद खुद-ब-खुद सामने आ जाएगा।

युवक: क्या इसका लक्ष्य बदला लेना है?

दार्शनिक: हाँ। और एक बार जब पारस्परिक संबंध बदले की भावना तक पहुँच जाते हैं, तो किसी भी पक्ष के लिए समाधान ढूँढ़ना लगभग असंभव हो जाता है। ऐसा न हो, इसके लिए, जब किसी को सत्ता संघर्ष की चुनौती दी जाए, तो उसे कभी भी खुद को उसके प्रभाव में नहीं आने देना चाहिए।

Machine Translated by Google

गलती स्वीकार करना हार नहीं है

युवक: अच्छा, तो जब आपके सामने ही कोई निजी हमला करे, तो आपको क्या करना चाहिए? क्या आप बस मुस्कुराकर सह लेते हैं?

दार्शनिक: नहीं, यह सोचना कि आप "सह रहे हैं" इस बात का सबूत है कि आप अभी भी सत्ता संघर्ष में फँसे हुए हैं। जब आपको किसी लड़ाई के लिए चुनौती दी जाए, और आपको लगे कि यह सत्ता संघर्ष है, तो जितनी जल्दी हो सके संघर्ष से हट जाएँ। उसकी कार्रवाई का जवाब प्रतिक्रिया से न दें। यही एकमात्र चीज़ है जो हम कर सकते हैं।

युवक: लेकिन क्या उकसावे पर प्रतिक्रिया न देना वाकई इतना आसान है? सबसे पहले, आप कहेंगे कि मुझे अपने गुस्से पर कैसे काबू पाना चाहिए?

दार्शनिक: जब आप अपने गुस्से पर काबू पाते हैं, तो आप उसे "सह" रहे होते हैं, है ना? इसके बजाय, आइए बिना गुस्से के भावनाओं का इस्तेमाल किए, चीज़ों को सुलझाने का तरीका सीखें। क्योंकि आख़िरकार, गुस्सा एक औज़ार है। लक्ष्य पाने का एक ज़रिया।

युवक: यह तो कठिन प्रश्न है।

दार्शनिक: पहली बात जो मैं आपको यहाँ समझाना चाहता हूँ, वह यह है कि क्रोध संचार का एक रूप है, और यह संचार क्रोध के बिना भी संभव है। हम अपने विचारों और इरादों को व्यक्त कर सकते हैं और बिना किसी क्रोध के भी स्वीकार किए जा सकते हैं। अगर आप इसे अनुभव से समझना सीख जाएँ, तो क्रोध की भावना अपने आप प्रकट होना बंद हो जाएगी।

युवक: लेकिन अगर वे आप पर ग़लत आरोप लगाने लगें, या अपमानजनक टिप्पणियाँ करने लगें, तो क्या होगा? मुझे तब भी गुस्सा नहीं होना चाहिए?

दार्शनिक: लगता है आप अभी तक समझ नहीं पाए हैं। बात यह नहीं है कि आपको गुस्सा नहीं करना चाहिए, बल्कि यह है कि गुस्से के किसी साधन पर निर्भर रहने की कोई ज़रूरत नहीं है। चिड़चिड़े लोग जल्दी गुस्सा नहीं करते—बात बस इतनी है कि उन्हें यह नहीं पता कि बातचीत के प्रभावी साधन भी होते हैं।

Machine Translated by Google

गुस्से के अलावा और कुछ नहीं। इसीलिए लोग अक्सर ऐसी बातें कह देते हैं, "मैं तो बस झल्ला गया" या "वह बहुत गुस्से में था।" हम अपनी बात कहने के लिए गुस्से का सहारा लेते हैं।

युवा: क्रोध के अलावा अन्य प्रभावी संचार उपकरण...

दार्शनिक: हमारे पास भाषा है। हम भाषा के माध्यम से संवाद कर सकते हैं। भाषा की शक्ति और तर्क की भाषा में विश्वास रखें।

युवा: निश्चित रूप से, यदि मुझे इसमें विश्वास न होता, तो हम यह वार्ता नहीं कर रहे होते।

दार्शनिक: सत्ता संघर्ष के बारे में एक और बात। हर मामले में, चाहे आपको कितना भी लगे कि आप सही हैं, उस आधार पर दूसरे पक्ष की आलोचना न करें।
यह एक पारस्परिक संबंध जाल है जिसमें कई लोग फंस जाते हैं।

युवक: ऐसा क्यों?

दार्शनिक: जिस क्षण किसी को यह विश्वास हो जाता है कि पारस्परिक संबंधों में “मैं सही हूँ”, वह पहले ही शक्ति संघर्ष में प्रवेश कर चुका होता है।

युवक: सिर्फ़ इसलिए कि आपको लगता है कि आप सही हैं? बिलकुल नहीं, यह तो बात को बढ़ा-चढ़ाकर कहना है।

दार्शनिक: मैं सही हूँ। यानी, दूसरा पक्ष गलत है। उस बिंदु पर, चर्चा का केंद्र "दावों की सत्यता" से हटकर "पारस्परिक संबंधों की स्थिति" पर आ जाता है। दूसरे शब्दों में, "मैं सही हूँ" का विश्वास इस धारणा की ओर ले जाता है कि "यह व्यक्ति गलत है," और अंततः यह एक प्रतियोगिता बन जाती है और आप सोचते हैं, मुझे ही जीतना है। यह पूरी तरह से एक शक्ति संघर्ष है।

युवक: हम्म.

दार्शनिक: पहली बात तो यह कि किसी के दावे की सत्यता का जीत या हार से कोई लेना-देना नहीं है। अगर आपको लगता है कि आप सही हैं, तो दूसरों की राय चाहे जो भी हो, मामले को वहीं खत्म कर देना चाहिए। हालाँकि, बहुत से लोग सत्ता की होड़ में भाग लेते हैं और दूसरों को अपने अधीन करने की कोशिश करते हैं। और इसीलिए वे "गलती स्वीकार करने" को "हार स्वीकार करने" के समान समझते हैं।

युवा: हां, निश्चित रूप से यह पहलू है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: हार न मानने की मानसिकता के कारण, व्यक्ति अपनी गलती स्वीकार नहीं कर पाता, और नतीजा यह होता है कि वह गलत रास्ता चुन लेता है। गलती स्वीकार करना, माफ़ी मांगना और सत्ता संघर्ष से पीछे हटना—इनमें से कोई भी बात हार नहीं है। श्रेष्ठता की चाहत दूसरों से प्रतिस्पर्धा करके नहीं की जाती।

युवा: तो जब आप जीत और हार के बारे में सोचते रहते हैं, तो आप सही चुनाव करने की क्षमता खो देते हैं?

दार्शनिक: हाँ। यह आपके निर्णय को धुंधला कर देता है, और आपको बस आसन्न जीत या हार ही दिखाई देती है। तब आप गलत रास्ते पर चल पड़ते हैं। प्रतिस्पर्धा और जीत-हार के चश्मे को हटाकर ही हम खुद को सुधार और बदल सकते हैं।

Machine Translated by Google

जीवन में आने वाली चुनौतियों पर विजय पाना

युवा: ठीक है, लेकिन फिर भी एक समस्या है। वह यह कथन है कि "सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं।" मैं देख सकता हूँ कि हीनता की भावना पारस्परिक संबंधों की चिंता है, और इसका हम पर कुछ प्रभाव पड़ता है। और मैं इस विचार को तार्किक मानता हूँ कि जीवन कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है। मैं दूसरों को साथी के रूप में नहीं देख सकता, और कहीं न कहीं मेरे अंदर मैं उन्हें दुश्मन मानता हूँ। यह स्पष्ट रूप से सच है। लेकिन मुझे जो बात हैरान करती है, वह यह है कि एडलर पारस्परिक संबंधों को इतना महत्व क्यों देते हैं? वह "सभी" कहने तक क्यों जाते हैं?

दार्शनिक: पारस्परिक संबंधों का मुद्दा इतना महत्वपूर्ण है कि चाहे इसे कितने भी व्यापक रूप से संबोधित किया जाए, यह कभी भी पर्याप्त नहीं लगता। पिछली बार मैंने तुमसे कहा था, "तुम्हारे अंदर जो कमी है, वह है खुश रहने का साहस।" तुम्हें याद है ना?

युवक: मैं कोशिश करने पर भी इसे नहीं भूल सकता।

दार्शनिक: तो फिर तुम दूसरों को दुश्मन क्यों समझते हो, और उन्हें अपना साथी क्यों नहीं समझते? ऐसा इसलिए है क्योंकि तुम अपना साहस खो चुके हो और अपने "जीवन के कार्यों" से भाग रहे हो।

युवा: मेरे जीवन के कार्य?

दार्शनिक: ठीक है। यह एक महत्वपूर्ण बिंदु है। एडलरियन मनोविज्ञान में, मानव व्यवहार और मनोविज्ञान के लिए स्पष्ट उद्देश्य निर्धारित किए गए हैं।

युवा: किस प्रकार के उद्देश्य?

दार्शनिक: पहला, व्यवहार के दो उद्देश्य हैं: आत्मनिर्भर होना और समाज के साथ सामंजस्य बिठाकर रहना। फिर, इन व्यवहारों का समर्थन करने वाले मनोविज्ञान के दो उद्देश्य हैं: यह चेतना कि मेरे पास क्षमता है और यह चेतना कि लोग मेरे साथी हैं।

Machine Translated by Google

युवा: ज़रा रुकिए। मैं यह लिख रहा हूँ... व्यवहार के दो उद्देश्य हैं: आत्मनिर्भर होना और समाज के साथ सामंजस्य बिठाकर रहना। और इन व्यवहारों का समर्थन करने वाले मनोविज्ञान के भी दो उद्देश्य हैं: यह चेतना कि मेरे पास क्षमता है और यह चेतना कि लोग मेरे साथी हैं ।

- ठीक है, मैं समझ सकता हूँ कि यह एक महत्वपूर्ण विषय है: लोगों और समाज के साथ सामंजस्य बिठाते हुए एक व्यक्ति के रूप में आत्मनिर्भर होना। ऐसा लगता है कि यह उन सभी बातों से मेल खाता है जिन पर हम चर्चा कर रहे हैं।

दार्शनिक: और इन उद्देश्यों को एडलर द्वारा कहे गए "जीवन कार्यों" का सामना करके प्राप्त किया जा सकता है।

युवा: जीवन के कार्य क्या हैं?

दार्शनिक: आइए हम "जीवन" शब्द को बचपन से जोड़कर देखें। बचपन में, हम अपने माता-पिता के संरक्षण में रहते हैं और बिना काम किए रह सकते हैं। लेकिन अंततः, वह समय आता है जब व्यक्ति को आत्मनिर्भर होना पड़ता है। कोई हमेशा अपने माता-पिता पर निर्भर नहीं रह सकता, और उसे मानसिक रूप से, और सामाजिक रूप से भी आत्मनिर्भर होना पड़ता है, और उसे किसी न किसी रूप में काम करना पड़ता है—जो किसी कंपनी में काम करने की संकीर्ण परिभाषा तक सीमित नहीं है। इसके अलावा, बड़े होने की प्रक्रिया में, व्यक्ति के कई तरह के मित्र संबंध बनने लगते हैं। बेशक, किसी के साथ प्रेम संबंध भी बन सकता है जो विवाह तक भी पहुँच सकता है। अगर ऐसा होता है, तो वह वैवाहिक संबंध शुरू करेगा, और अगर उसके बच्चे हैं, तो माता-पिता-बच्चे का रिश्ता शुरू होगा। एडलर ने इन प्रक्रियाओं से उत्पन्न होने वाले पारस्परिक संबंधों की तीन श्रेणियाँ बनाईं। उन्होंने इन्हें "कार्य के कार्य", "मित्रता के कार्य" और "प्रेम के कार्य" कहा, और सभी को एक साथ "जीवन के कार्य" कहा।

युवा: क्या ये काम समाज के सदस्य होने के नाते हमारी ज़िम्मेदारियाँ हैं? दूसरे शब्दों में, श्रम और कर भुगतान जैसी चीज़ें?

दार्शनिक: नहीं, कृपया इसे केवल पारस्परिक संबंधों के संदर्भ में ही सोचें।
यानी, किसी के पारस्परिक संबंधों में दूरी और गहराई। एडलर ने कभी-कभी इस बात पर ज़ोर देने के लिए "तीन सामाजिक बंधन" जैसे वाक्यांश का इस्तेमाल किया।

युवा: किसी के पारस्परिक संबंधों में दूरी और गहराई?

दार्शनिक: एक सामाजिक प्राणी के रूप में जीने की कोशिश करते समय एक व्यक्ति के पास जिन पारस्परिक संबंधों का सामना करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता, वे ही जीवन के कार्य हैं। वे

Machine Translated by Google

ये वास्तव में कार्य हैं, इस अर्थ में कि इनका सामना करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।

युवक: क्या आप अधिक स्पष्ट बतायेंगे?

दार्शनिक: सबसे पहले, आइए काम के कार्यों पर नज़र डालें। काम चाहे किसी भी प्रकार का हो, ऐसा कोई काम नहीं है जो अकेले पूरा किया जा सके। उदाहरण के लिए, मैं आमतौर पर यहाँ अपने अध्ययन कक्ष में पांडुलिपि लिख रहा होता हूँ। लेखन पूरी तरह से स्वायत्त कार्य है जिसे मैं किसी और से नहीं करवा सकता। लेकिन फिर संपादक और कई अन्य लोगों की उपस्थिति होती है, जिनकी सहायता के बिना यह काम पूरा नहीं हो सकता, किताबों की डिज़ाइन और छपाई से लेकर वितरण और किताबों की दुकान के कर्मचारियों तक। ऐसा काम जो अन्य लोगों के सहयोग के बिना पूरा किया जा सके, सिद्धांत रूप में असंभव है।

युवक: मोटे तौर पर कहें तो, मुझे ऐसा ही लगता है।

दार्शनिक: हालांकि, दूरी और गहराई के दृष्टिकोण से विचार करने पर, काम के पारस्परिक संबंधों में सबसे कम बाधाएं बताई जा सकती हैं।

काम के पारस्परिक संबंधों का एक सहज-समझने वाला सामान्य उद्देश्य होता है अच्छे परिणाम प्राप्त करना, इसलिए लोग सहयोग कर सकते हैं, भले ही उनके बीच हमेशा बनती न हो, और कुछ हद तक उनके पास सहयोग करने के अलावा कोई विकल्प भी नहीं होता। और जब तक कोई रिश्ता पूरी तरह से काम के आधार पर बना है, तब तक काम के घंटे खत्म होने या नौकरी बदलने पर वह फिर से किसी बाहरी व्यक्ति के साथ रिश्ता बन जाएगा।

युवक: हाँ, बिल्कुल सच है।

दार्शनिक: और जो लोग इस स्तर पर पारस्परिक संबंधों में उलझ जाते हैं, उन्हें "NEETs" (एक युवा व्यक्ति जो शिक्षा, रोजगार या प्रशिक्षण में नहीं है) या "शट-इन्स" (घर के अंदर सीमित व्यक्ति) कहा जाता है।

युवक: हुह? ज़रा रुको! क्या आप ये कह रहे हैं कि वे सिर्फ़ इसलिए काम करने की कोशिश नहीं करते क्योंकि वे काम से जुड़े पारस्परिक संबंधों से बचना चाहते हैं, न कि इसलिए कि वे काम नहीं करना चाहते या शारीरिक श्रम करने से इनकार कर रहे हैं?

दार्शनिक: इस बात को एक तरफ़ रख दें कि उन्हें खुद इस बात का एहसास है या नहीं, पारस्परिक संबंध ही मूल में हैं। उदाहरण के लिए, एक आदमी नौकरी ढूँढ़ने के लिए अपना बायोडाटा भेजता है और इंटरव्यू में शामिल हो जाता है, लेकिन एक के बाद एक कंपनी उसे अस्वीकार कर देती है। इससे उसके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। वह सोचने लगता है कि अगर उसे ऐसी परिस्थितियों से गुज़रना पड़ रहा है, तो काम करने का क्या मतलब है। या फिर वह काम पर कोई बड़ी गलती कर देता है। कंपनी जा रही है।

Machine Translated by Google

उसकी वजह से भारी रकम गँवानी पड़ी। पूरी तरह निराश, मानो वह अंधकार में डूब गया हो, अगले दिन काम पर आने का ख़याल भी नहीं कर सकता। इनमें से कोई भी काम के अप्रिय होने का उदाहरण नहीं है। अप्रिय है काम के दौरान दूसरों द्वारा आलोचना या फटकार, काम के लिए अयोग्य या अयोग्य होने का ठप्पा लगना, और अपने अपूरणीय आत्म-सम्मान को ठेस पहुँचाना। दूसरे शब्दों में, सब कुछ पारस्परिक संबंधों का मामला है।

Machine Translated by Google

लाल धागा और कठोर जंजीरें

युवक: खैर, मैं अपनी आपत्तियाँ बाद के लिए रखता हूँ। अब दोस्ती का काम क्या होगा?

दार्शनिक: यह एक व्यापक अर्थ में दोस्ती का रिश्ता है, काम से दूर, क्योंकि इसमें कार्यस्थल की कोई बाध्यता नहीं होती। यह एक ऐसा रिश्ता है जिसे शुरू करना या गहरा करना मुश्किल होता है।

युवा: वाह, आपने बिलकुल सही कहा! अगर कोई जगह हो, जैसे स्कूल या कार्यस्थल, तो भी रिश्ता बनाया जा सकता है। लेकिन तब ये एक सतही रिश्ता होगा जो सिर्फ़ उसी जगह तक सीमित होगा। स्कूल या कार्यस्थल से बाहर किसी जगह पर व्यक्तिगत दोस्ती का रिश्ता बनाना या दोस्त ढूँढ़ना भी बेहद मुश्किल होगा।

दार्शनिक: क्या आपका कोई ऐसा व्यक्ति है जिसे आप अपना घनिष्ठ मित्र कहेंगे?

युवक: मेरा एक दोस्त है। लेकिन मुझे यकीन नहीं है कि मैं उसे अपना करीबी दोस्त कहूँगा...

दार्शनिक: मेरे साथ भी ऐसा ही होता था। जब मैं हाई स्कूल में था, तो मैंने दोस्त बनाने की कोशिश भी नहीं की और दिन भर ग्रीक और जर्मन भाषाएँ पढ़ता रहा, चुपचाप दर्शनशास्त्र की किताबें पढ़ता रहा। मेरी माँ मेरे बारे में चिंतित थीं और मेरी कक्षा की शिक्षिका से सलाह लेने गईं। मेरी शिक्षिका ने उनसे कहा, "चिंता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। वह एक ऐसा इंसान है जिसे दोस्तों की ज़रूरत नहीं है।" ये शब्द मेरी माँ और मेरे लिए भी बहुत उत्साहवर्धक थे।

युवा: एक ऐसा इंसान जिसे दोस्तों की ज़रूरत नहीं? तो हाई स्कूल में आपका एक भी दोस्त नहीं था?

दार्शनिक: मेरा एक दोस्त था। उसने कहा था, "विश्वविद्यालय में सीखने लायक कुछ भी नहीं है," और आखिरकार उसने विश्वविद्यालय में प्रवेश ही नहीं लिया। वह कई सालों तक पहाड़ों में एकांतवास में रहा, और आजकल मैं सुन रहा हूँ कि वह दक्षिण-पूर्व एशिया में पत्रकारिता कर रहा है। मैंने उसे दशकों से नहीं देखा है, लेकिन मुझे ऐसा लग रहा है।

Machine Translated by Google

कि अगर हम फिर से साथ आएँ, तो हम पहले की तरह ही घूम पाएँगे। बहुत से लोग सोचते हैं कि जितने ज़्यादा दोस्त हों, उतना अच्छा है, लेकिन मैं इस बात पर पूरी तरह से यकीन नहीं करता। आपके कितने दोस्त या परिचित हैं, इसका कोई महत्व नहीं है। और यह एक ऐसा विषय है जो प्यार के काम से जुड़ा है, लेकिन हमें रिश्ते की दूरी और गहराई के बारे में सोचना चाहिए।

युवक: क्या मेरे लिए घनिष्ठ मित्र बनाना संभव होगा?

दार्शनिक: बिल्कुल बदलेगा। अगर आप बदलेंगे, तो आपके आस-पास के लोग भी बदलेंगे। उनके पास बदलने के अलावा कोई विकल्प नहीं होगा। एडलरियन मनोविज्ञान खुद को बदलने का मनोविज्ञान है, दूसरों को बदलने का नहीं। दूसरों के बदलने या हालात बदलने का इंतज़ार करने के बजाय, आप खुद ही पहला कदम आगे बढ़ाएँ।

युवक: हम्म... .

दार्शनिक: सच तो यह है कि तुम इस तरह मुझसे मिलने मेरे कमरे में आए। और, तुममें मुझे एक युवा दोस्त मिल गया है।

युवक: मैं तुम्हारा दोस्त हूं?

दार्शनिक: हाँ, क्योंकि आप हैं। यहाँ जो बातचीत चल रही है, वह कोई काउंसलिंग नहीं है, और हमारा कोई कामकाजी रिश्ता भी नहीं है। मेरे लिए, आप एक बेमिसाल दोस्त हैं। क्या आपको ऐसा नहीं लगता?

युवक: मैं तुम्हारा... बेमिसाल दोस्त हूँ? नहीं, मैं अभी इस बारे में कुछ नहीं सोचूँगा। चलो, चलते हैं। आखिरी वाले, प्यार के काम के बारे में क्या ख्याल है?

दार्शनिक: इसे दो चरणों में विभाजित समझिए: एक, जिसे प्रेम संबंध कहते हैं; और दूसरा, परिवार के साथ संबंध, खासकर माता-पिता और बच्चों के रिश्ते। हमने काम और दोस्ती पर चर्चा की है, लेकिन इन तीनों में से, प्रेम का कार्य सबसे कठिन है। जब दोस्ती का रिश्ता प्रेम में बदल जाता है, तो दोस्तों के बीच जो बोलचाल और व्यवहार की अनुमति थी, वह प्रेमी बनते ही बंद हो सकती है। खास तौर पर, इसका मतलब होगा विपरीत लिंग के दोस्तों के साथ मेलजोल की अनुमति न देना, और कुछ मामलों में तो विपरीत लिंग के किसी व्यक्ति से फ़ोन पर बात करना ही ईर्ष्या जगाने के लिए काफी है। दूरी इतनी कम होती है, और रिश्ता इतना गहरा।

Machine Translated by Google

युवक: हां, मुझे लगता है कि इसमें कुछ नहीं किया जा सकता।

दार्शनिक: लेकिन एडलर अपने साथी पर पाबंदियाँ लगाना स्वीकार नहीं करते। अगर वह व्यक्ति खुश दिखता है, तो उस स्थिति का खुलकर जश्न मनाया जा सकता है। यही प्रेम है। जिन रिश्तों में लोग एक-दूसरे पर पाबंदियाँ लगाते हैं, वे अंततः टूट जाते हैं।

युवक: रुकिए, यह तो बेवफाई की पुष्टि ही करेगा। क्योंकि अगर किसी का साथी किसी अफेयर में खुश है, तो आप कह रहे हैं कि उसे उसका भी जश्न मनाना चाहिए।

दार्शनिक: नहीं, मैं किसी के अफेयर की पुष्टि नहीं कर रहा हूँ। इस बारे में इस तरह सोचें: जिस रिश्ते में दो लोग साथ होने पर किसी तरह का दमनकारी और तनावपूर्ण महसूस करते हैं, उसे प्यार नहीं कहा जा सकता, भले ही उसमें जुनून हो। जब कोई यह सोच सकता है, " जब भी मैं इस व्यक्ति के साथ होता हूँ, मैं बहुत खुलकर व्यवहार कर सकता हूँ," तो वह सचमुच प्यार का एहसास कर सकता है। वह शांत और सहज अवस्था में रह सकता है, बिना किसी हीनता की भावना या अपनी श्रेष्ठता का दिखावा करने की ज़रूरत के। यही सच्चा प्यार है। दूसरी ओर, प्रतिबंध अपने साथी को नियंत्रित करने की मानसिकता का प्रकटीकरण है, और अविश्वास की भावना पर आधारित एक विचार भी है।

किसी ऐसे व्यक्ति के साथ एक ही जगह पर रहना जो आप पर भरोसा नहीं करता, कोई स्वाभाविक स्थिति नहीं है जिसे कोई बर्दाश्त कर सके, है ना? जैसा कि एडलर कहते हैं, "अगर दो लोग अच्छे संबंधों के साथ रहना चाहते हैं, तो उन्हें एक-दूसरे के साथ समान व्यक्तित्व का व्यवहार करना चाहिए।"

युवक: ठीक है.

दार्शनिक: हालाँकि, प्रेम संबंधों और वैवाहिक संबंधों में, अलग होने का विकल्प मौजूद होता है। इसलिए, कई सालों से साथ रह रहे पति-पत्नी भी अलग हो सकते हैं अगर रिश्ता जारी रखना कष्टदायक हो जाए। हालाँकि, माता-पिता और बच्चों के रिश्ते में, सिद्धांत रूप में ऐसा नहीं किया जा सकता। अगर प्रेम-संबंध लाल धागे से बंधा हुआ है, तो माता-पिता और बच्चों का रिश्ता कठोर ज़ंजीरों में बंधा होता है। और आपके पास बस एक छोटी सी कैंची ही होती है। माता-पिता और बच्चों के रिश्ते की यही मुश्किल है।

युवक: तो फिर कोई क्या कर सकता है?

दार्शनिक: इस समय मैं बस यही कह सकता हूँ: आपको भागना नहीं चाहिए। रिश्ता चाहे कितना भी कष्टदायक क्यों न हो, आपको उससे बचना या उसे टालना नहीं चाहिए। भले ही अंत में आपको उसे कैंची से काटना पड़े, पहले आपको उसका सामना करना होगा। सबसे बुरी बात जो करनी चाहिए, वह है

Machine Translated by Google

बस परिस्थिति के साथ स्थिर खड़े रहना ही सब कुछ है। किसी व्यक्ति के लिए पूरी तरह से अकेले जीवन जीना मूलतः असंभव है, और केवल सामाजिक संदर्भों में ही वह व्यक्ति "व्यक्ति" बनता है। इसीलिए एडलरियन मनोविज्ञान में, एक व्यक्ति के रूप में आत्मनिर्भरता और समाज में सहयोग को सर्वोपरि उद्देश्यों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

तो फिर, इन उद्देश्यों को कैसे प्राप्त किया जा सकता है? इस बिंदु पर, एडलर काम, दोस्ती और प्रेम के तीन कार्यों को पार करने की बात करते हैं, पारस्परिक संबंधों के कार्य, जिनका सामना करने के अलावा एक जीवित व्यक्ति के पास कोई विकल्प नहीं होता।

युवा अभी भी उनका सही अर्थ समझने के लिए संघर्ष कर रहे थे।

Machine Translated by Google

"जीवन-झूठ" के झांसे में न आएं

युवक: अरे, बात फिर उलझने वाली है। आपने कहा कि मैं दूसरे लोगों को दुश्मन समझता हूँ और उन्हें अपना साथी नहीं मान सकता क्योंकि मैं अपने जीवन के कामों से भाग रहा हूँ।

वैसे इसका मतलब क्या था?

दार्शनिक: मान लीजिए, उदाहरण के लिए, कोई श्रीमान 'ए' है जिसे आप पसंद नहीं करते, क्योंकि उसमें कुछ ऐसी खामियां हैं जिन्हें माफ करना कठिन है।

युवक: हा-हा, अगर हम ऐसे लोगों की तलाश कर रहे हैं जो मुझे पसंद नहीं हैं, तो उम्मीदवारों की कोई कमी नहीं है।

दार्शनिक: लेकिन ऐसा नहीं है कि आप मिस्टर ए को इसलिए नापसंद करते हैं क्योंकि आप उनकी खामियों को माफ़ नहीं कर सकते। आपका लक्ष्य पहले से ही मिस्टर ए को नापसंद करना था और फिर उस लक्ष्य को पूरा करने के लिए आपने उनमें खामियाँ ढूँढ़नी शुरू कर दीं।

युवक: यह तो बेतुका है! मैं ऐसा क्यों करूँगा?

दार्शनिक: ताकि आप श्री ए.

युवक: बिल्कुल नहीं, ये तो बिल्कुल ही असंभव है। ज़ाहिर है कि चीज़ों का क्रम उल्टा है। उसने कुछ ऐसा किया जो मुझे पसंद नहीं आया, इसीलिए। अगर उसने ऐसा नहीं किया होता, तो मुझे उससे नापसंदगी रखने की कोई वजह नहीं होती।

दार्शनिक: नहीं, आप ग़लत हैं। अगर आप उस व्यक्ति से अलग होने के उदाहरण पर गौर करें जिसके साथ आप प्रेम संबंध में रहे हों, तो यह समझना आसान है। प्रेमियों या विवाहित जोड़ों के बीच के रिश्तों में, कई बार ऐसा होता है कि एक हद के बाद, व्यक्ति अपने साथी की हर बात या हर काम से चिढ़ जाता है। उदाहरण के लिए, उसे उसके खाने-पीने का तरीका पसंद नहीं आता; घर पर उसका बेढंगा रूप उसे घृणा से भर देता है, और यहाँ तक कि उसके खर्राटे भी उसे परेशान कर देते हैं। हालाँकि कुछ महीने पहले तक, इनमें से किसी भी बात ने उसे कभी परेशान नहीं किया था।

Machine Translated by Google

युवक: हां, यह परिचित लगता है।

दार्शनिक: वह व्यक्ति ऐसा इसलिए महसूस करता है क्योंकि किसी न किसी मोड़ पर उसने मन ही मन ठान लिया था कि वह इस रिश्ते को खत्म करना चाहती है, और वह इसे खत्म करने के लिए आधार तलाश रही है। दूसरा व्यक्ति बिल्कुल नहीं बदला है। उसका अपना लक्ष्य बदल गया है। देखो, लोग बेहद स्वार्थी प्राणी होते हैं जो जब भी मन करता है, दूसरों में न जाने कितनी ही खामियाँ और कमियाँ ढूँढ़ निकालते हैं। एक आदर्श चरित्रवान व्यक्ति भी आ सकता है, और उसे नापसंद करने का कोई न कोई कारण ढूँढ़ने में कोई दिक्कत नहीं होगी। यही कारण है कि दुनिया कभी भी एक खतरनाक जगह बन सकती है, और हर किसी को अपना दुश्मन समझना हमेशा संभव है।

युवक: तो क्या मैं दूसरों में कमियाँ ढूँढ़ रहा हूँ ताकि मैं अपने जीवन के कामों से बच सकूँ, और उससे भी बढ़कर, ताकि मैं पारस्परिक संबंधों से बच सकूँ? और क्या मैं दूसरों को अपना दुश्मन मानकर उनसे दूर भाग रहा हूँ?

दार्शनिक: बिलकुल सही। एडलर ने जीवन के कार्यों से बचने के लिए तरह-तरह के बहाने बनाने की स्थिति को "जीवन-झूठ" कहा है।

युवक: ठीक है...

दार्शनिक: हाँ, यह एक कठोर शब्द है। कोई अपनी वर्तमान स्थिति की ज़िम्मेदारी किसी और पर डाल देता है। वह यह कहकर अपने जीवन के कार्यों से भाग रहा होता है कि सब कुछ दूसरों की गलती है, या अपने परिवेश की गलती है।

यह बिल्कुल वैसा ही है जैसा मैंने पहले बताई उस छात्रा की कहानी में था जिसे शरमाने का डर था। इंसान खुद से भी झूठ बोलता है और अपने आस-पास के लोगों से भी। अगर आप सच में सोचें, तो यह एक बहुत ही गंभीर शब्द है।

युवक: लेकिन आप कैसे मान सकते हैं कि मैं झूठ बोल रहा हूँ? आपको कुछ नहीं पता कि मेरे आस-पास किस तरह के लोग हैं, या मैं किस तरह की ज़िंदगी जीता हूँ, है ना?

दार्शनिक: सच है, मुझे तुम्हारे अतीत के बारे में कुछ नहीं पता। न तुम्हारे माता-पिता के बारे में, न तुम्हारे बड़े भाई के बारे में। मुझे बस एक ही बात पता है।

युवक: वह क्या है?

दार्शनिक: तथ्य यह है कि आप ही हैं - और कोई नहीं - जो आपकी जीवनशैली का निर्णय लेते हैं।

Machine Translated by Google

युवक: आह!

दार्शनिक: अगर आपकी जीवनशैली दूसरे लोगों या आपके परिवेश द्वारा निर्धारित होती, तो ज़िम्मेदारी को दूसरों पर डालना निश्चित रूप से संभव होता। लेकिन हम अपनी जीवनशैली खुद चुनते हैं। यह स्पष्ट है कि ज़िम्मेदारी किसकी है।

युवक: तो आप मेरी निंदा करने पर तुले हैं। लेकिन आप लोगों को झूठा और कायर कह रहे हैं। और कह रहे हैं कि सब मेरी ज़िम्मेदारी है।

दार्शनिक: आपको क्रोध की शक्ति का इस्तेमाल नज़रें फेरने के लिए नहीं करना चाहिए। यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात है। एडलर जीवन के कार्यों या जीवन-झूठों पर कभी भी अच्छाई और बुराई के संदर्भ में चर्चा नहीं करते। हमें नैतिकता या अच्छाई और बुराई पर नहीं, बल्कि साहस के मुद्दे पर चर्चा करनी चाहिए।

युवक: पुनः साहस!

दार्शनिक: हाँ। अगर आप अपने जीवन के कार्यों से बच रहे हैं और अपने जीवन-झूठ से चिपके हुए हैं, तो इसका मतलब यह नहीं कि आप बुराई में डूबे हुए हैं। यह कोई ऐसा मुद्दा नहीं है जिसकी नैतिकता के नज़रिए से निंदा की जाए। यह सिर्फ़ साहस का मुद्दा है।

Machine Translated by Google

कब्जे के मनोविज्ञान से लेकर अभ्यास

युवा: तो आखिरकार आप साहस की बात कर रहे हैं? इससे मुझे याद आया, पिछली बार आपने कहा था कि एडलरियन मनोविज्ञान "साहस का मनोविज्ञान" है।

दार्शनिक: मैं इसमें यह जोड़ना चाहूंगा कि एडलरियन मनोविज्ञान "अधिकार का मनोविज्ञान" नहीं है, बल्कि "उपयोग का मनोविज्ञान" है।

युवा: तो यह कथन है: "महत्वपूर्ण यह नहीं है कि कोई व्यक्ति किस चीज के साथ पैदा हुआ है, बल्कि महत्वपूर्ण यह है कि वह उस उपकरण का क्या उपयोग करता है।"

दार्शनिक: बिलकुल सही। इसे याद रखने के लिए शुक्रिया। फ्रायडियन एटियलजि, कब्ज़ा करने का मनोविज्ञान है, और अंततः यह नियतिवाद पर पहुँचता है। दूसरी ओर, एडलरियन मनोविज्ञान, उपयोग का मनोविज्ञान है, और इसका निर्णय आप ही करते हैं।

युवा: एडलरियन मनोविज्ञान साहस का मनोविज्ञान है, और साथ ही यह उपयोग का मनोविज्ञान भी है...

दार्शनिक: हम इंसान इतने नाज़ुक नहीं हैं कि सिर्फ़ एटिऑलॉजिकल (कारण-और-परिणाम) आघातों की दया पर निर्भर रहें। उद्देश्य विज्ञान के दृष्टिकोण से, हम अपना जीवन और अपनी जीवनशैली स्वयं चुनते हैं। हमारे पास ऐसा करने की शक्ति है।

युवक: लेकिन ईमानदारी से कहूं तो मुझमें अपनी हीन भावना पर काबू पाने का आत्मविश्वास नहीं है।
और आप कह सकते हैं कि यह जीवन-झूठ है, लेकिन मैं शायद कभी भी हीन भावना से मुक्त नहीं हो पाऊंगा।

दार्शनिक: आपको ऐसा क्यों नहीं लगता?

Machine Translated by Google

युवा: शायद आप जो कह रहे हैं वह सही है। दरअसल, मुझे यकीन है कि यह सही है, और साहस ही वह चीज़ है जिसकी मुझमें कमी है। मैं ज़िंदगी के झूठ को भी स्वीकार कर सकता हूँ। मुझे लोगों से घुलने-मिलने में डर लगता है। मैं पारस्परिक संबंधों में चोट नहीं खाना चाहता, और मैं अपने जीवन के कामों को टालना चाहता हूँ। इसीलिए मेरे पास ये सारे बहाने तैयार हैं। हाँ, यह बिल्कुल वैसा ही है जैसा आप कह रहे हैं। लेकिन क्या आप जो कह रहे हैं वह एक तरह का अध्यात्मवाद नहीं है? आप असल में बस यही कह रहे हैं, "आपने अपना साहस खो दिया है, आपको अपना साहस जुटाना होगा।" यह उस मूर्ख प्रशिक्षक से अलग नहीं है जो सोचता है कि वह आपको सलाह दे रहा है, फिर वह आपके पास आता है और आपके कंधे पर थपथपाता है और कहता है, "खुश रहो।" हालाँकि मैं अच्छा नहीं कर पा रहा हूँ, इसका कारण यह है कि मैं बस खुश नहीं हो पा रहा हूँ!

दार्शनिक: तो आप यह कहना चाह रहे हैं कि आप चाहते हैं कि मैं कुछ विशिष्ट कदम सुझाऊं?

युवक: हाँ, बिल्कुल। मैं एक इंसान हूँ। मैं कोई मशीन नहीं हूँ। मुझे बताया गया है कि मेरा साहस खत्म हो गया है, लेकिन मैं अपने टैंक में ईंधन भरते हुए बस साहस नहीं भर सकता।

दार्शनिक: ठीक है। लेकिन आज रात हम फिर से काफ़ी देर से पहुँचे हैं, तो चलिए इसे अगली बार जारी रखते हैं।

युवक: आप इससे भाग तो नहीं रहे हैं, है न?

दार्शनिक: बिल्कुल नहीं। अगली बार हम शायद आज़ादी पर चर्चा करेंगे।

युवक: साहस नहीं?

दार्शनिक: हाँ, यह आज़ादी की चर्चा होगी, जो साहस की बात करते समय ज़रूरी है। कृपया इस बात पर थोड़ा विचार करें कि आज़ादी क्या है।

युवा: आज़ादी क्या है? ...ठीक है। मैं अगली बार का इंतज़ार कर रहा हूँ।

Machine Translated by Google

Machine Translated by Google

तीसरी रात:
अन्य लोगों के कार्यों को त्यागें

Machine Translated by Google

दो सप्ताह बाद, दुखी होकर, युवक दार्शनिक के अध्ययन कक्ष में पुनः गया।
आज़ादी क्या है? लोग आज़ाद क्यों नहीं हो सकते? मैं आज़ाद क्यों नहीं हो सकता? जो कुछ भी मुझे बाँध रहा है, उसका असली स्वरूप क्या है? उसे जो काम सौंपा गया था, वह उस पर भारी पड़ रहा था, लेकिन कोई ठोस जवाब ढूँढ़ना नामुमकिन लग रहा था।

जितना अधिक वह इसके बारे में सोचता, उतना ही अधिक युवक को अपनी स्वतंत्रता की कमी का एहसास होने लगता।

Machine Translated by Google

मान्यता की इच्छा को अस्वीकार करें

युवक: तो आपने कहा कि आज हम स्वतंत्रता पर चर्चा करेंगे।

दार्शनिक: हाँ। क्या आपके पास यह सोचने का समय था कि आज़ादी क्या है?

युवक: हाँ, बिल्कुल। मैंने इस बारे में बहुत सोचा।

दार्शनिक: और क्या आप किसी निष्कर्ष पर पहुंचे?

युवक: खैर, मुझे कोई जवाब नहीं मिला। लेकिन मुझे ये ज़रूर मिला—ये मेरा अपना विचार नहीं है, बल्कि लाइब्रेरी में मुझे दोस्तोवस्की के एक उपन्यास की एक पंक्ति मिली थी: "पैसा ही गढ़ी हुई आज़ादी है।" आप क्या सोचते हैं? क्या "गढ़ी हुई आज़ादी" एक ताज़ा शब्द नहीं है?
लेकिन गंभीरता से कहूं तो, मैं इस एक पंक्ति को पाकर रोमांचित हो गया, जो पैसे नामक इस चीज़ के दिल तक पहुंचती है।

दार्शनिक: मैं समझ गया। निश्चित रूप से, अगर कोई धन द्वारा प्राप्त की जाने वाली चीज़ों के वास्तविक स्वरूप के बारे में सामान्य रूप से बात करे, तो वह कह सकता है कि वह स्वतंत्रता है। यह निश्चित रूप से एक सूक्ष्म अवलोकन है। लेकिन आप यह कहने तक तो नहीं जाएँगे कि "स्वतंत्रता ही धन है", है ना?

युवक: बिल्कुल वैसा ही है जैसा आप कह रहे हैं। शायद पैसे से आज़ादी मिल सकती है। और मुझे यकीन है कि यह आज़ादी हमारी कल्पना से कहीं ज़्यादा है। क्योंकि, असल में, जीवन की सभी ज़रूरतें आर्थिक लेन-देन के ज़रिए पूरी होती हैं। तो क्या इसका मतलब यह है कि अगर किसी के पास बहुत पैसा है, तो वह आज़ाद हो सकता है? मैं नहीं मानता कि ऐसा है; मैं निश्चित रूप से यह मानना चाहूँगा कि ऐसा नहीं है, और मानवीय मूल्यों और मानवीय सुख को पैसे से नहीं खरीदा जा सकता।

दार्शनिक: मान लीजिए कि आपको आर्थिक आज़ादी मिल गई है। और फिर, भले ही आपने बहुत धन-संपत्ति अर्जित कर ली हो, लेकिन आपको खुशी नहीं मिली, तो उस समय आपके लिए कौन-सी समस्याएँ और अभाव बचे रहेंगे?

Machine Translated by Google

युवा: ये पारस्परिक संबंध होंगे जिनका आप ज़िक्र कर रहे हैं। मैंने इस विषय पर गहराई से सोचा है। उदाहरण के लिए, हो सकता है कि आपके पास अपार धन-संपत्ति हो, लेकिन कोई भी आपको प्यार करने वाला न हो; आपके कोई साथी न हों जिन्हें आप दोस्त कह सकें, और कोई भी आपको पसंद न करे। यह बहुत बड़ा दुर्भाग्य है। एक और बात जो मेरे दिमाग से निकल नहीं पा रही है, वह है "बंधन" शब्द। हम में से हर कोई इन बंधनों में उलझा और छटपटा रहा है। उदाहरण के लिए, किसी ऐसे व्यक्ति से जुड़ना जिसकी आपको परवाह भी नहीं है, या अपने बुरे बॉस के मिजाज़ पर हमेशा नज़र रखना। सोचिए, अगर आप ऐसे तुच्छ पारस्परिक संबंधों से मुक्त हो सकें, तो कितना आसान होगा! लेकिन कोई भी वास्तव में ऐसा नहीं कर सकता। हम जहाँ भी जाते हैं, हम दूसरों से घिरे रहते हैं, और हम सामाजिक व्यक्ति हैं, जो दूसरों के साथ अपने संबंधों में ही मौजूद हैं। हम चाहे कुछ भी करें, हम अपने पारस्परिक संबंधों की मज़बूत डोर से नहीं बच सकते। अब मुझे एडलर का यह कथन समझ में आ रहा है कि "सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं" एक महान अंतर्दृष्टि है।

दार्शनिक: यह एक महत्वपूर्ण बिंदु है। आइए थोड़ा गहराई से देखें। हमारे पारस्परिक संबंधों में ऐसा क्या है जो हमारी आज़ादी छीन रहा है?

युवा: पिछली बार आपने इस बारे में बात की थी कि क्या कोई दूसरों को अपना दुश्मन समझता है या अपना साथी। आपने कहा था कि अगर कोई दूसरों को अपना साथी समझने लगे, तो दुनिया को देखने का नज़रिया भी बदल जाना चाहिए। यह बात बिलकुल सही है। पिछले दिनों जब मैं यहाँ से गया था, तो मुझे इस बात पर पूरा यकीन हो गया था। लेकिन फिर क्या हुआ? मैंने इस विषय पर गहराई से सोचा, और मैंने पाया कि पारस्परिक संबंधों के कुछ पहलू ऐसे होते हैं जिन्हें पूरी तरह से समझाया नहीं जा सकता।

दार्शनिक: जैसे क्या?

युवा: सबसे स्पष्ट बात है माता-पिता का अस्तित्व। मैं माता-पिता को कभी दुश्मन नहीं मान सकता। बचपन में, खासकर, वे मेरे सबसे बड़े अभिभावक थे जिन्होंने मेरा पालन-पोषण किया और मेरी रक्षा की। इस लिहाज़ से, मैं उनका तहे दिल से आभारी हूँ। फिर भी, मेरे माता-पिता बहुत सख्त इंसान थे। मैंने आपको पिछली बार बताया था कि वे हमेशा मेरी तुलना मेरे बड़े भाई से करते थे और मुझे पहचानने से इनकार करते थे। और वे लगातार मेरे जीवन के बारे में टिप्पणियाँ करते रहे, कहते रहे कि मुझे और पढ़ाई करनी चाहिए, ऐसे-ऐसे लोगों से दोस्ती नहीं करनी चाहिए, कम से कम इस विश्वविद्यालय में दाखिला तो ले ही लेना चाहिए, इस तरह की नौकरी तो कर ही लेनी चाहिए, वगैरह-वगैरह। उनकी माँगों ने मुझ पर बहुत दबाव डाला और निश्चित रूप से बंधनों की तरह थे।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: तो फिर, आपने क्या किया?

युवा: मुझे लगता है कि जब तक मैंने विश्वविद्यालय में दाखिला नहीं लिया, मैं अपने माता-पिता की इच्छाओं को कभी नज़रअंदाज़ नहीं कर पाया। मैं चिंतित रहता था, जो मुझे बुरा लगता था, लेकिन सच तो यह है कि मेरी इच्छाएँ हमेशा मेरे माता-पिता की इच्छाओं से मेल खाती थीं। हालाँकि, मैंने अपने काम की जगह खुद चुनी थी।

दार्शनिक: अब जब आपने इसका ज़िक्र किया है, तो मैंने अभी तक इसके बारे में नहीं सुना है। आप किस तरह का काम करते हैं?

युवक: मैं अब एक विश्वविद्यालय पुस्तकालय में लाइब्रेरियन के रूप में काम कर रहा हूँ। मेरे माता-पिता चाहते थे कि मैं अपने पिता के प्रिंटिंग प्लांट का काम संभालूँ, जैसे मेरे भाई ने संभाला था। इस वजह से, जब से मैंने अपनी वर्तमान नौकरी शुरू की है, हमारे रिश्ते कुछ हद तक तनावपूर्ण रहे हैं। अगर वे मेरे माता-पिता न होते, बल्कि मेरे जीवन में दुश्मन जैसी उपस्थिति होते, तो शायद मुझे ज़रा भी फ़र्क़ नहीं पड़ता। क्योंकि चाहे वे कितनी भी दखलअंदाज़ी करने की कोशिश करते, मैं उन्हें हमेशा नज़रअंदाज़ कर सकता था। लेकिन जैसा कि मैंने कहा है, मेरे लिए माता-पिता दुश्मन नहीं हैं।

वे साथी हैं या नहीं, यह अलग बात है, लेकिन कम से कम वे दुश्मन तो नहीं हैं जिन्हें मैं दुश्मन कहूँ। यह रिश्ता इतना गहरा है कि उनके इरादों को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

दार्शनिक: जब आपने अपने माता-पिता की इच्छा के अनुसार यह निर्णय लिया कि आप किस विश्वविद्यालय में जाएंगे, तो आपके मन में अपने माता-पिता के प्रति किस प्रकार की भावना उत्पन्न हुई?

युवक: यह जटिल है। मेरे मन में नाराज़गी तो थी, लेकिन दूसरी तरफ़ राहत का एहसास भी था। पता है, अगर मैं उस स्कूल में गया तो वे मुझे पहचान लेंगे।

दार्शनिक: क्या आप उन्हें पहचानवा सकते हैं?

युवक: चलो, अब ये घुमा-फिराकर सवाल पूछना बंद करो। मुझे यकीन है कि तुम समझ गए होगे कि मैं क्या कह रहा हूँ। यह तथाकथित पहचान की चाहत है। संक्षेप में, यह पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। हम इंसान दूसरों से पहचान पाने की निरंतर चाहत में जीते हैं। ठीक इसीलिए कि दूसरा व्यक्ति कोई घिनौना दुश्मन नहीं है, इसलिए हम उससे पहचान चाहते हैं, है ना? तो हाँ, बिलकुल सही; मैं चाहता था कि मेरे माता-पिता मुझे पहचानें।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: मैं समझ गया। आइए इस विषय पर एडलरियन मनोविज्ञान के एक प्रमुख आधार पर बात करते हैं। एडलरियन मनोविज्ञान दूसरों से मान्यता पाने की ज़रूरत को नकारता है।

युवा: क्या यह मान्यता की इच्छा को नकारता है?

दार्शनिक: दूसरों से पहचाने जाने की कोई ज़रूरत नहीं है। दरअसल, पहचान की चाहत ही नहीं रखनी चाहिए। इस बात को बढ़ा-चढ़ाकर नहीं कहा जा सकता।

युवक: बिलकुल नहीं! क्या पहचान की चाहत सचमुच एक सार्वभौमिक चाहत नहीं है जो सभी मनुष्यों को प्रेरित करती है?

Machine Translated by Google

दूसरों की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए मत जिएं

दार्शनिक: दूसरों द्वारा पहचाना जाना निश्चित रूप से प्रसन्नता की बात है।
लेकिन यह कहना ग़लत होगा कि पहचान पाना नितांत ज़रूरी है। आख़िर कोई पहचान क्यों चाहता है? या, संक्षेप में कहें तो, कोई दूसरों से प्रशंसा क्यों चाहता है?

युवा: यह आसान है। दूसरों द्वारा पहचाने जाने के माध्यम से ही हममें से प्रत्येक को सचमुच यह एहसास होता है कि हमारा कोई मूल्य है। दूसरों द्वारा पहचाने जाने के माध्यम से ही व्यक्ति अपनी हीनता की भावना को मिटा पाता है। व्यक्ति स्वयं पर विश्वास करना सीखता है। हाँ, यह मूल्य का मुद्दा है। मुझे लगता है आपने पिछली बार इसका उल्लेख किया था: कि हीनता की भावना मूल्य निर्णय का मुद्दा है। क्योंकि मुझे अपने माता-पिता से कभी पहचान नहीं मिली, इसलिए मैंने हीनता की भावनाओं से भरा जीवन जिया है।

दार्शनिक: अब एक परिचित परिस्थिति पर विचार करते हैं। मान लीजिए, आप अपने कार्यस्थल के आस-पास कूड़ा उठा रहे हैं। बात यह है कि किसी ने इस पर ध्यान ही नहीं दिया। या अगर दिया भी, तो किसी ने आपके काम की सराहना नहीं की, या धन्यवाद का एक शब्द भी नहीं कहा। तो क्या अब से आप कूड़ा उठाते रहेंगे?

युवक: यह तो मुश्किल स्थिति है। मुझे लगता है कि अगर कोई मेरे काम की कद्र नहीं करेगा, तो शायद मैं काम छोड़ दूँ।

दार्शनिक: क्यों?

युवा: कूड़ा उठाना तो हर किसी का काम है। अगर मैं अपनी आस्तीनें चढ़ाकर काम कर रहा हूँ और मुझे धन्यवाद का एक शब्द भी न मिले, तो शायद मेरी प्रेरणा ही खत्म हो जाएगी।

दार्शनिक: यही तो पहचान की चाहत का ख़तरा है। लोग दूसरों से पहचान क्यों चाहते हैं? कई मामलों में, यह इनाम-दंड की शिक्षा के प्रभाव के कारण होता है।

Machine Translated by Google

युवा: पुरस्कार और दंड की शिक्षा?

दार्शनिक: अगर कोई उचित कार्य करता है, तो उसे प्रशंसा मिलती है। अगर कोई अनुचित कार्य करता है, तो उसे दंड मिलता है। एडलर पुरस्कार और दंड द्वारा शिक्षा के बहुत आलोचक थे। यह गलत जीवनशैली की ओर ले जाता है जिसमें लोग सोचते हैं, " अगर कोई मेरी प्रशंसा नहीं करेगा, तो मैं उचित कार्य नहीं करूँगा और अगर कोई मुझे दंडित नहीं करेगा, तो मैं भी अनुचित कार्य करूँगा।" जब आप कूड़ा उठाना शुरू करते हैं, तब से ही आपके मन में प्रशंसा पाने की चाहत होती है। और अगर कोई आपकी प्रशंसा नहीं करता, तो या तो आप क्रोधित हो जाएँगे या यह निर्णय ले लेंगे कि आप ऐसा काम फिर कभी नहीं करेंगे। स्पष्ट रूप से, इस स्थिति में कुछ गड़बड़ है।

युवक: नहीं! काश आप चीज़ों को कमतर न आंकते। मैं शिक्षा के बारे में बहस नहीं कर रहा हूँ।
जिन लोगों को आप पसंद करते हैं, उनसे पहचाने जाने की इच्छा, अपने करीबी लोगों द्वारा स्वीकार किए जाने की इच्छा, एक सामान्य इच्छा है।

दार्शनिक: आप बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी में हैं। देखिए, हम दूसरों की उम्मीदें पूरी करने के लिए नहीं जी रहे हैं।

युवक: आपका क्या मतलब है?

दार्शनिक: आप दूसरों की उम्मीदों को पूरा करने के लिए नहीं जी रहे हैं, और न ही मैं। दूसरों की उम्मीदों को पूरा करना ज़रूरी नहीं है।

युवक: यह तो बहुत ही स्वार्थी तर्क है! क्या आप कह रहे हैं कि इंसान को सिर्फ़ अपने बारे में सोचना चाहिए और आत्म-धर्मी होकर जीना चाहिए?

दार्शनिक: यहूदी धर्म की शिक्षाओं में, एक दृष्टिकोण मिलता है जो कुछ इस प्रकार है: यदि आप अपना जीवन अपने लिए नहीं जी रहे हैं, तो आपके लिए कौन जीएगा? आप केवल अपना जीवन जी रहे हैं। जब बात आती है कि आप किसके लिए जी रहे हैं, तो निश्चित रूप से वह आप ही हैं। और फिर, यदि आप अपना जीवन अपने लिए नहीं जी रहे हैं, तो आपके स्थान पर इसे कौन जी सकता है? अंततः, हम "मैं" के बारे में सोचते हुए जीते हैं। ऐसा कोई कारण नहीं है कि हमें ऐसा न सोचना चाहिए।

युवक: तो आखिरकार आप शून्यवाद के ज़हर से ग्रस्त हैं। आप कहते हैं कि आखिरकार हम "मैं" के बारे में सोचते हुए जीते हैं? और यह ठीक है? कितनी घटिया सोच है!

Machine Translated by Google

दार्शनिक: यह शून्यवाद बिल्कुल नहीं है। बल्कि, यह इसके विपरीत है। जब कोई दूसरों से मान्यता चाहता है, और केवल इस बात की परवाह करता है कि दूसरे उसे कैसे आंकते हैं, तो अंततः वह दूसरों का जीवन जी रहा होता है।

युवक: इसका क्या मतलब है?

दार्शनिक: पहचान पाने की इतनी चाहत रखने से आप उन लोगों की उम्मीदों पर चलने लगेंगे जो चाहते हैं कि आप "इस तरह के इंसान" बनें। दूसरे शब्दों में, आप अपनी असलियत को छोड़कर दूसरों की ज़िंदगी जी रहे हैं। और कृपया यह याद रखें: अगर आप दूसरों की उम्मीदों को पूरा करने के लिए नहीं जी रहे हैं, तो इसका मतलब है कि दूसरे लोग आपकी उम्मीदों को पूरा करने के लिए नहीं जी रहे हैं। हो सकता है कि कोई आपकी उम्मीदों के मुताबिक व्यवहार न करे, लेकिन गुस्सा होना ठीक नहीं है। यह स्वाभाविक है।

युवा: नहीं, ऐसा नहीं है! यह एक ऐसा तर्क है जो हमारे समाज को उसकी बुनियाद से ही उलट देता है। देखिए, हम पहचान की चाहत रखते हैं। लेकिन दूसरों से पहचान पाने के लिए, पहले हमें खुद दूसरों को पहचानना होगा। क्योंकि हम दूसरे लोगों और दूसरे मूल्यों को पहचानते हैं, इसलिए हम दूसरों से पहचाने जाते हैं। आपसी पहचान के इसी रिश्ते से हमारे समाज का निर्माण होता है।

आपका तर्क एक घिनौना और ख़तरनाक सोच है, जो इंसानों को अलग-थलग कर देगा और संघर्ष की ओर ले जाएगा। यह बेवजह अविश्वास और संदेह पैदा करने का एक शैतानी आग्रह है।

दार्शनिक: हा-हा, आपकी शब्दावली वाकई दिलचस्प है। अपनी आवाज़ उठाने की कोई ज़रूरत नहीं है—आइए मिलकर इस पर विचार करें। पहचान तो मिलनी ही चाहिए, वरना तकलीफ़ होगी। अगर दूसरों से और अपने माता-पिता से पहचान नहीं मिलती, तो आत्मविश्वास नहीं होगा। क्या ऐसा जीवन स्वस्थ हो सकता है? तो कोई सोच सकता है, ईश्वर देख रहा है, इसलिए अच्छे कर्म जमा करो। लेकिन यह और शून्यवादी दृष्टिकोण कि "ईश्वर नहीं है, इसलिए सभी बुरे कर्म जायज़ हैं" एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मान भी लें कि ईश्वर का अस्तित्व नहीं है, और हम ईश्वर से पहचान नहीं पा सकते, तब भी हमें यह जीवन जीना होगा। वास्तव में, ईश्वरविहीन दुनिया के शून्यवाद पर विजय पाने के लिए दूसरों से मान्यता न लेना ज़रूरी है।

युवा: मुझे ईश्वर के बारे में ये सब बातें पसंद नहीं हैं। असल ज़िंदगी के आम लोगों की मानसिकता के बारे में ज़्यादा सीधे और स्पष्ट रूप से सोचिए। मिसाल के तौर पर, सामाजिक रूप से पहचाने जाने की चाहत के बारे में क्या? कोई व्यक्ति कॉर्पोरेट जगत में क्यों चढ़ना चाहता है?

Machine Translated by Google

सीढ़ी? एक व्यक्ति रुतबा और शोहरत क्यों चाहता है? यह समाज द्वारा एक महत्वपूर्ण व्यक्ति के रूप में पहचाने जाने की इच्छा है—यह मान्यता की चाह है।

दार्शनिक: तो, अगर आपको वह पहचान मिल जाए, तो क्या आप कहेंगे कि आपको सचमुच खुशी मिल गई है? क्या जिन लोगों ने अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा स्थापित कर ली है, वे सचमुच खुश महसूस करते हैं?

युवक: नहीं, लेकिन यह तो... . .

दार्शनिक: दूसरों से पहचान पाने की कोशिश करते समय, लगभग सभी लोग दूसरों की अपेक्षाओं को पूरा करने को ही उस लक्ष्य तक पहुँचने का एक ज़रिया मानते हैं। और यह पुरस्कार-दंड शिक्षा की उस विचारधारा के अनुरूप है जो कहती है कि अगर कोई उचित कदम उठाएगा तो उसकी प्रशंसा की जाएगी। उदाहरण के लिए, अगर आपके काम का मुख्य उद्देश्य दूसरों की अपेक्षाओं को पूरा करना है, तो वह काम आपके लिए बहुत कठिन होगा। क्योंकि आपको हमेशा इस बात की चिंता रहेगी कि दूसरे लोग आपको देख रहे हैं और आप उनके फ़ैसले से डरते रहेंगे, और आप अपने "अहंकार" को दबा रहे होंगे। आपको यह जानकर आश्चर्य हो सकता है, लेकिन परामर्श के लिए आने वाले मेरे लगभग कोई भी ग्राहक स्वार्थी नहीं होते। बल्कि, वे दूसरों की, अपने माता-पिता और शिक्षकों की अपेक्षाओं को पूरा करने की कोशिश में कष्ट झेल रहे होते हैं। इसलिए, अच्छी बात यह है कि वे आत्म-केंद्रित व्यवहार नहीं कर सकते।

युवक: तो क्या मुझे स्वार्थी होना चाहिए?

दार्शनिक: दूसरों की परवाह किए बिना व्यवहार न करें। इसे समझने के लिए, एडलरियन मनोविज्ञान में "कार्यों का पृथक्करण" नामक अवधारणा को समझना ज़रूरी है।

युवा: कार्यों का पृथक्करण? यह एक नया शब्द है। आइए इसके बारे में सुनें।

युवक की चिड़चिड़ाहट चरम पर पहुँच गई थी। पहचान की चाहत को नकारें?
क्या आप दूसरों की उम्मीदों पर खरे नहीं उतरते? क्या आप ज़्यादा आत्म-केंद्रित जीवन जीते हैं?
आखिर यह दार्शनिक क्या कह रहा था? क्या पहचान की चाह ही लोगों को एक-दूसरे से जुड़ने और समाज निर्माण के लिए प्रेरित करने वाली सबसे बड़ी प्रेरणा नहीं है? युवक सोच रहा था, क्या होगा अगर यह "कार्यों का विभाजन" हो?

Machine Translated by Google

अगर यह विचार मुझे रास नहीं आता, तो मैं इस आदमी को, या एडलर को, ज़िंदगी भर स्वीकार नहीं कर पाऊँगी।

Machine Translated by Google

कार्यों को अलग कैसे करें

दार्शनिक: मान लीजिए कि एक बच्चा है जिसे पढ़ाई में बहुत दिक्कत होती है। वह कक्षा में ध्यान नहीं देता, अपना होमवर्क नहीं करता, और अपनी किताबें भी स्कूल में ही छोड़ देता है।

अब, यदि आप उसके पिता होते तो क्या करते?

युवक: हाँ, बिल्कुल, मैं उसे खुद पर ध्यान लगाने के लिए हर संभव कोशिश करता। मैं ट्यूटर रखता और उसे किसी अध्ययन केंद्र में भेजता, भले ही मुझे उसे वहाँ लाने के लिए कान पकड़कर खींचना पड़े। मैं कहूँगा कि यह एक माता-पिता का कर्तव्य है। और असल में मेरी परवरिश भी इसी तरह हुई है। मुझे दिन का होमवर्क पूरा होने तक रात का खाना खाने की इजाज़त नहीं थी।

दार्शनिक: तो फिर मैं एक और सवाल पूछता हूँ। क्या इतनी सख्ती से पढ़ाई करवाने की वजह से आपको पढ़ाई में मज़ा आने लगा?

युवक: दुर्भाग्य से, मैंने ऐसा नहीं किया। मैंने बस स्कूल और परीक्षाओं की पढ़ाई का ध्यान रखा।

दार्शनिक: मैं समझ गया। ठीक है, मैं एडलरियन मनोविज्ञान के मूल दृष्टिकोण से इस बारे में बात करूँगा। उदाहरण के लिए, जब किसी को अध्ययन का कार्य सौंपा जाता है, तो एडलरियन मनोविज्ञान में हम इसे "यह कार्य किसका है?" के दृष्टिकोण से देखते हैं।

युवक: किसका काम?

दार्शनिक: बच्चा पढ़ाई करे या न करे। वह बाहर जाकर अपने दोस्तों के साथ खेले या नहीं। असल में यह काम बच्चे का है, माता-पिता का नहीं।

युवक: क्या आपका मतलब यह है कि यह ऐसा काम है जो बच्चे को करना चाहिए?

दार्शनिक: सीधे शब्दों में कहें तो, हाँ। अगर बच्चे की बजाय माता-पिता पढ़ाई करें तो कोई मतलब नहीं होगा, है ना?

Machine Translated by Google

युवक: नहीं, ऐसा नहीं होगा।

दार्शनिक: पढ़ाई करना बच्चे का काम है। माता-पिता द्वारा बच्चे को पढ़ाई करने का आदेश देकर उसे संभालना, वास्तव में, दूसरे व्यक्ति के काम में दखलंदाज़ी करने जैसा है। इस तरह टकराव टालना मुश्किल है। हमें "यह काम किसका है?" के नज़रिए से सोचना चाहिए और अपने काम को दूसरों के कामों से लगातार अलग रखना चाहिए।

युवक: इन्हें अलग कैसे किया जाए?

दार्शनिक: किसी को दूसरे के काम में दखल नहीं देना चाहिए। बस इतना ही।

युवक: बस इतना ही?

दार्शनिक: सामान्यतः, पारस्परिक संबंधों की सभी समस्याएँ दूसरों के कामों में दखलंदाज़ी करने, या अपने कामों में दखलंदाज़ी होने के कारण होती हैं। कार्यों का पृथक्करण करना ही पारस्परिक संबंधों को नाटकीय रूप से बदलने के लिए पर्याप्त है।

युवक: हम्म। मुझे समझ नहीं आ रहा। पहली बात तो ये कि आप कैसे बता सकते हैं कि ये काम किसका है?
मेरे नज़रिए से, व्यावहारिक रूप से कहें तो, अपने बच्चे को पढ़ाना माता-पिता का कर्तव्य है। क्योंकि लगभग कोई भी बच्चा सिर्फ़ मनोरंजन के लिए नहीं पढ़ता, और आखिरकार, माता-पिता ही बच्चे के अभिभावक होते हैं।

दार्शनिक: यह बताने का एक आसान तरीका है कि काम किसका है। सोचिए, आखिरकार इस फैसले का नतीजा किसे मिलेगा? जब बच्चे ने पढ़ाई न करने का फैसला किया है, तो आखिरकार उस फैसले का नतीजा—जैसे कि कक्षा में न रह पाना या पसंदीदा स्कूल में दाखिला न मिल पाना—माता-पिता को नहीं भुगतना पड़ेगा। ज़ाहिर है, यह बच्चे को ही भुगतना होगा। दूसरे शब्दों में, पढ़ाई करना बच्चे का काम है।

युवक: नहीं, नहीं। आप बिल्कुल गलत हैं! माता-पिता, जो जीवन में ज़्यादा अनुभवी होते हैं और अभिभावक की भूमिका भी निभाते हैं, उनकी ज़िम्मेदारी है कि वे बच्चे को पढ़ाई के लिए प्रोत्साहित करें ताकि ऐसी परिस्थितियाँ न आएँ। यह बच्चे की भलाई के लिए किया गया काम है, न कि दखलंदाज़ी। पढ़ाई करना बच्चे का काम हो सकता है, लेकिन बच्चे को पढ़ाई के लिए प्रेरित करना माता-पिता का काम है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: यह सच है कि आजकल माता-पिता अक्सर यह कहते सुने जाते हैं, "यह तुम्हारे भले के लिए है।" लेकिन वे ऐसा साफ़ तौर पर अपने ही लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कर रहे हैं, जो समाज की नज़रों में उनकी छवि, दिखावे की उनकी ज़रूरत, या नियंत्रण की उनकी इच्छा हो सकती है। दूसरे शब्दों में, यह "तुम्हारे भले के लिए" नहीं, बल्कि माता-पिता के भले के लिए है।

और चूंकि बच्चा इस धोखे को महसूस करता है, इसलिए वह विद्रोह करता है।

युवक: तो अगर बच्चा बिल्कुल भी पढ़ाई नहीं कर रहा है, तो आप कह रहे हैं कि चूंकि यह उसका काम है, तो मुझे उसे पढ़ाई करने देना चाहिए?

दार्शनिक: ध्यान देना ज़रूरी है। एडलरियन मनोविज्ञान हस्तक्षेप-रहित दृष्टिकोण की अनुशंसा नहीं करता। हस्तक्षेप-रहित दृष्टिकोण, न जानने का दृष्टिकोण है, और न ही यह जानने में रुचि लेना कि बच्चा क्या कर रहा है। इसके बजाय, यह जानकर कि बच्चा क्या कर रहा है, उसकी रक्षा की जा सकती है। अगर समस्या पढ़ाई की है, तो बच्चे को बताया जाना चाहिए कि यह उसका काम है, और उसे यह भी बताया जाना चाहिए कि जब भी उसे पढ़ाई करने की इच्छा हो, हम उसकी मदद के लिए तैयार हैं। लेकिन बच्चे के काम में दखल नहीं देना चाहिए। जब कोई अनुरोध नहीं किया जा रहा हो, तो किसी भी काम में दखलंदाज़ी करना उचित नहीं है।

युवा: क्या यह माता-पिता-बच्चे के रिश्तों से परे है?

दार्शनिक: हाँ, बिल्कुल। उदाहरण के लिए, एडलरियन मनोविज्ञान परामर्श में, हम ग्राहक के बदलने या न बदलने को परामर्शदाता का काम नहीं मानते।

युवक: आप यह क्या कह रहे हैं?

दार्शनिक: परामर्श के बाद, ग्राहक किस तरह का संकल्प लेता है? अपनी जीवनशैली बदले या नहीं। यह ग्राहक का काम है, और परामर्शदाता इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

युवक: बिल्कुल नहीं, मैं ऐसा गैरजिम्मेदाराना रवैया स्वीकार नहीं कर सकता!

दार्शनिक: स्वाभाविक रूप से, व्यक्ति यथासंभव हर संभव सहायता प्रदान करता है। लेकिन उससे आगे, कोई हस्तक्षेप नहीं करता। पुरानी कहावत याद रखें, "आप घोड़े को पानी तक तो ले जा सकते हैं, लेकिन उसे पानी पिला नहीं सकते।" एडलरियन मनोविज्ञान में अन्य लोगों को दी जाने वाली परामर्श और अन्य सभी सहायता को इसी प्रकार का दृष्टिकोण माना जाता है। व्यक्ति के इरादों को नज़रअंदाज़ करते हुए ज़बरदस्ती बदलाव लाने से केवल तीव्र प्रतिक्रिया ही होगी।

युवा: क्या परामर्शदाता ग्राहक का जीवन नहीं बदलता?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: आप ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं जो स्वयं को बदल सकते हैं।

Machine Translated by Google

अन्य लोगों के कार्यों को त्यागें

युवक: तो फिर, घर में बंद रहने वालों के बारे में क्या? मेरा मतलब है, मेरे दोस्त जैसे किसी व्यक्ति के बारे में। फिर भी, क्या आप कहेंगे कि यह कामों का बंटवारा है, दखलअंदाज़ी नहीं करनी है, और इसका माता-पिता से कोई संबंध नहीं है?

दार्शनिक: क्या वह इस बंद-सी स्थिति से बाहर निकल सकता है या नहीं? या, वह इससे कैसे बाहर निकल सकता है? सिद्धांततः, यह एक ऐसा कार्य है जिसका समाधान व्यक्ति को स्वयं करना होगा। इसमें माता-पिता का हस्तक्षेप उचित नहीं है। फिर भी, चूँकि वे पूर्णतः अजनबी नहीं हैं, इसलिए किसी न किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता तो होगी ही। इस समय, सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि क्या बच्चे को लगता है कि जब वह किसी दुविधा में हो, तो वह अपने माता-पिता से खुलकर बात कर सकता है, और क्या वे नियमित रूप से उनके बीच पर्याप्त विश्वास का रिश्ता बना रहे हैं।

युवक: तो मान लीजिए, आपका अपना बच्चा खुद को घर में बंद कर ले, तो आप क्या करेंगे? कृपया इसका जवाब एक दार्शनिक की तरह नहीं, बल्कि एक अभिभावक की तरह दीजिए।

दार्शनिक: पहले तो मैं खुद सोचूँगा, " यह बच्चे का काम है। मैं उसकी बंद-सी स्थिति में दखलअंदाज़ी न करने की कोशिश करूँगा, और इस पर ज़्यादा ध्यान देने से बचूँगा। फिर मैं उसे यह संदेश दूँगा कि जब भी उसे ज़रूरत हो, मैं उसकी मदद के लिए तैयार हूँ।" इस तरह, बच्चे के पास, अपने माता-पिता में बदलाव देखकर, खुद ही सोचने के अलावा कोई विकल्प नहीं होगा कि उसे क्या करना चाहिए। वह शायद आएगा और मदद माँगेगा, और शायद खुद ही कुछ हल निकालने की कोशिश करेगा।

युवक: क्या आप सचमुच इतना संयमित रह पाते यदि आपका अपना बच्चा घर में बंद रहता?

दार्शनिक: अपने बच्चे के साथ रिश्ते को लेकर परेशान माता-पिता अक्सर सोचते हैं, " मेरा बच्चा ही मेरी ज़िंदगी है।" दूसरे शब्दों में, माता-पिता बच्चे के काम को अपना काम समझ रहे हैं।

Machine Translated by Google

या वह खुद ही अपने बच्चे के अलावा किसी और चीज़ के बारे में सोचने में सक्षम नहीं है। जब आखिरकार माता-पिता को इसका एहसास होता है, तो उनके जीवन से "मैं" जा चुका होता है। हालाँकि, बच्चे के काम का बोझ चाहे कितना भी हो, बच्चा अभी भी एक स्वतंत्र व्यक्ति है। बच्चे वह नहीं बनते जो उनके माता-पिता उन्हें बनाना चाहते हैं। विश्वविद्यालय, नौकरी और जीवनसाथी के चुनाव में, यहाँ तक कि बोलचाल और व्यवहार की रोज़मर्रा की बारीकियों में भी, वे अपने माता-पिता की इच्छा के अनुसार काम नहीं करते। स्वाभाविक रूप से, माता-पिता उनकी चिंता करेंगे, और शायद कभी-कभी हस्तक्षेप करना चाहेंगे। लेकिन, जैसा कि मैंने पहले कहा, दूसरे लोग आपकी अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए नहीं जी रहे हैं।

यद्यपि बच्चा आपका अपना है, फिर भी वह माता-पिता की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए नहीं जी रहा है।

युवक: तो आपको परिवार के साथ भी सीमा खींचनी होगी?

दार्शनिक: वास्तव में, परिवारों में दूरी कम होती है, इसलिए कार्यों को सचेत रूप से अलग करना और भी अधिक आवश्यक है।

युवक: ये तो समझ में नहीं आता। एक तरफ़ तो तुम प्यार की बात कर रहे हो, और दूसरी तरफ़ उसे नकार रहे हो। अगर तुम अपने और दूसरों के बीच इस तरह से रेखा खींचोगे, तो तुम किसी पर भी विश्वास नहीं कर पाओगे!

दार्शनिक: देखिए, विश्वास करना भी कार्यों का विभाजन है। आप अपने साथी पर विश्वास करते हैं; यह आपका काम है। लेकिन वह व्यक्ति आपकी अपेक्षाओं और विश्वास के अनुरूप कैसे व्यवहार करता है, यह दूसरों का काम है। जब आप बिना कोई सीमा तय किए अपनी इच्छाओं को थोपते हैं, तो आपको पता भी नहीं चलता कि आप पीछा करने वाले जैसे हस्तक्षेप में शामिल हो रहे हैं।

मान लीजिए आपका साथी आपकी इच्छा के अनुसार व्यवहार नहीं करता। क्या तब भी आप उस व्यक्ति पर विश्वास कर पाएँगे? क्या तब भी आप उससे प्रेम कर पाएँगे? एडलर जिस प्रेम की बात करते हैं, वह ऐसे ही प्रश्नों से बना है।

युवक: यह मुश्किल है! यह बहुत मुश्किल है।

दार्शनिक: बिल्कुल। लेकिन इस तरह से सोचें: दूसरों के कामों में दखल देना और उनके कामों को अपने ऊपर लेना, ज़िंदगी को भारी और मुश्किलों से भर देता है। अगर आप चिंता और दुखों से भरा जीवन जी रहे हैं—जो पारस्परिक संबंधों से उपजा है—तो इस सीमा को समझें कि "अब से, यह मेरा काम नहीं है।"

और दूसरों के कामों को छोड़ दें। यह बोझ हल्का करने और जीवन को सरल बनाने की दिशा में पहला कदम है।

Machine Translated by Google

पारस्परिक संबंधों से कैसे छुटकारा पाएँ
समस्याएँ

युवक: मुझे नहीं पता, यह बात मुझे ठीक नहीं लगती।

दार्शनिक: तो चलिए एक ऐसे दृश्य की कल्पना करते हैं जिसमें आपके माता-पिता आपके रोज़गार के स्थान के चुनाव का कड़ा विरोध कर रहे हैं। वे वास्तव में इसके ख़िलाफ़ थे, है ना?

युवक: हाँ, वे थे। मैं यह तो नहीं कहूँगा कि वे इसका कड़ा विरोध कर रहे थे, लेकिन उन्होंने कई व्यंग्यात्मक टिप्पणियाँ ज़रूर कीं।

दार्शनिक: अच्छा, चलो इसे बढ़ा-चढ़ाकर कहते हैं कि वे इसका कड़ा विरोध कर रहे थे। तुम्हारे पिता भावुक होकर चिल्ला रहे थे, और तुम्हारी माँ आँखों में आँसू भरकर तुम्हारे फैसले का विरोध कर रही थीं। वे तुम्हारे लाइब्रेरियन बनने के बिल्कुल भी पक्ष में नहीं हैं, और अगर तुम अपने भाई की तरह पारिवारिक व्यवसाय नहीं संभालोगे, तो वे तुम्हें अस्वीकार भी कर सकते हैं। लेकिन "नापसंद" की भावना को कैसे स्वीकार करना है, यह तुम्हारे माता-पिता का काम है, तुम्हारा नहीं। यह कोई ऐसी समस्या नहीं है जिसकी तुम्हें चिंता करनी पड़े।

युवक: अब ज़रा रुको। क्या तुम ये कहना चाह रहे हो कि इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि मैं अपने माता-पिता को कितना दुखी करता हूँ?

दार्शनिक: यह सही है। इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

युवक: आप मज़ाक कर रहे हैं! क्या कोई ऐसा दर्शन भी हो सकता है जो संतान-विरोधी व्यवहार की सलाह देता हो?

दार्शनिक: अपने जीवन के संबंध में आप बस इतना कर सकते हैं कि वह सर्वोत्तम मार्ग चुनें जिस पर आप विश्वास करते हैं। दूसरी ओर, दूसरे लोग उस मार्ग के बारे में कैसा निर्णय देते हैं?

Machine Translated by Google

यह काम दूसरे लोगों का है, और यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें आप कुछ कर सकें।

युवक: कोई दूसरा व्यक्ति आपके बारे में क्या सोचता है—अगर वह आपको पसंद करता है या नापसंद करता है—यह उस व्यक्ति का काम है, मेरा नहीं। क्या आप यही कह रहे हैं?

दार्शनिक: यही तो अलग करना है। आपको इस बात की चिंता है कि दूसरे लोग आपको देख रहे हैं। आपको इस बात की चिंता है कि दूसरे लोग आपको जज करेंगे। इसीलिए आप लगातार दूसरों से पहचान पाने की चाहत रखते हैं। अब, आखिर आपको इस बात की चिंता क्यों है कि दूसरे लोग आपको देख रहे हैं? एडलरियन मनोविज्ञान का एक आसान जवाब है। आपने अभी तक कार्यों का पृथक्करण नहीं किया है। आप यह मान लेते हैं कि जो काम दूसरों के होने चाहिए, वे भी आपके अपने हैं। दादी माँ के शब्द याद रखें: "सिर्फ़ आपको ही इस बात की चिंता है कि आप कैसे दिखते हैं।" उनकी यह बात कार्यों के पृथक्करण के मूल तक पहुँचती है। दूसरे लोग आपका चेहरा देखकर क्या सोचते हैं—यह दूसरों का काम है और इस पर आपका कोई नियंत्रण नहीं है।

युवक: सिद्धांत के तौर पर, मैं इसे समझता हूँ। मेरे तर्कशील मस्तिष्क के लिए, यह सही है। लेकिन मेरी भावनाएँ इस तरह के ज़ोरदार तर्क के साथ तालमेल नहीं बिठा पातीं।

दार्शनिक: तो चलिए एक और तरीका अपनाते हैं। मान लीजिए एक आदमी अपनी कंपनी में आपसी रिश्तों को लेकर परेशान है। उसका बॉस बिल्कुल बेतुका है और हर मौके पर उस पर चिल्लाता रहता है। वह कितनी भी कोशिश कर ले, उसका बॉस उसकी कोशिशों को स्वीकार नहीं करता और उसकी बात भी ध्यान से नहीं सुनता।

युवक: यह तो बिल्कुल मेरे बॉस जैसा लगता है।

दार्शनिक: लेकिन क्या आपके बॉस द्वारा स्वीकार किया जाना ही "काम" है जिसे आपको सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए? जहाँ आप काम करते हैं, वहाँ लोगों द्वारा पसंद किया जाना आपका काम नहीं है। आपके बॉस आपको पसंद नहीं करते। और आपको नापसंद करने के उनके कारण स्पष्ट रूप से अनुचित हैं। लेकिन ऐसे में, आपको उनके साथ घुलने-मिलने की कोई ज़रूरत नहीं है।

युवक: बात तो सही लगती है, पर वो तो मेरा बॉस है ना? अगर मेरा सीधा सीनियर मुझे नज़रअंदाज़ कर दे तो मैं कोई काम नहीं कर पाऊँगा।

दार्शनिक: यह फिर से एडलर का जीवन-झूठ है। मैं अपना काम नहीं कर पा रहा हूँ क्योंकि मेरे बॉस ने मुझे छोड़ दिया है। मेरा काम ठीक से न चलने में बॉस की ही गलती है। जो व्यक्ति ऐसी बातें कहता है, वह बॉस के अस्तित्व को बहाने के तौर पर पेश कर रहा है।

Machine Translated by Google

काम जो ठीक से नहीं होता। शर्म से डरने वाली उस छात्रा की तरह, असल में आपको एक बुरे बॉस की ज़रूरत होती है। क्योंकि तब आप कह सकते हैं, "काश मेरा यह बॉस न होता, तो मैं ज़्यादा काम कर पाता।"

युवक: नहीं, तुम्हें मेरे बॉस के साथ मेरे रिश्ते के बारे में नहीं पता! काश तुम मनमाना अंदाज़ा लगाना बंद कर देते।

दार्शनिक: यह चर्चा एडलरियन मनोविज्ञान के मूल सिद्धांतों से संबंधित है। अगर आप क्रोधित हैं, तो कुछ भी समझ में नहीं आएगा। आप सोचते हैं, मुझे बॉस मिल गया है, इसलिए मैं काम नहीं कर सकता। यह पूरी तरह से कारण है। लेकिन असल में, मैं काम नहीं करना चाहता, इसलिए मैं एक बुरा बॉस बनाऊँगा, या मैं अपनी अक्षमता को स्वीकार नहीं करना चाहता, इसलिए मैं एक बुरा बॉस बनाऊँगा। इसे देखने का यह एक उद्देश्यवादी तरीका होगा।

युवा: शायद आपके स्टॉक टेलीओलॉजी दृष्टिकोण में इसे इसी तरह से तैयार किया गया होगा। लेकिन मेरे मामले में, यह अलग है।

दार्शनिक: तो मान लीजिए आपने कार्यों का विभाजन कर दिया होता। तो क्या होता? दूसरे शब्दों में, आपका बॉस आप पर अपना बेवजह गुस्सा चाहे जितना भी निकालने की कोशिश करे, वह आपका काम नहीं है। बेवजह की भावनाएँ आपके बॉस के लिए खुद ही निपटने के काम हैं। उसके साथ घुलने-मिलने या उसके आगे झुकने की कोई ज़रूरत नहीं है। आपको सोचना चाहिए, मुझे क्या करना चाहिए, बिना झूठ बोले अपने जीवन में अपने कार्यों का सामना करना चाहिए।

युवक: लेकिन यह तो... . .

दार्शनिक: हम सभी पारस्परिक संबंधों में कष्ट झेल रहे हैं। यह माता-पिता या बड़े भाई के साथ का रिश्ता हो सकता है, और कार्यस्थल पर पारस्परिक संबंध भी हो सकते हैं। पिछली बार, आप कह रहे थे कि आप कुछ विशिष्ट कदम उठाना चाहते हैं। मैं यही प्रस्तावित करता हूँ। सबसे पहले, व्यक्ति को यह पूछना चाहिए, "यह कार्य किसका है?" फिर कार्यों का पृथक्करण करें। शांतिपूर्वक यह निर्धारित करें कि किस बिंदु तक उसके अपने कार्य हैं, और किस बिंदु से वे किसी अन्य व्यक्ति के कार्य बन जाते हैं। और दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप न करें, या किसी एक व्यक्ति को भी अपने कार्यों में हस्तक्षेप करने की अनुमति न दें। यह एक विशिष्ट और क्रांतिकारी दृष्टिकोण है जो एडलरियन मनोविज्ञान के लिए अद्वितीय है और इसमें व्यक्ति के पारस्परिक संबंधों की समस्याओं को पूरी तरह से बदलने की क्षमता है।

Machine Translated by Google

युवक: अहा! मुझे समझ आने लगा है कि जब आपने कहा था कि आज की चर्चा का विषय स्वतंत्रता है, तो आपका क्या मतलब था।

दार्शनिक: बिलकुल सही। हम अभी आज़ादी की बात करने की कोशिश कर रहे हैं।

Machine Translated by Google

गॉर्डियन नॉट को काटें

युवक: मुझे यकीन है कि अगर कोई कार्यों के पृथक्करण को समझ सके और उसे व्यवहार में ला सके, तो उसके पारस्परिक संबंध एकदम से मुक्त हो जाएँगे। लेकिन मैं अभी भी इसे स्वीकार नहीं कर सकता।

दार्शनिक: बोलो, मैं सुन रहा हूँ।

युवा: मुझे लगता है कि, सिद्धांत रूप में, कार्यों का पृथक्करण पूरी तरह से सही है। दूसरे लोग मेरे बारे में क्या सोचते हैं, या मेरे बारे में किस तरह का निर्णय देते हैं, यह दूसरों का काम है, और मैं इसमें कुछ नहीं कर सकता। और मुझे अपने जीवन में बिना झूठ बोले बस वही करना चाहिए जो मुझे करना है। अगर आप कहें कि यह जीवन का सत्य है, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी—मैं इसे इतना सही मानता हूँ। लेकिन इस पर विचार करें: नैतिक या आचारिक दृष्टिकोण से, क्या इसे सही काम कहा जा सकता है? यानी, जीवन जीने का एक ऐसा तरीका जो खुद और दूसरों के बीच सीमाएँ खींचता है। क्योंकि जब भी वे आपके बारे में चिंतित हों और आपसे पूछें कि आप कैसे हैं, तो क्या आप दूसरों को नज़रअंदाज़ नहीं कर रहे होंगे और यह नहीं कह रहे होंगे, "यह हस्तक्षेप है!"? मुझे लगता है कि यह ऐसा कुछ है जो दूसरों की सद्भावना पर कुठाराघात करता है।

दार्शनिक: क्या आपने सिकंदर महान के बारे में सुना है?

युवक: सिकंदर महान? हाँ, मैंने विश्व इतिहास में उसके बारे में पढ़ा था।

दार्शनिक: वह एक मैसेडोनियन राजा थे जो ईसा से चौथी शताब्दी पूर्व रहते थे।
जब वह फ़ारसी राज्य लिडिया की ओर बढ़ रहा था, तो उसे एक्रोपोलिस में स्थापित एक रथ के बारे में पता चला। उस रथ को पूर्व राजा गोर्डियास ने मंदिर के एक स्तंभ से कसकर बाँध दिया था, और एक स्थानीय किंवदंती थी कि "जो इस गाँठ को खोल देगा, वह एशिया का स्वामी होगा।" यह एक बहुत ही कसी हुई गाँठ थी जिसे कई कुशल लोग खोल पाने में सफल रहे थे, लेकिन कोई भी इसमें सफल नहीं हुआ।
अब, आपको क्या लगता है कि जब सिकंदर महान इस गाँठ के सामने खड़ा हुआ तो उसने क्या किया होगा?

Machine Translated by Google

युवक: अच्छा, क्या उसने आसानी से पौराणिक गुत्थी को सुलझा नहीं लिया, और एशिया का शासक नहीं बन गया?

दार्शनिक: नहीं, ऐसा नहीं हुआ। जैसे ही सिकंदर महान ने देखा कि गाँठ कितनी कसी हुई है, उसने अपनी तलवार निकाली और एक ही वार में उसे दो टुकड़ों में काट दिया।

युवक: वाह!

दार्शनिक: फिर, ऐसा कहा जाता है कि उन्होंने घोषणा की, "भाग्य किंवदंतियों से नहीं, बल्कि अपनी तलवार से ही तय होता है।" उन्हें किंवदंतियों की शक्ति की कोई आवश्यकता नहीं थी और वे अपनी तलवार से ही अपना भाग्य गढ़ते थे। जैसा कि आप जानते हैं, इसके बाद वे आज के मध्य पूर्व और पश्चिमी एशिया के सभी क्षेत्रों के महान विजेता बने। यह गॉर्डियन गाँठ के नाम से प्रसिद्ध किस्सा है। और इसलिए, ऐसी जटिल गाँठें—हमारे पारस्परिक संबंधों के बंधन—पारंपरिक तरीकों से नहीं सुलझाई जा सकतीं, बल्कि किसी बिल्कुल नए दृष्टिकोण से तोड़ी जा सकती हैं।

जब भी मैं कार्यों के पृथक्करण के बारे में समझाता हूं, मुझे हमेशा गॉर्डियन गाँठ याद आती है।

युवक: खैर, मेरा इरादा आपकी बात का खंडन करने का नहीं है, लेकिन हर कोई सिकंदर महान नहीं बन सकता। क्या इसीलिए नहीं कि उस गाँठ को कोई और काट सकता था, इसलिए आज भी उसे एक वीरतापूर्ण कार्य बताने वाला किस्सा सुनाया जाता है? कार्यों के विभाजन के साथ भी यही बात है। भले ही कोई जानता हो कि वह अपनी तलवार से किसी चीज़ को काट सकता है, फिर भी उसे यह थोड़ा मुश्किल लग सकता है। क्योंकि जब कोई कार्यों के विभाजन पर आगे बढ़ता है, तो अंत में उसे लोगों से नाता तोड़ना ही पड़ता है। वह लोगों को अलग-थलग कर देता है। आप जिस कार्यों के विभाजन की बात कर रहे हैं, वह मानवीय भावनाओं को पूरी तरह से नज़रअंदाज़ करता है! इससे कोई अच्छे पारस्परिक संबंध कैसे बना सकता है?

दार्शनिक: इन्हें बनाया जा सकता है। कार्यों का पृथक्करण पारस्परिक संबंधों का उद्देश्य नहीं है। बल्कि, यह तो प्रवेश द्वार है।

युवा: प्रवेशद्वार?

दार्शनिक: उदाहरण के लिए, किताब पढ़ते समय, अगर कोई अपना चेहरा उसके बहुत पास ले जाए, तो उसे कुछ भी दिखाई नहीं देगा। इसी तरह, अच्छे पारस्परिक संबंध बनाने के लिए एक निश्चित दूरी की आवश्यकता होती है। जब दूरी बहुत कम हो जाती है और लोग एक-दूसरे से चिपक जाते हैं, तो एक-दूसरे से बात करना भी असंभव हो जाता है। लेकिन दूरी बहुत ज़्यादा भी नहीं होनी चाहिए। माता-पिता जो अपने बच्चों को बहुत ज़्यादा डाँटते हैं

Machine Translated by Google

मानसिक रूप से बहुत दूर हो जाते हैं। ऐसा होने पर, बच्चा माता-पिता से सलाह भी नहीं ले पाता और माता-पिता भी उचित सहायता नहीं दे पाते। ज़रूरत पड़ने पर मदद के लिए तैयार रहना चाहिए, लेकिन उस व्यक्ति के अधिकार क्षेत्र में दखल नहीं देना चाहिए। इस तरह की मध्यम दूरी बनाए रखना ज़रूरी है।

युवा: क्या माता-पिता और बच्चों के बीच के रिश्ते में भी दूरी आवश्यक है?

दार्शनिक: बिल्कुल। पहले आपने कहा था कि कार्यों का पृथक्करण दूसरे व्यक्ति की सद्भावना पर आघात करता है। यह एक ऐसी धारणा है जो पुरस्कार से जुड़ी है। यह विचार है कि जब कोई दूसरा व्यक्ति आपके लिए कुछ करता है, तो आपको भी बदले में कुछ करना होगा—भले ही वह व्यक्ति कुछ न चाहे। सद्भावना का जवाब देने के बजाय, यह सिर्फ़ पुरस्कार से जुड़ा हुआ है। चाहे दूसरा व्यक्ति किसी भी तरह की अपील करे, आपको क्या करना चाहिए, यह तय करने वाले आप ही हैं।

युवा: जिसे मैं "संबंध" कह रहा हूं, क्या उसका मूल पुरस्कार है?

दार्शनिक: हाँ। जब पारस्परिक संबंधों का आधार पुरस्कार होता है, तो एक भावना उमड़ती है जो कहती है, "मैंने इतना दिया, तो तुम्हें भी मुझे उतना ही देना चाहिए।" यह एक ऐसी धारणा है जो निश्चित रूप से कार्यों के पृथक्करण से बिल्कुल अलग है।

हमें पुरस्कार की चाह नहीं करनी चाहिए, और न ही उससे बंधे रहना चाहिए।

युवक: हम्म.

दार्शनिक: हालाँकि, ऐसी परिस्थितियाँ ज़रूर होती हैं जिनमें किसी दूसरे व्यक्ति के कामों में हस्तक्षेप करना, बिना किसी काम को अलग किए, ज़्यादा आसान होता है—उदाहरण के लिए, बच्चे की परवरिश के दौरान, जब बच्चे को अपने जूते बाँधने में दिक्कत हो रही हो। व्यस्त माँ के लिए, बच्चे के खुद जूते बाँधने का इंतज़ार करने की बजाय, उन्हें बाँधना ज़्यादा तेज़ होता है। लेकिन यह एक हस्तक्षेप है, और यह बच्चे का काम उससे छीन रहा है। और इस हस्तक्षेप को बार-बार दोहराने के परिणामस्वरूप, बच्चा कुछ भी सीखना बंद कर देगा, और अपने जीवन के कार्यों का सामना करने का साहस खो देगा। जैसा कि एडलर कहते हैं, "जिन बच्चों को चुनौतियों का सामना करना नहीं सिखाया गया है, वे सभी चुनौतियों से बचने की कोशिश करेंगे।"

युवक: लेकिन यह सोचने का बहुत शुष्क तरीका है।

दार्शनिक: जब सिकंदर महान ने गॉर्डियन गाँठ को काटा, तो संभवतः कुछ लोगों ने ऐसा ही महसूस किया होगा: कि गाँठ को हाथ से खोलने का अर्थ था,

Machine Translated by Google

और यह कि उसे तलवार से काटना एक भूल थी; कि सिकंदर ने भविष्यवक्ता के शब्दों का अर्थ गलत समझा था। एडलरियन मनोविज्ञान में, ऐसे पहलू हैं जो सामान्य सामाजिक सोच के विपरीत हैं। यह कारण-विज्ञान, आघात को नकारता है, और उद्देश्य-विज्ञान को अपनाता है। यह लोगों की समस्याओं को पारस्परिक संबंधों की समस्याओं के रूप में देखता है। और मान्यता की तलाश न करना और कार्यों का पृथक्करण भी, संभवतः सामान्य सामाजिक सोच के विपरीत हैं।

युवक: यह नामुमकिन है! मैं यह नहीं कर सकता!

दार्शनिक: क्यों?

दार्शनिक ने जिस कार्य-विभाजन का वर्णन शुरू किया था, उससे युवक स्तब्ध रह गया। जब कोई अपनी सभी समस्याओं को अपने पारस्परिक संबंधों में निहित मानता है, तो कार्य-विभाजन प्रभावी होता है। इस दृष्टिकोण को अपनाने मात्र से ही दुनिया काफी सरल हो जाती है। लेकिन इसमें कोई मांस-मज्जा नहीं है। इससे व्यक्ति के रूप में उसकी गर्मजोशी का कोई आभास नहीं होता। क्या कोई ऐसे दर्शन को स्वीकार कर सकता है? युवक अपनी कुर्सी से उठा और ज़ोर से विनती करने लगा।

Machine Translated by Google

मान्यता की इच्छा आपको अस्वतंत्र बनाती है

युवा: देखो, मैं सदियों से असंतुष्ट हूँ। दुनिया के बड़े-बुज़ुर्ग युवाओं से कहते हैं, "कुछ ऐसा करो जो तुम्हें पसंद हो।" और वे ऐसा मुस्कुराते हुए कहते हैं मानो वे वाकई लोगों को समझ रहे हों, मानो वे युवाओं के पक्ष में हों।

लेकिन यह सब दिखावटी बातें हैं, जो सिर्फ़ इसलिए सामने आती हैं क्योंकि वे युवा उनके लिए बिल्कुल अजनबी हैं, और यह रिश्ता किसी भी तरह की ज़िम्मेदारी से रहित है। फिर माता-पिता और शिक्षक हमें कहते हैं, "उस स्कूल में दाखिला ले लो," या "कोई स्थिर नौकरी ढूँढ़ लो," और यह ठोस और नीरस निर्देश सिर्फ़ एक हस्तक्षेप नहीं है। दरअसल, वे अपनी ज़िम्मेदारियाँ निभाने की कोशिश कर रहे हैं।

यह ठीक इसलिए है क्योंकि हम उनसे बहुत जुड़े हुए हैं और वे हमारे भविष्य को लेकर गंभीर रूप से चिंतित हैं, इसलिए वे "कुछ ऐसा करो जो तुम्हें पसंद हो" जैसी गैर-ज़िम्मेदाराना बातें नहीं कह सकते। मुझे यकीन है कि आप भी वही समझदारी भरा चेहरा बनाकर मुझसे कहेंगे, "कृपया कुछ ऐसा करो जो तुम्हें पसंद हो।" लेकिन मैं किसी और की ऐसी टिप्पणी पर विश्वास नहीं करूँगा! यह बेहद गैर-ज़िम्मेदाराना टिप्पणी है, मानो कोई अपने कंधे से किसी इल्ली को झाड़ रहा हो। और अगर दुनिया उस इल्ली को कुचल दे, तो आप कहेंगे, "यह मेरा काम नहीं है," और बेपरवाही से चले जाएँगे। कैसा कामों का बँटवारा है, राक्षस!

दार्शनिक: अरे, हे भगवान, तुम तो बिल्कुल ही भड़क रहे हो। यानी, दूसरे शब्दों में, तुम चाहते हो कि कोई कुछ हद तक दखल दे? तुम चाहते हो कि कोई और तुम्हारा रास्ता तय करे?

युवक: ज़रूर, शायद मुझे पता हो! बात कुछ ऐसी है: यह तय करना इतना मुश्किल नहीं है कि दूसरे आपसे क्या उम्मीद करते हैं, या आपसे किस तरह की भूमिका की माँग की जा रही है। दूसरी ओर, अपनी पसंद से जीना बेहद मुश्किल है। कोई क्या चाहता है? कोई क्या बनना चाहता है, और कैसा जीवन जीना चाहता है? किसी को हमेशा चीज़ों का इतना ठोस अंदाज़ा नहीं होता। यह सोचना एक बड़ी भूल होगी कि हर किसी के स्पष्ट सपने और उद्देश्य होते हैं। क्या आपको यह नहीं पता?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: शायद दूसरों की उम्मीदों पर खरा उतरने के लिए जीना ज़्यादा आसान होता है। क्योंकि इससे आप अपनी ज़िंदगी उनके हवाले कर देते हैं। मिसाल के तौर पर, आप अपने माता-पिता द्वारा बिछाई गई पटरियों पर दौड़ते हैं। भले ही आपको कई बातों पर आपत्ति हो, लेकिन जब तक आप उन पटरियों पर चलते रहेंगे, आप अपनी राह से नहीं भटकेंगे।

लेकिन यदि कोई अपना रास्ता स्वयं तय कर रहा है, तो यह स्वाभाविक है कि वह कभी-कभी भटक जाएगा।
एक व्यक्ति को “कैसे जीना चाहिए” की दीवार का सामना करना पड़ता है।

युवा: इसीलिए मैं दूसरों से मान्यता चाहता हूँ। आप पहले ईश्वर के बारे में बात कर रहे थे, और अगर हम अभी भी ऐसे युग में जी रहे होते जहाँ ईश्वर पर लोग विश्वास करते थे, तो मुझे लगता है कि "ईश्वर देख रहा है" आत्म-अनुशासन का एक मानदंड हो सकता था। अगर ईश्वर किसी को मान्यता देते, तो शायद उसे दूसरों से मान्यता की ज़रूरत न होती। लेकिन वह युग बहुत पहले ही समाप्त हो चुका है। और, ऐसे में, दूसरों की नज़रों के आधार पर खुद को अनुशासित करने के अलावा कोई विकल्प नहीं होता। दूसरों द्वारा मान्यता प्राप्त करने और एक ईमानदार जीवन जीने की आकांक्षा रखना। दूसरों की नज़रें ही मेरा मार्गदर्शक हैं।

दार्शनिक: क्या कोई दूसरों से मान्यता प्राप्त करना चुनता है, या बिना मान्यता के स्वतंत्रता का मार्ग चुनता है? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है—आइए इस पर मिलकर विचार करें।

दूसरों की भावनाओं को समझने की कोशिश करते हुए और इस बात की चिंता करते हुए कि वे आपको कैसे देखते हैं, अपना जीवन जीना। इस तरह जीना कि दूसरों की इच्छाएँ पूरी हों। हो सकता है कि आपको इस ओर मार्गदर्शन करने के लिए संकेत-चिह्न हों, लेकिन यह जीने का एक बहुत ही असंयमी तरीका है। अब, आप जीने का ऐसा असंयमी तरीका क्यों चुन रहे हैं? आप "मान्यता की चाह" शब्द का प्रयोग कर रहे हैं, लेकिन असल में आप यह कह रहे हैं कि आप नहीं चाहते कि कोई आपको नापसंद करे।

युवा: कौन चाहता है? दुनिया में ऐसा कोई नहीं है जो इतना चाहे कि उसे नापसंद किया जाए।

दार्शनिक: बिल्कुल। यह सच है कि कोई भी व्यक्ति नापसंद नहीं होना चाहता। लेकिन इसे इस तरह से देखें: किसी के द्वारा नापसंद न किए जाने के लिए क्या करना चाहिए? इसका एक ही उत्तर है: दूसरों की भावनाओं का लगातार आकलन करते हुए उन सभी के प्रति वफ़ादारी की शपथ लेना। अगर दस लोग हैं, तो व्यक्ति को उन सभी दसों के प्रति वफ़ादारी की शपथ लेनी चाहिए। ऐसा करने पर, कुछ समय के लिए वह किसी के द्वारा नापसंद न किए जाने में सफल हो जाता है। लेकिन इस बिंदु पर, एक बड़ा विरोधाभास उभरता है। कोई व्यक्ति नापसंद न किए जाने की एकमात्र इच्छा से सभी दस लोगों के प्रति वफ़ादारी की शपथ लेता है। यह उस राजनेता की तरह है जो लोकलुभावनवाद में फंस गया है और असंभव वादे करने लगा है और ऐसी ज़िम्मेदारियाँ स्वीकार करने लगा है जो उसके बस की बात नहीं हैं। स्वाभाविक रूप से, उसके झूठ जल्द ही सामने आ जाएँगे।

Machine Translated by Google

वह लोगों का विश्वास खो देगा और अपनी ज़िंदगी को और भी ज़्यादा दुखों में बदल देगा। और, ज़ाहिर है, लगातार झूठ बोलने के तनाव के कई तरह के परिणाम होते हैं। कृपया इस बात को समझें। अगर कोई दूसरों की उम्मीदों को पूरा करने के लिए इस तरह जी रहा है, और अपनी ज़िंदगी दूसरों को सौंप रहा है, तो यह जीने का एक ऐसा तरीका है जिसमें वह खुद से झूठ बोल रहा है और अपने आस-पास के लोगों को भी झूठ बोलना जारी रख रहा है।

युवक: तो क्या व्यक्ति को अहंकारी होना चाहिए और अपनी इच्छानुसार जीवन जीना चाहिए?

दार्शनिक: अपने कामों को बाँटना कोई अहंकारी बात नहीं है। हालाँकि, दूसरों के कामों में दखल देना असल में एक अहंकारी सोच है। माता-पिता अपने बच्चों को पढ़ाई के लिए मजबूर करते हैं; वे उनके जीवन और शादी के फैसलों में दखलंदाज़ी करते हैं। यह एक अहंकारी सोच के अलावा और कुछ नहीं है।

युवक: तो क्या बच्चा अपने माता-पिता की मंशा को नजरअंदाज कर सकता है और अपनी इच्छानुसार जीवन जी सकता है?

दार्शनिक: ऐसा कोई कारण नहीं है कि किसी को अपना जीवन अपनी इच्छानुसार नहीं जीना चाहिए।

युवक: हा-हा! आप न सिर्फ़ शून्यवादी हैं, बल्कि अराजकतावादी और सुखवादी भी हैं।
मैं अब आश्चर्यचकित होना छोड़ चुका हूं और अब मैं किसी भी क्षण हंसना शुरू कर दूंगा।

दार्शनिक: एक वयस्क, जिसने जीने का एक अ-स्वतंत्र तरीका चुना है, एक युवा को यहीं और अभी, इस क्षण में, स्वतंत्र रूप से जीते हुए देखकर, उस युवा की भोगवादी कहकर आलोचना करता है। बेशक, यह एक जीवन-झूठ है जो इसलिए सामने आता है ताकि वयस्क अपने अ-स्वतंत्र जीवन को स्वीकार कर सके। एक वयस्क जिसने स्वयं वास्तविक स्वतंत्रता चुनी है, वह ऐसी टिप्पणियाँ नहीं करेगा और इसके बजाय स्वतंत्र होने की इच्छा का उत्साहवर्धन करेगा।

युवा: ठीक है, तो आप यही कह रहे हैं कि आज़ादी ही मुद्दा है? चलिए, असल मुद्दे पर आते हैं। आप "आज़ादी" शब्द का इस्तेमाल तो खूब करते रहे हैं, लेकिन आख़िर आज़ादी का आपके लिए क्या मतलब है? हम आज़ाद कैसे हो सकते हैं?

Machine Translated by Google

असली आज़ादी क्या है?

दार्शनिक: इससे पहले, आपने स्वीकार किया था कि आप नहीं चाहते कि कोई आपको नापसंद करे, और कहा था, "कहीं भी ऐसा कोई नहीं है जो वास्तव में नापसंद किया जाना चाहेगा।"

युवक: ठीक है।

दार्शनिक: हाँ, मैं भी ऐसा ही हूँ। मुझे नहीं लगता कि दूसरे लोग मुझे नापसंद करें। मैं कहूँगा कि "कोई भी इतना आगे नहीं जाएगा कि सचमुच नापसंद होना चाहेगा" यह एक गहरी समझ है।

युवा: यह एक सार्वभौमिक इच्छा है!

दार्शनिक: फिर भी, हमारी लाख कोशिशों के बावजूद, कुछ लोग मुझे नापसंद करते हैं और कुछ लोग तुम्हें नापसंद करते हैं। यह भी एक सच्चाई है। जब कोई तुम्हें नापसंद करता है, या तुम्हें लगता है कि तुम्हें नापसंद किया जा रहा है, तो यह तुम्हें कैसी मानसिक स्थिति में डाल देता है?

युवा: सीधे शब्दों में कहूँ तो बहुत परेशान हूँ। मुझे आश्चर्य है कि लोग मुझे नापसंद क्यों करने लगे हैं, और मैंने ऐसा क्या किया या कहा जो आपत्तिजनक हो सकता था। मुझे लगता है कि मुझे उस व्यक्ति के साथ अलग तरह से पेश आना चाहिए था, और मैं बस इसी बात पर सोचता रहता हूँ और अपराधबोध से ग्रस्त रहता हूँ।

दार्शनिक: दूसरों द्वारा नापसंद न किए जाने की चाहत। मनुष्य के लिए, यह एक पूरी तरह से स्वाभाविक इच्छा और एक आवेग है। आधुनिक दर्शन के दिग्गज कांट ने इस इच्छा को "प्रवृत्ति" कहा है।

युवा: झुकाव?

दार्शनिक: हाँ, ये हमारी सहज इच्छाएँ हैं, हमारी आवेगपूर्ण इच्छाएँ हैं। अब, अगर कोई कहे कि पहाड़ी से नीचे गिरते पत्थर की तरह जीना और ऐसी प्रवृत्तियों को अनुमति देना, या

Machine Translated by Google

अगर कोई व्यक्ति अपनी इच्छाओं या आवेगों को जहाँ चाहे वहाँ ले जाने को "स्वतंत्रता" कहता है, तो यह कहना गलत होगा। इस तरह जीना अपनी इच्छाओं और आवेगों का गुलाम बनना है।
वास्तविक स्वतंत्रता एक ऐसा दृष्टिकोण है जो नीचे से गिरते हुए अपने आप को ऊपर धकेलने के समान है।

युवा: क्या आप स्वयं को नीचे से ऊपर धकेल रहे हैं?

दार्शनिक: पत्थर शक्तिहीन होता है। एक बार जब वह नीचे की ओर लुढ़कना शुरू कर देता है, तो तब तक लुढ़कता रहेगा जब तक कि गुरुत्वाकर्षण और जड़त्व के प्राकृतिक नियमों से मुक्त न हो जाए। लेकिन हम पत्थर नहीं हैं।
हम ऐसे प्राणी हैं जो प्रवृत्तियों का प्रतिरोध करने में सक्षम हैं। हम अपने गिरते हुए स्वभाव को रोककर ऊपर चढ़ सकते हैं। पहचान पाने की चाहत शायद एक स्वाभाविक चाहत है। तो क्या आप दूसरों से पहचान पाने के लिए नीचे की ओर लुढ़कते रहेंगे? क्या आप खुद को लुढ़कते पत्थर की तरह तब तक घिसते रहेंगे, जब तक कि सब कुछ समतल न हो जाए?

जब सिर्फ़ एक छोटी सी गोल गेंद बचेगी, तो क्या वह "असली मैं" होगा? ऐसा नहीं हो सकता।

युवक: क्या आप यह कह रहे हैं कि अपनी प्रवृत्तियों और आवेगों का विरोध करना स्वतंत्रता है?

दार्शनिक: जैसा कि मैंने बार-बार कहा है, एडलरियन मनोविज्ञान में, हम सोचते हैं कि सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। दूसरे शब्दों में, हम पारस्परिक संबंधों से मुक्ति चाहते हैं। हम पारस्परिक संबंधों से मुक्त होना चाहते हैं।

हालाँकि, इस ब्रह्मांड में अकेले रहना बिल्कुल असंभव है। अब तक हमने जो चर्चा की है, उसके आलोक में, "स्वतंत्रता क्या है?" के बारे में हमारा निष्कर्ष स्पष्ट होना चाहिए।

युवक: यह क्या है?

दार्शनिक: संक्षेप में, “स्वतंत्रता का अर्थ है अन्य लोगों द्वारा नापसंद किया जाना।”

युवक: हुंह? वह क्या था?

दार्शनिक: इसका मतलब है कि कोई आपको नापसंद करता है। यह इस बात का सबूत है कि आप अपनी आज़ादी का इस्तेमाल कर रहे हैं और आज़ादी से जी रहे हैं, और इस बात का भी संकेत है कि आप अपने सिद्धांतों के अनुसार जी रहे हैं।

युवक: लेकिन, लेकिन...

दार्शनिक: नापसंद किया जाना वाकई दुखद होता है। अगर हो सके तो, कोई भी नापसंद किए बिना जीना चाहेगा। वह अपनी पहचान की चाहत पूरी करना चाहता है।

Machine Translated by Google

लेकिन इस तरह से व्यवहार करना कि कोई आपको नापसंद न करे, जीने का एक बेहद अ-स्वतंत्र तरीका है, और असंभव भी। जब कोई अपनी आज़ादी का इस्तेमाल करना चाहता है, तो उसकी एक कीमत चुकानी पड़ती है। और पारस्परिक संबंधों में आज़ादी की कीमत यह है कि दूसरे लोग उसे नापसंद करते हैं।

युवक: नहीं! यह बिल्कुल ग़लत है। इसे आज़ादी नहीं कहा जा सकता। यह किसी को बुरे काम करने के लिए उकसाने का एक शैतानी तरीका है।

दार्शनिक: आप शायद आज़ादी को "संगठनों से मुक्ति" समझते होंगे। अपने घर, स्कूल, अपनी कंपनी या अपने देश से अलग होना ही आज़ादी है। हालाँकि, अगर आप अपने संगठन से अलग हो जाएँ, तो आपको सच्ची आज़ादी नहीं मिल पाएगी। जब तक कोई दूसरों के फ़ैसलों से बेपरवाह नहीं होगा, दूसरों द्वारा नापसंद किए जाने का डर नहीं होगा, और यह कीमत नहीं चुकाएगा कि उसे कभी पहचाना नहीं जाएगा, तब तक वह अपनी ज़िंदगी जीने के तरीके पर कभी अमल नहीं कर पाएगा। यानी, वह आज़ाद नहीं हो पाएगा।

युवा: दूसरे लोगों द्वारा नापसंद किया जाना - क्या आप यही कह रहे हैं?

दार्शनिक: मैं यह कह रहा हूं कि नापसंद किये जाने से मत डरो।

युवक: लेकिन यह तो—

दार्शनिक: मैं तुमसे यह नहीं कह रहा कि तुम इस हद तक जाओ कि लोग तुम्हें नापसंद करने लगें, और न ही मैं यह कह रहा हूँ कि तुम गलत काम करो। कृपया इसे ग़लत न समझो।

युवक: नहीं। तो चलिए सवाल बदलते हैं। क्या लोग सचमुच आज़ादी का बोझ सह सकते हैं? क्या लोग इतने मज़बूत होते हैं? अपने माता-पिता के नापसंद होने पर भी परवाह न करना—क्या कोई इतना आत्म-धर्मी और विद्रोही हो सकता है?

दार्शनिक: व्यक्ति न तो आत्म-धर्मी बनने के लिए तैयार होता है और न ही अवज्ञाकारी। व्यक्ति बस कार्यों को अलग-अलग कर लेता है। हो सकता है कि कोई व्यक्ति आपके बारे में अच्छा न सोचता हो, लेकिन वह आपका कार्य नहीं है। और फिर, यह सोचना कि उसे मुझे पसंद करना चाहिए या मैंने यह सब किया है, इसलिए यह अजीब है कि वह मुझे पसंद नहीं करता, दूसरे व्यक्ति के कार्यों में हस्तक्षेप करने का पुरस्कार-उन्मुख तरीका है। व्यक्ति नापसंद किए जाने की संभावना से डरे बिना आगे बढ़ता है। व्यक्ति ऐसे नहीं जीता जैसे वह ढलान पर लुढ़क रहा हो, बल्कि आगे आने वाली ढलान पर चढ़ता है। यही मनुष्य के लिए स्वतंत्रता है। मान लीजिए

Machine Translated by Google

मेरे सामने दो विकल्प थे—एक ऐसा जीवन जिसमें सभी लोग मुझे पसंद करें, और एक ऐसा जीवन जिसमें कुछ लोग मुझे नापसंद करें—और मुझे एक चुनने को कहा गया। मैं बिना किसी हिचकिचाहट के दूसरा विकल्प चुनूँगा। दूसरे मेरे बारे में क्या सोचते हैं, इसकी चिंता करने से पहले, मैं अपने अस्तित्व के साथ जीना चाहता हूँ। यानी, मैं आज़ादी से जीना चाहता हूँ।

युवक: क्या अब आप स्वतंत्र हैं?

दार्शनिक: हाँ, मैं स्वतंत्र हूँ।

युवक: आप नहीं चाहते कि आपको नापसंद किया जाए, लेकिन अगर आपको नापसंद किया जाए तो आपको कोई आपत्ति नहीं है?

दार्शनिक: हाँ, यह सही है। नापसंद न होना शायद मेरा काम है, लेकिन फलां व्यक्ति मुझे नापसंद करता है या नहीं, यह दूसरे व्यक्ति का काम है। अगर कोई व्यक्ति मेरे बारे में अच्छा नहीं सोचता, तो भी मैं उसमें दखल नहीं दे सकता। मैंने पहले जो कहावत कही थी, उससे सीखकर, स्वाभाविक रूप से कोई किसी को पानी तक ले जाने की कोशिश करेगा, लेकिन वह पानी पिए या नहीं, यह उस व्यक्ति का काम है।

युवक: यह तो कुछ निष्कर्ष है।

दार्शनिक: खुश रहने के साहस में नापसंद किए जाने का साहस भी शामिल है। जब आप वह साहस हासिल कर लेंगे, तो आपके पारस्परिक संबंध एकाएक हल्केपन में बदल जाएँगे।

Machine Translated by Google

आपके पास पारस्परिक संबंधों के कार्ड हैं

युवक: मैंने कभी नहीं सोचा था कि मैं किसी दार्शनिक के यहां जाऊंगा और वहां मुझे नापसंद किये जाने की बात सुननी पड़ेगी।

दार्शनिक: मुझे अच्छी तरह पता है कि यह बात पचाना आसान नहीं है। इसे समझने और पचाने में शायद कुछ समय लगेगा। अगर हम आज इस पर और आगे बढ़ेंगे, तो मुझे लगता है कि आप इसे अपने दिमाग में नहीं रख पाएँगे। इसलिए मैं आपसे एक और बात, एक निजी मामला जो कार्यों के विभाजन से जुड़ा है, के बारे में बात करना चाहूँगा, और फिर आज के लिए अपनी बात समाप्त करूँगा।

युवक: ठीक है.

दार्शनिक: यह भी माता-पिता के साथ संबंधों के बारे में है। मेरे पिता के साथ मेरा रिश्ता हमेशा से ही उतार-चढ़ाव भरा रहा है, बचपन से ही। जब मैं बीस साल का था, तब मेरी माँ का देहांत हो गया, और हम दोनों कभी भी आपस में कोई खास बातचीत नहीं कर पाए, और उसके बाद मेरे पिता के साथ मेरा रिश्ता और भी तनावपूर्ण होता गया।

यही वह समय था जब मेरा सामना एडलर के मनोविज्ञान से हुआ और मैंने एडलर के विचारों को समझा।

युवक: आपके पिता के साथ आपके संबंध खराब क्यों थे?

दार्शनिक: मेरी याददाश्त में बस एक तस्वीर है जब उसने मुझे मारा था। मुझे याद नहीं कि मैंने ऐसा क्या किया होगा जिससे मुझे यह सब झेलना पड़ा। मुझे बस इतना याद है कि मैं उससे बचने की कोशिश में एक मेज़ के नीचे छिप गया था, तभी उसने मुझे घसीटकर बाहर निकाला और ज़ोर से मारा।
और सिर्फ एक बार नहीं, बल्कि कई बार।

युवक: वह डर एक आघात बन गया...

दार्शनिक: मुझे लगता है कि जब तक मेरा सामना एडलरियन मनोविज्ञान से नहीं हुआ, तब तक मैं इसे इसी तरह समझता था। क्योंकि मेरे पिता एक मूडी और कम बोलने वाले इंसान थे। लेकिन खुद से यह सोचना कि उन्होंने मुझे उस समय मारा था, और इसीलिए हमारा रिश्ता बिगड़ गया, फ्रायडियन मनोविज्ञान है।

Machine Translated by Google

एटिऑलॉजिकल सोच का तरीका। एडलरियन टेलीओलॉजी की स्थिति कारण-और-परिणाम की व्याख्या को पूरी तरह से उलट देती है। यानी, मैंने मार खाने की याद इसलिए निकाली क्योंकि मैं नहीं चाहता कि मेरे पिता के साथ मेरे रिश्ते बेहतर हों।

युवक: तो सबसे पहले आपका लक्ष्य यह था कि आप अपने पिता के साथ अपने रिश्ते को बेहतर नहीं बनाना चाहते थे और न ही अपने बीच की चीजों को सुधारना चाहते थे।

दार्शनिक: बिलकुल सही। मेरे लिए, अपने पिता के साथ अपने रिश्ते को सुधारना ज़्यादा आसान था। मैं ऐसे पिता को अपनी ज़िंदगी के खराब होने का बहाना बना सकता था। मेरे लिए यह एक गुण था। और एक सामंती पिता से बदला लेने का पहलू भी था।

युवक: यही तो मैं पूछना चाहता था! अगर कारण और प्रभाव उलट भी दिए जाएँ, यानी आपके मामले में, आप खुद का विश्लेषण करके कह सकें, "मेरे पिता के साथ मेरे रिश्ते खराब होने की वजह यह नहीं है कि उन्होंने मुझे मारा, बल्कि इसलिए कि मैं पिटाई की यादों को ताज़ा कर रहा हूँ क्योंकि मैं नहीं चाहता कि मेरे पिता के साथ मेरे रिश्ते बेहतर हों," तो भी, इससे असल में क्या बदलता है? इससे यह बात तो नहीं बदलती कि आपको बचपन में मारा गया था, है ना?

दार्शनिक: इस दृष्टिकोण से सोचा जा सकता है कि यह एक पारस्परिक संबंध कार्ड है। जब तक मैं यह सोचने के लिए एटिओलॉजी का उपयोग करता हूँ कि, " मेरे पिता के साथ मेरे संबंध खराब होने का कारण उनका मारा जाना है," तब तक यह एक ऐसा मामला होगा जिसके बारे में मैं कुछ भी नहीं कर सकता। लेकिन अगर मैं यह सोच सकता हूँ कि मैंने अपने पिता के साथ अपने संबंधों को बेहतर नहीं होने देने के कारण मुझे मारे जाने की याद दिलाई है, तो मैं संबंधों को सुधारने के लिए कार्ड धारण करूँगा। क्योंकि अगर मैं बस लक्ष्य बदल सकता हूँ, तो इससे सब कुछ ठीक हो जाता है।

युवक: क्या इससे सचमुच चीजें ठीक हो जाएंगी?

दार्शनिक: बिल्कुल।

युवक: मुझे आश्चर्य है कि क्या तुम सचमुच दिल से ऐसा महसूस करते हो। मैं सैद्धांतिक रूप से इसे समझ सकता हूँ, लेकिन यह भावना मुझे ठीक नहीं लगती।

दार्शनिक: तो फिर बात कामों के बंटवारे की है। यह सच है कि मेरे पिता और मेरे बीच एक पेचीदा रिश्ता था। वह एक ज़िद्दी इंसान थे, और मैं कभी सोच भी नहीं सकता था कि उनकी भावनाएँ इतनी आसानी से बदल जाएँगी। इसके अलावा, इस बात की भी पूरी संभावना थी कि वह मुझ पर हाथ उठाना भी भूल गए थे। हालाँकि, उस समय

Machine Translated by Google

रिश्तों को सुधारने के मेरे संकल्प के बारे में, मेरे लिए यह मायने नहीं रखता था कि मेरे पिता की जीवनशैली कैसी थी, या वे मेरे बारे में क्या सोचते थे, या मेरे व्यवहार के प्रति उनका रवैया कैसा होगा—ऐसी बातें बिल्कुल भी मायने नहीं रखती थीं। अगर उनकी तरफ से रिश्तों को सुधारने का कोई इरादा न भी होता, तो भी मुझे ज़रा भी आपत्ति नहीं होती। मुद्दा यह था कि मैं ऐसा करने का संकल्प लूँगा या नहीं, और मैं हमेशा पारस्परिक संबंधों के कार्ड अपने पास रखता था।

युवा: आप हमेशा पारस्परिक संबंधों के बारे में सोचते रहते थे?

दार्शनिक: हाँ। बहुत से लोग सोचते हैं कि पारस्परिक संबंधों के कार्ड दूसरे व्यक्ति के पास होते हैं। इसलिए वे सोचते हैं, " वह व्यक्ति मेरे बारे में कैसा महसूस करता है?" और अंततः दूसरों की इच्छाओं को पूरा करने के लिए इस तरह जीने लगते हैं। लेकिन अगर वे कार्यों के पृथक्करण को समझ सकें, तो वे देखेंगे कि सभी कार्ड उनके पास हैं।

यह सोचने का एक नया तरीका है।

युवक: तो क्या आपके बदलने से आपके पिता भी बदल गये?

दार्शनिक: मैं अपने पिता को बदलने के लिए नहीं बदला। यह किसी दूसरे व्यक्ति को प्रभावित करने की एक गलत धारणा है। अगर मैं भी बदल जाऊँ, तो सिर्फ़ "मैं" ही बदलूँगा। मुझे नहीं पता कि इसके परिणामस्वरूप दूसरे व्यक्ति का क्या होगा, और यह ऐसा पहलू नहीं है जिसमें मैं भाग ले सकूँ। यह भी कार्यों का विभाजन है। बेशक, ऐसे समय होते हैं जब मेरे बदलाव के साथ— मेरे बदलाव के कारण नहीं —दूसरा व्यक्ति भी बदल जाता है। कई मामलों में, उस व्यक्ति के पास बदलने के अलावा कोई विकल्प नहीं होगा। लेकिन यह लक्ष्य नहीं है, और यह निश्चित रूप से संभव है कि दूसरा व्यक्ति न बदले। किसी भी स्थिति में, दूसरों को प्रभावित करने के लिए अपनी वाणी और आचरण को बदलना स्पष्ट रूप से एक गलत सोच है।

युवक: किसी को भी दूसरे लोगों के साथ छल नहीं करना चाहिए, और छल नहीं किया जा सकता।

दार्शनिक: जब हम पारस्परिक संबंधों की बात करते हैं, तो हमेशा दो लोगों के रिश्ते और एक बड़े समूह के साथ अपने रिश्ते का ख्याल आता है, लेकिन सबसे पहले खुद का ख्याल आता है। जब कोई पहचान की चाहत में बंधा होता है, तो पारस्परिक संबंधों के पत्ते हमेशा दूसरों के हाथों में ही रहते हैं। क्या कोई जीवन के पत्ते किसी और को सौंपता है, या खुद ही रखता है? कृपया समय निकालकर अपने घर में, कार्यों के पृथक्करण और स्वतंत्रता के बारे में इन विचारों पर फिर से विचार करें। अगली बार मैं यहीं आपका इंतज़ार करूँगा।

युवक: ठीक है। मैं खुद इस पर विचार करूँगा।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: अच्छा, तो... .

युवक: कृपया, मैं आपसे एक और बात पूछना चाहता हूं।

दार्शनिक: यह क्या है?

युवक: अंततः क्या आप अपने पिता के साथ अपने रिश्ते सुधारने में सफल रहे?

दार्शनिक: हाँ, बिल्कुल। मुझे ऐसा लगता है। मेरे पिताजी बीमार पड़ गए, और उनके जीवन के अंतिम कुछ वर्षों में, मुझे और मेरे परिवार को उनकी देखभाल करनी ज़रूरी हो गई थी। फिर एक दिन, जब मैं हमेशा की तरह उनकी देखभाल कर रहा था, मेरे पिताजी ने कहा, "धन्यवाद।" मुझे नहीं पता था कि मेरे पिताजी के शब्दकोश में ऐसा कोई शब्द भी है, और मैं हैरान रह गया और बीते दिनों के लिए कृतज्ञ महसूस किया। अपने लंबे देखभाल जीवन के दौरान, मैंने हर संभव कोशिश की, यानी, मैंने अपने पिताजी को पानी तक पहुँचाने की पूरी कोशिश की। और अंत में, उन्होंने पानी पिया। मुझे लगता है उन्होंने पानी पिया।

युवक: अच्छा, बहुत-बहुत शुक्रिया। मैं इसी समय फिर आऊँगा।

दार्शनिक: मुझे भी बहुत मज़ा आया। आपका भी शुक्रिया।

Machine Translated by Google

Machine Translated by Google

चौथी रात:

विश्व का केंद्र कहाँ है

Machine Translated by Google

यह तो बहुत करीब था—मैं तो लगभग इसके झांसे में आ ही गया! अगले हफ़्ते, वह युवक फिर दार्शनिक के पास गया और गुस्से से भरे भाव के साथ दरवाज़ा खटखटाया।

कामों को अलग करने का विचार वाकई उपयोगी है। पिछली बार आपने मुझे पूरी तरह से समझा दिया था। लेकिन यह जीने का एक बहुत ही अकेला तरीका लगता है। कामों को अलग करना और अपने आपसी रिश्तों का बोझ हल्का करना, ठीक वैसा ही है जैसे दूसरों से नाता तोड़ लेना। और, सबसे बढ़कर, आप मुझे कह रहे हैं कि दूसरे लोग मुझे नापसंद करें? अगर इसे ही आज़ादी कहते हैं, तो मैं आज़ाद नहीं रहना चुनूँगा!

Machine Translated by Google

व्यक्तिगत मनोविज्ञान और समग्रतावाद

दार्शनिक: अच्छा, आज आप काफ़ी उदास दिख रहे हैं।

युवक: देखिए, जब से हम पिछली बार मिले थे, मैं शांति और सावधानी से कार्यों के विभाजन और स्वतंत्रता के बारे में सोच रहा हूँ। मैंने अपनी भावनाओं के शांत होने तक इंतज़ार किया और फिर अपनी तर्कशक्ति का इस्तेमाल किया। लेकिन कार्यों का विभाजन व्यावहारिक नहीं लगता।

दार्शनिक: हम्म, ठीक है। कृपया आगे बढ़ें।

युवा: कार्यों को अलग-अलग करना मूलतः एक ऐसा विचार है जो एक सीमा निर्धारित करने और यह कहने पर आधारित है, "मैं मैं हूँ, और तुम तुम हो।" निश्चित रूप से, इस तरह से पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ शायद कम होंगी। लेकिन क्या आप सचमुच कहेंगे कि इस तरह की जीवन शैली सही है? मुझे तो यह एक बेहद आत्मकेंद्रित, गुमराह व्यक्तिवाद लगता है।

यहाँ मेरी पहली यात्रा पर, आपने मुझे बताया था कि एडलरियन मनोविज्ञान को औपचारिक रूप से "व्यक्तिगत मनोविज्ञान" कहा जाता है। यह शब्द मुझे काफी समय से परेशान कर रहा था, लेकिन आखिरकार मुझे समझ आ गया कि ऐसा क्यों है: जिसे आप एडलरियन मनोविज्ञान, या व्यक्तिगत मनोविज्ञान कह रहे हैं, वह मूलतः उस व्यक्तिवाद का अध्ययन है जो लोगों को एकाकीपन की ओर ले जाता है।

दार्शनिक: यह सच है कि एडलर द्वारा गढ़े गए "व्यक्तिगत मनोविज्ञान" शब्द के कुछ पहलू हैं जो गलतफहमी पैदा कर सकते हैं। अब मैं समझाता हूँ कि मेरा क्या मतलब है। सबसे पहले, व्युत्पत्ति की दृष्टि से, "व्यक्तिगत" शब्द का अर्थ "अविभाज्य" है।

युवक: अविभाज्य?

दार्शनिक: हाँ। दूसरे शब्दों में, यह सबसे छोटी संभव इकाई है और इसलिए इसे और विभाजित नहीं किया जा सकता। अब, वह क्या है जिसे विभाजित नहीं किया जा सकता? एडलर किसी भी प्रकार की द्वैतवादी मूल्य प्रणाली के विरोधी थे जो मन को शरीर से अलग मानती हो—बुद्धि को भावना से अलग, या चेतन मन को अचेतन मन से अलग।

Machine Translated by Google

युवक: इसका क्या मतलब है?

दार्शनिक: उदाहरण के लिए, क्या आपको उस छात्रा की कहानी याद है जो शरमाने के डर से मेरे पास परामर्श के लिए आई थी? उसे शरमाने का डर क्यों हुआ? एडलरियन मनोविज्ञान में, शारीरिक लक्षणों को मन (मानस) से अलग नहीं माना जाता। मन और शरीर को एक ही माना जाता है, एक संपूर्ण के रूप में जिसे भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता। मन में तनाव के कारण हाथ-पैर काँप सकते हैं, गाल लाल हो सकते हैं, और डर के कारण चेहरा सफ़ेद पड़ सकता है।

और इसी तरह।

युवा: हां, निश्चित रूप से, मन और शरीर के कुछ हिस्से जुड़े हुए हैं।

दार्शनिक: यही बात तर्क और भावना, चेतन मन और अचेतन मन पर भी लागू होती है। एक सामान्यतः शांतचित्त व्यक्ति यह उम्मीद नहीं करता कि उसे अचानक कोई हिंसक भावना आ जाए और वह किसी पर चिल्लाने लगे। हम उन भावनाओं से प्रभावित नहीं होते जो किसी तरह हमसे स्वतंत्र रूप से अस्तित्व रखती हैं। हम में से प्रत्येक एक एकीकृत इकाई है।

युवा: नहीं, यह सच नहीं है। दरअसल, हमारे पास मन और शरीर, तर्क और भावना, और चेतन और अचेतन मन को एक-दूसरे से अलग देखने की क्षमता है, इसलिए हम लोगों को सही ढंग से समझ पाते हैं। क्या यह स्वाभाविक नहीं है?

दार्शनिक: यह निश्चित रूप से सच है कि मन और शरीर अलग-अलग चीज़ें हैं, तर्क और भावनाएँ अलग-अलग हैं, और चेतन मन और अचेतन मन दोनों मौजूद हैं। हालाँकि, जब कोई गुस्से में आकर किसी दूसरे व्यक्ति पर चिल्लाता है, तो वह "मैं समग्र रूप से" ही होता है जो चिल्लाने का चुनाव करता है। कोई भी उन भावनाओं के बारे में कभी नहीं सोचेगा जो किसी तरह स्वतंत्र रूप से मौजूद हैं—मानो किसी के इरादों से असंबंधित—जिसने उस चिल्लाने वाली आवाज़ को जन्म दिया हो। जब कोई "मैं" को "भावना" से अलग करता है और सोचता है, यह भावना ही थी जिसने मुझे ऐसा करने के लिए प्रेरित किया, या भावना ने मुझ पर विजय प्राप्त कर ली, और मैं कुछ नहीं कर सका, तो ऐसी सोच जल्दी ही एक जीवन-झूठ बन जाती है।

युवक: आप उस समय की बात कर रहे हैं जब मैं उस वेटर पर चिल्लाया था, है ना?

दार्शनिक: हाँ। मनुष्य को "मैं एक संपूर्ण" के रूप में, एक अविभाज्य प्राणी के रूप में, जिसे भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता, देखने के इस दृष्टिकोण को "समग्रवाद" कहा जाता है।

Machine Translated by Google

युवक: ठीक है, ठीक है। लेकिन मैं आपसे "व्यक्ति" की परिभाषा देने के लिए किसी अकादमिक सिद्धांत की माँग नहीं कर रहा था। देखिए, अगर आप एडलरियन मनोविज्ञान को उसके तार्किक निष्कर्ष तक ले जाएँ, तो यह मूलतः यही कह रहा है, "मैं मैं हूँ, और तुम तुम हो," और लोगों को अलगाव की ओर ले जा रहा है। यह कह रहा है, "मैं तुम्हारे काम में दखल नहीं दूँगा, इसलिए तुम भी मेरे काम में दखल मत दो, और हम दोनों अपनी मर्ज़ी से जीते रहेंगे।" कृपया मुझे सीधे-सीधे बताएँ कि इस बात के बारे में आपकी क्या जानकारी है।

दार्शनिक: ठीक है। सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। आपको एडलरियन मनोविज्ञान के इस मूल सिद्धांत की समझ है, है ना?

युवा: हाँ, मैं मानता हूँ। पारस्परिक संबंधों में हस्तक्षेप न करने का विचार, यानी कार्यों का पृथक्करण, शायद इन्हीं समस्याओं को सुलझाने का एक तरीका था।

दार्शनिक: मुझे लगता है कि मैंने पिछली बार इस बात पर चर्चा की थी—कि अच्छे पारस्परिक संबंध बनाने के लिए एक निश्चित दूरी की आवश्यकता होती है। साथ ही, जो लोग बहुत ज़्यादा करीब आ जाते हैं, वे अंततः एक-दूसरे से बात भी नहीं कर पाते, इसलिए बहुत दूर रहना भी ठीक नहीं है। कृपया कार्यों के पृथक्करण को दूसरों को दूर रखने के लिए न समझें; बल्कि इसे एक ऐसी सोच के रूप में देखें जिससे पारस्परिक संबंधों की जटिल उलझनों के धागों को सुलझाया जा सके।

युवक: धागे सुलझाने के लिए?

दार्शनिक: बिल्कुल। अभी, आपके और दूसरों के धागे एक उलझन भरी उलझन में उलझे हुए हैं, और आप इसी हालत में दुनिया को देख रहे हैं। लाल, नीला, भूरा और हरा—सारे रंग आपस में मिल रहे हैं—आप इसे "संबंध" समझते हैं। लेकिन ऐसा नहीं है।

युवक: तो फिर, आपके अनुसार संबंध क्या है?

दार्शनिक: पिछली बार, मैंने पारस्परिक संबंधों की समस्याओं के समाधान के लिए कार्यों के पृथक्करण की बात की थी। लेकिन पारस्परिक संबंध केवल कार्यों के पृथक्करण से समाप्त नहीं हो जाते। कार्यों का पृथक्करण ही पारस्परिक संबंधों का प्रस्थान बिंदु है। आज, आइए इस चर्चा को और गहराई से देखें और देखें कि एडलरियन मनोविज्ञान में पारस्परिक संबंधों को समग्र रूप से कैसे देखा जाता है, और विचार करें कि हमें दूसरों के साथ किस प्रकार के संबंध बनाने चाहिए।

Machine Translated by Google

पारस्परिक संबंधों का लक्ष्य एक भावना है
समुदाय

युवक: ठीक है, मेरा एक प्रश्न है। कृपया मुझे एक सरल उत्तर दें जो सीधे मुद्दे की जड़ तक पहुँचे। आपने कहा कि कार्यों का पृथक्करण पारस्परिक संबंधों का प्रस्थान बिंदु है। तो, पारस्परिक संबंधों का लक्ष्य क्या है?

दार्शनिक: सीधे मुद्दे की बात पर आते हैं तो वह है "सामुदायिक भावना"।

युवा: । । सामुदायिक भावना?

दार्शनिक: हाँ। एडलर के मनोविज्ञान में यह एक प्रमुख अवधारणा है, और इसके अनुप्रयोग पर विचार काफ़ी बहस का विषय रहे हैं। दरअसल, सामुदायिक भावना की अवधारणा के एडलर के प्रस्ताव ने कई लोगों को उनसे अलग होने पर मजबूर कर दिया।

युवक: हाँ, मुझे तो यह बहुत दिलचस्प लग रहा है। यह क्या अवधारणा है?

दार्शनिक: मुझे लगता है, पिछली बार मैंने यह बात उठाई थी कि हम दूसरों को कैसे देखते हैं, यानी दुश्मन या साथी। अब, इसे थोड़ा और गहराई से समझिए। अगर दूसरे लोग हमारे साथी हैं, और हम उनके बीच रहते हैं, तो हमें उस जीवन में अपना "आश्रय" ढूँढ़ना चाहिए। इसके अलावा, ऐसा करते हुए, हममें अपने साथियों के साथ साझा करने, समुदाय में योगदान देने की इच्छा जागृत होनी चाहिए। दूसरों को साथी मानने की यह भावना, "अपना आश्रय होने" का यह बोध, "सामुदायिक भावना" कहलाता है।

युवक: लेकिन इसका कौन सा हिस्सा बहस का विषय है? यह तो बिल्कुल अकाट्य बात लगती है।

दार्शनिक: मुद्दा समुदाय का है। इसमें क्या-क्या शामिल है? जब आप "समुदाय" शब्द सुनते हैं, तो आपके मन में कौन-सी छवियाँ आती हैं?

Machine Translated by Google

युवा: किसी का घर, स्कूल, कार्यस्थल या स्थानीय समाज जैसे ढांचे होते हैं।

दार्शनिक: जब एडलर समुदाय का उल्लेख करते हैं, तो वे घर, स्कूल, कार्यस्थल और स्थानीय समाज से आगे जाते हैं, और इसे सर्व-समावेशी मानते हैं, जिसमें न केवल राष्ट्र और समस्त मानवता शामिल होती है, बल्कि अतीत से भविष्य तक का संपूर्ण समय अक्ष भी शामिल होता है - और वे इसमें पौधे, जानवर और यहां तक कि निर्जीव वस्तुएं भी शामिल करते हैं।

युवक: हुह?

दार्शनिक: दूसरे शब्दों में, वह यह कह रहे हैं कि समुदाय केवल उन पूर्व-मौजूदा ढांचों में से एक नहीं है, जो इस शब्द से मन में आते हैं, बल्कि इसमें वस्तुतः सब कुछ सम्मिलित है - संपूर्ण ब्रह्मांड, अतीत से लेकर भविष्य तक।

युवक: बिल्कुल नहीं। अब तुम मुझे भूल ही गए। ब्रह्मांड? भूत और भविष्य? आखिर तुम किस बारे में बात कर रहे हो?

दार्शनिक: यह सुनने वालों में से ज़्यादातर लोगों को इसी तरह के संदेह होते हैं। यह ऐसी बात नहीं है जिसे कोई तुरंत समझ सके। एडलर ने खुद स्वीकार किया था कि जिस समुदाय का वे समर्थन कर रहे थे, वह "एक अप्राप्य आदर्श" था।

युवक: हा-हा। वाह, ये तो हैरान करने वाली बात है ना? तो फिर उल्टा क्या होगा?
क्या आप सचमुच इस सामुदायिक भावना को समझते हैं और स्वीकार करते हैं, या जो भी यह है, जिसमें संपूर्ण ब्रह्मांड शामिल है?

दार्शनिक: मैं कोशिश करता हूँ। क्योंकि मुझे लगता है कि इस बात को समझे बिना एडलरियन मनोविज्ञान को सही मायने में समझना संभव नहीं है।

युवक: ठीक है!

दार्शनिक: जैसा कि मैं हमेशा से कहता आया हूँ, एडलरियन मनोविज्ञान का मानना है कि सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। पारस्परिक संबंध ही दुख का स्रोत हैं। और इसका उल्टा भी कहा जा सकता है—पारस्परिक संबंध ही सुख का स्रोत हैं।

युवक: बिल्कुल।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: इसके अलावा, सामुदायिक भावना पारस्परिक संबंधों की खुशहाल स्थिति पर विचार करने के लिए सबसे महत्वपूर्ण सूचकांक है।

युवक: ठीक है। मैं इसके बारे में सब कुछ सुनना चाहता हूँ।

दार्शनिक: सामुदायिक भावना को "सामाजिक हित" भी कहा जाता है, यानी "समाज में रुचि।" तो अब मेरा आपसे एक प्रश्न है: क्या आप जानते हैं कि समाजशास्त्र की दृष्टि से समाज की सबसे छोटी इकाई क्या है?

युवा: समाज की सबसे छोटी इकाई, है ना? मैं तो कहूँगा परिवार।

दार्शनिक: नहीं, यह "आप और मैं" है। जब दो लोग होते हैं, तो उनकी उपस्थिति में समाज उभरता है, और समुदाय भी उभरता है। एडलर जिस सामुदायिक भावना की बात करते हैं, उसे समझने के लिए, "आप और मैं" को शुरुआती बिंदु के रूप में इस्तेमाल करना उचित है।

युवा: और आप इसे शुरुआती बिंदु मानकर क्या करते हैं?

दार्शनिक: आप स्वयं के प्रति आसक्ति (स्व-हित) से दूसरों के प्रति चिंता (सामाजिक हित) की ओर बढ़ते हैं।

युवा: खुद से लगाव? दूसरों की चिंता? ये सब क्या है?

Machine Translated by Google

मैं केवल अपने आप में ही क्यों दिलचस्पी रखता हूँ?

दार्शनिक: अच्छा, आइए इस पर ठोस रूप से विचार करें। स्पष्टता के लिए, "स्वयं से लगाव" के स्थान पर मैं "स्व-केंद्रित" शब्द का प्रयोग करूँगा। आपके विचार से, जो व्यक्ति आत्म-केंद्रित होता है, वह कैसा व्यक्ति होता है?

युवक: हम्म, मुझे लगता है सबसे पहले जो बात दिमाग में आती है, वह है एक तानाशाह जैसा इंसान। ऐसा इंसान जो दबंग हो, दूसरों को परेशान करने में ज़रा भी संकोच न करे, और सिर्फ़ अपने फायदे के बारे में ही सोचता हो। उसे लगता है कि दुनिया उसके इर्द-गिर्द घूमती है, और वह एक तानाशाह की तरह व्यवहार करता है जो पूरी ताकत और अधिकार से शासन करता है। वह एक ऐसा इंसान है जो अपने आस-पास के सभी लोगों के लिए ढेर सारी मुसीबतें खड़ी करता है। ऐसा इंसान जो बिल्कुल शेक्सपियर के किंग लीयर जैसा, एक ठेठ तानाशाह है।

दार्शनिक: मैं समझ गया।

युवा: दूसरी ओर, वह ज़रूरी नहीं कि अत्याचारी हो—जो व्यक्ति समूह के सामंजस्य को बिगाड़ता है, उसे भी स्वार्थी कहा जा सकता है। वह ऐसा व्यक्ति है जो समूह में काम नहीं कर सकता और अकेले काम करना पसंद करता है। वह अपने कार्यों पर कभी विचार नहीं करता, तब भी नहीं जब वह नियुक्तियों के लिए देर से पहुँचता है या अपने वादे पूरे नहीं कर पाता। संक्षेप में, वह एक अहंकारी है।

दार्शनिक: निश्चित रूप से, आत्मकेंद्रित लोगों के बारे में सोचते समय आमतौर पर यही छवि मन में आती है। लेकिन एक और प्रकार भी है जिस पर ध्यान देना ज़रूरी है। जो लोग कार्यों का पृथक्करण करने में असमर्थ होते हैं और जो पहचान पाने की लालसा से ग्रस्त होते हैं, वे भी अत्यधिक आत्मकेंद्रित होते हैं।

युवक: ऐसा क्यों?

दार्शनिक: पहचान पाने की चाहत की हकीकत पर गौर कीजिए। दूसरे लोग आप पर कितना ध्यान देते हैं, और आपके बारे में उनकी क्या राय है? यानी, आप कितना ध्यान देते हैं?

Machine Translated by Google

क्या वे आपकी इच्छा पूरी करते हैं? जो लोग पहचान पाने की ऐसी चाहत से ग्रस्त होते हैं, वे दूसरों को देखते हुए प्रतीत होंगे, जबकि वास्तव में वे केवल अपने आप को ही देख रहे होते हैं। उन्हें दूसरों की कोई परवाह नहीं होती और वे केवल "मैं" में ही उलझे रहते हैं।

सीधे शब्दों में कहें तो वे आत्म-केंद्रित हैं।

युवा: तो क्या आप कहेंगे कि मेरे जैसे लोग, जो दूसरों द्वारा आलोचना से डरते हैं, आत्म-केंद्रित भी होते हैं? हालाँकि मैं दूसरों का ध्यान रखने और उनके अनुसार खुद को ढालने की बहुत कोशिश करता हूँ?

दार्शनिक: हाँ। इस अर्थ में कि आप सिर्फ़ "मैं" में ही उलझे रहते हैं, आप आत्म-केंद्रित हैं। आप चाहते हैं कि दूसरे आपके बारे में अच्छा सोचें, और इसीलिए आप इस बात की चिंता करते हैं कि वे आपको किस नज़र से देखते हैं। यह दूसरों के लिए चिंता नहीं है। यह सिर्फ़ अपने प्रति आसक्ति है।

युवक: लेकिन...

दार्शनिक: यह वही बात है जिसके बारे में मैंने पिछली बार बात की थी। यह तथ्य कि कुछ लोग आपके बारे में अच्छा नहीं सोचते, इस बात का प्रमाण है कि आप आज़ादी से जी रहे हैं। हो सकता है आपको इसमें कुछ आत्मकेंद्रितता का एहसास हो। लेकिन मुझे लगता है कि आज की चर्चा से आप इसे समझ गए होंगे: एक ऐसा जीवन जीने का तरीका जिसमें व्यक्ति लगातार इस बात से परेशान रहता है कि दूसरे उसे कैसे देखते हैं, एक आत्मकेंद्रित जीवनशैली है जिसमें व्यक्ति का एकमात्र सरोकार "मैं" से होता है।

युवक: अच्छा, यह तो आश्चर्यजनक बयान है!

दार्शनिक: केवल आप ही नहीं, बल्कि वे सभी लोग जो “मैं” से जुड़े हैं, आत्म-केंद्रित हैं।
और यही कारण है कि “स्वयं के प्रति लगाव” से “दूसरों के प्रति चिंता” की ओर बदलाव करना आवश्यक है।

युवा: ठीक है, तो हाँ, यह सच है कि मैं हमेशा सिर्फ़ अपने आप को ही देखता हूँ, यह मैं मानता हूँ। मुझे हमेशा इस बात की चिंता रहती है कि दूसरे लोग मुझे कैसे देखते हैं, लेकिन इस बात की नहीं कि मैं उन्हें कैसे देखता हूँ। अगर आप कह रहे हैं कि मैं आत्मकेंद्रित हूँ, तो मैं इसका खंडन करने के लिए कुछ नहीं कह सकता। लेकिन इस बारे में ऐसे सोचें: अगर मेरा जीवन एक फीचर-लेंथ फिल्म होता, तो नायक निश्चित रूप से यही "मैं" होता, है ना? क्या नायक की ओर कैमरा तानना वाकई इतनी निंदनीय बात है?

Machine Translated by Google

आप दुनिया के केंद्र नहीं हैं

दार्शनिक: आइए क्रम से इन बातों पर गौर करें। सबसे पहले, हम में से हर कोई एक समुदाय का सदस्य है, और यहीं हमारा स्थान है। यह महसूस करना कि समुदाय के भीतर हमारा अपना एक आश्रय स्थल है, यह महसूस करना कि "यहाँ रहना ठीक है," और अपनेपन का एहसास होना—ये बुनियादी मानवीय इच्छाएँ हैं। चाहे वह पढ़ाई हो, काम हो, दोस्ती हो, या प्यार हो या शादी, ये सभी चीज़ें उन जगहों और रिश्तों की तलाश से जुड़ी हैं जहाँ हम महसूस कर सकें कि "यहाँ रहना ठीक है।" क्या आप सहमत नहीं हैं?

युवक: हाँ, हाँ, बिल्कुल! बिल्कुल!

दार्शनिक: और किसी के जीवन का नायक "मैं" ही है। यहाँ तक की विचारधारा में कोई बुराई नहीं है। लेकिन "मैं" दुनिया के केंद्र पर राज नहीं करता।
यद्यपि "मैं" जीवन का नायक है, लेकिन यह कभी भी समुदाय के एक सदस्य और समग्रता के एक भाग से अधिक नहीं होता।

युवा: सम्पूर्ण का एक हिस्सा?

दार्शनिक: जो लोग सिर्फ़ अपने बारे में सोचते हैं, वे सोचते हैं कि वे दुनिया के केंद्र में हैं। ऐसे लोगों के लिए, दूसरे लोग बस " मेरे लिए कुछ करने वाले लोग " हैं। वे आधे-अधूरे तौर पर मानते हैं कि बाकी सब उनकी सेवा के लिए हैं और उन्हें उनकी भावनाओं को प्राथमिकता देनी चाहिए।

युवक: बिल्कुल राजकुमार या राजकुमारी की तरह।

दार्शनिक: हाँ, बिल्कुल। वे "जीवन के नायक" से "दुनिया के नायक" बनने की छलांग लगाते हैं। इसीलिए, जब भी वे किसी दूसरे व्यक्ति के संपर्क में आते हैं, तो बस यही सोचते हैं, " यह व्यक्ति मुझे क्या देगा?" हालाँकि—और यह बात राजकुमारों और राजकुमारियों के लिए सच नहीं है—यह

Machine Translated by Google

हर मौके पर आपकी उम्मीदें पूरी नहीं होंगी। क्योंकि दूसरे लोग आपकी उम्मीदों को पूरा करने के लिए नहीं जी रहे हैं।

युवक: बिल्कुल।

दार्शनिक: फिर, जब उनकी उम्मीदें पूरी नहीं होतीं, तो वे बहुत निराश हो जाते हैं और उन्हें लगता है जैसे उनका बहुत अपमान हुआ है। वे नाराज़ हो जाते हैं और सोचते हैं, " उस व्यक्ति ने मेरे लिए कुछ नहीं किया। उस व्यक्ति ने मुझे निराश किया।"

वह व्यक्ति अब मेरा साथी नहीं रहा। वह मेरा दुश्मन है। जो लोग यह मानते हैं कि वे दुनिया के केंद्र हैं, वे हमेशा जल्द ही अपने साथियों को खो देते हैं।

युवक: यह तो अजीब है। क्या आपने नहीं कहा था कि हम एक व्यक्तिपरक दुनिया में रह रहे हैं? जब तक दुनिया एक व्यक्तिपरक स्थान है, मैं ही इसके केंद्र में रह सकता हूँ। मैं किसी और को वहाँ नहीं रहने दूँगा।

दार्शनिक: मेरा मानना है कि जब आप "दुनिया" की बात करते हैं, तो आपके मन में दुनिया के नक्शे जैसा कुछ होता है।

युवक: दुनिया का नक्शा? आप किस बारे में बात कर रहे हैं?

दार्शनिक: उदाहरण के लिए, फ्रांस में इस्तेमाल किए गए विश्व मानचित्र में, अमेरिका बाईं ओर और एशिया दाईं ओर है। यूरोप और फ्रांस, ज़ाहिर है, मानचित्र के केंद्र में दर्शाए गए हैं। दूसरी ओर, चीन में इस्तेमाल किए गए विश्व मानचित्र में अमेरिका दाईं ओर और यूरोप बाईं ओर है। फ्रांसीसी लोग, जो चीनी विश्व मानचित्र देखते हैं, उन्हें एक ऐसी असंगति का अनुभव होगा जिसे बयान करना मुश्किल है, मानो उन्हें अन्यायपूर्ण तरीके से किनारे कर दिया गया हो, या मनमाने ढंग से दुनिया से अलग कर दिया गया हो।

युवक: हां, मैं आपकी बात समझता हूं।

दार्शनिक: लेकिन क्या होता है जब विश्व को दर्शाने के लिए ग्लोब का उपयोग किया जाता है?
क्योंकि ग्लोब से आप दुनिया को फ्रांस, चीन या ब्राज़ील को केंद्र में रखकर देख सकते हैं। हर जगह केंद्र में है, और कोई भी जगह एक ही समय में केंद्र में नहीं है। दर्शक की स्थिति और देखने के कोण के अनुसार, ग्लोब पर अनगिनत केंद्र हो सकते हैं। यही ग्लोब की प्रकृति है।

युवक: हम्म, यह सच है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: ज़रा सोचिए कि मैंने पहले क्या कहा था—कि आप दुनिया के केंद्र नहीं हैं—और यह भी वही बात है। आप एक समुदाय का हिस्सा हैं, उसका केंद्र नहीं।

युवक: मैं दुनिया का केंद्र नहीं हूँ। हमारी दुनिया एक ग्लोब है, कोई नक्शा नहीं जो किसी प्लेन पर काटा गया हो। खैर, सैद्धांतिक रूप से तो मैं इसे समझ सकता हूँ। लेकिन मुझे इस बात का एहसास क्यों होना चाहिए कि मैं दुनिया का केंद्र नहीं हूँ?

दार्शनिक: अब हम वहीं लौटेंगे जहाँ से हमने शुरुआत की थी। हम सभी अपनेपन की भावना की तलाश में हैं, कि "यहाँ होना ठीक है।" हालाँकि, एडलरियन मनोविज्ञान में, अपनेपन की भावना एक ऐसी चीज़ है जिसे कोई व्यक्ति केवल अपनी इच्छा से समुदाय के प्रति सक्रिय प्रतिबद्धता बनाकर ही प्राप्त कर सकता है, न कि केवल यहाँ रहकर।

युवा: सक्रिय प्रतिबद्धता जताकर? असल में कोई क्या करता है?

दार्शनिक: व्यक्ति अपने जीवन के कार्यों का सामना करता है। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति काम, मित्रता और प्रेम के पारस्परिक संबंधों के कार्यों से बचते हुए, स्वयं ही आगे बढ़ता है। यदि आप "दुनिया के केंद्र" हैं, तो आपके मन में समुदाय के प्रति प्रतिबद्धता के बारे में कोई विचार नहीं होंगे; क्योंकि बाकी सभी लोग "मेरे लिए कुछ न कुछ करेंगे" और आपको स्वयं कुछ करने की कोई आवश्यकता नहीं है। लेकिन आप दुनिया के केंद्र नहीं हैं, और न ही मैं हूँ। व्यक्ति को अपने पैरों पर खड़ा होना होगा, और पारस्परिक संबंधों के कार्यों के साथ अपने कदम स्वयं आगे बढ़ाने होंगे। व्यक्ति को यह नहीं सोचना चाहिए कि यह व्यक्ति मुझे क्या देगा? बल्कि यह सोचना चाहिए कि मैं इस व्यक्ति को क्या दे सकता हूँ? यही समुदाय के प्रति प्रतिबद्धता है।

युवक: क्या इसलिए कि कोई कुछ देता है, उसे शरण मिलती है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। अपनेपन का एहसास एक ऐसी चीज़ है जो इंसान अपने प्रयासों से हासिल करता है—यह कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो उसे जन्म से ही मिल जाती है।
सामुदायिक भावना एडलरियन मनोविज्ञान की बहुचर्चित प्रमुख अवधारणा है।

यह निश्चित रूप से एक ऐसी अवधारणा थी जिसे युवक को पहले स्वीकार करना कठिन लगा।
और स्वाभाविक रूप से, उसे यह सुनकर दुःख हुआ कि वह आत्मकेंद्रित है। लेकिन उसे सबसे ज़्यादा इस बात को स्वीकार करना मुश्किल लगा कि उस समुदाय का अविश्वसनीय विस्तार, जिसमें ब्रह्मांड और निर्जीव वस्तुएँ शामिल थीं। एडलर और यह दार्शनिक क्या थे?

Machine Translated by Google

आखिर बात किस बारे में हो रही है? हैरान भाव से, युवक ने धीरे से बोलने के लिए अपना मुँह खोला।

Machine Translated by Google

एक बड़े समुदाय की आवाज़ सुनें

युवा: मुझे मानना होगा, आप मुझे भूलने लगे हैं। मुझे बातों को थोड़ा स्पष्ट करने की कोशिश करने दीजिए। सबसे पहले, पारस्परिक संबंधों के द्वार पर, हमारे पास कार्यों का पृथक्करण है, और लक्ष्य के रूप में, सामुदायिक भावना है। और आप कह रहे हैं कि सामुदायिक भावना का अर्थ है "दूसरों को साथी के रूप में समझना" और "समुदाय के भीतर अपनी शरणस्थली होने का एहसास"। यहाँ तक तो मैं इसे समझ और स्वीकार कर सकता हूँ। लेकिन विवरण अभी भी थोड़ा अटपटा लगता है। एक बात तो यह है कि जिस चीज़ को आप "समुदाय" कहते हैं, उसे पूरे ब्रह्मांड, और फिर अतीत और भविष्य, और जीवित प्राणियों से लेकर निर्जीव वस्तुओं तक, सभी को शामिल करने से आपका क्या तात्पर्य है?

दार्शनिक: अगर कोई एडलर की समुदाय की अवधारणा को शाब्दिक रूप से ले और ब्रह्मांड और निर्जीव वस्तुओं सहित उसकी कल्पना करने की कोशिश करे, तो निश्चित रूप से चीज़ों को समझना और भी मुश्किल हो जाता है। फ़िलहाल, इतना कहना ही काफ़ी है कि समुदाय का दायरा अनंत है।

युवक: अनंत?

दार्शनिक: उदाहरण के लिए, एक ऐसे व्यक्ति को लीजिए जो सेवानिवृत्ति की आयु तक पहुँचने और काम करना बंद करने पर, अपनी ऊर्जा खो देता है और अवसादग्रस्त हो जाता है। अचानक उस संगति से, जो उसका समुदाय था, अलग हो जाने और किसी पद या पेशे से वंचित हो जाने पर, वह एक "सामान्य व्यक्ति" बन जाता है। चूँकि वह इस तथ्य को स्वीकार नहीं कर पाता कि वह अब "सामान्य" है, वह लगभग रातोंरात बूढ़ा हो जाता है। लेकिन वास्तव में उस व्यक्ति के साथ बस इतना ही हुआ कि वह उस छोटे से समुदाय से, जो उसकी कंपनी है, अलग हो गया। प्रत्येक व्यक्ति एक अलग समुदाय का सदस्य है। और वास्तव में, हम सभी पृथ्वी के समुदाय और ब्रह्मांड के समुदाय के सदस्य हैं।

युवक: ये तो सरासर कुतर्क है! अचानक ये कहना कि "तुम ब्रह्मांड के हो", मानो इससे किसी को अपनेपन का एहसास हो जाएगा।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: यह सच है, कोई भी अचानक पूरे ब्रह्मांड की कल्पना नहीं कर सकता। फिर भी, मैं चाहता हूँ कि आप यह एहसास करें कि आप एक अलग, बड़े समुदाय से जुड़े हैं जो आपके आस-पास के समुदाय से परे है—उदाहरण के लिए, वह देश या स्थानीय समाज जिसमें आप रहते हैं—और आप उस समुदाय में किसी न किसी तरह से योगदान दे रहे हैं।

युवा: तो ऐसी स्थिति में क्या होगा? मान लीजिए कि एक अविवाहित व्यक्ति है, जिसने अपनी नौकरी और दोस्त खो दिए हैं, और जो दूसरों की संगति से दूर रहता है और सिर्फ़ अपने माता-पिता द्वारा छोड़े गए पैसों पर गुज़ारा करता है। तो वह मूलतः काम के सभी कामों, दोस्ती के कामों और प्यार के कामों से भाग रहा है। क्या आप कहेंगे कि ऐसा व्यक्ति भी किसी न किसी समुदाय से संबंधित है?

दार्शनिक: बिल्कुल। मान लीजिए वह एक रोटी खरीदने जाता है। वह उसका भुगतान एक सिक्के से करता है। वह सिक्का सीधे रोटी बनाने वालों के पास नहीं जाता। वह आटा और मक्खन बनाने वालों के पास जाता है, उन लोगों के पास जाता है जो इन सामग्रियों को पहुँचाते हैं, डिलीवरी वाहनों में इस्तेमाल होने वाले पेट्रोल के विक्रेताओं के पास जाता है, उन तेल उत्पादक देशों के लोगों के पास जाता है जहाँ से वह ईंधन आता है, वगैरह। तो यह सब जुड़ा हुआ है। लोग कभी भी सचमुच अकेले या समुदाय से अलग नहीं होते, और न ही हो सकते हैं।

युवक: तो आप यह कह रहे हैं कि मुझे ब्रेड खरीदते समय अधिक कल्पनाएं करनी चाहिए?

दार्शनिक: यह कोई कल्पना नहीं है। यह एक सच्चाई है। एडलर जिस समुदाय की बात कर रहे हैं, वह हमारे घरों और समाजों जैसी दिखाई देने वाली चीज़ों से कहीं आगे जाता है, और इसमें वे संबंध भी शामिल हैं जिन्हें हम देख नहीं सकते।

युवा: माफ़ कीजिएगा, लेकिन आप अमूर्त सिद्धांत में भटक रहे हैं। यहाँ हमें जिस मुद्दे पर ध्यान देना चाहिए, वह है अपनेपन का एहसास, कि "यहाँ होना ठीक है।"

और फिर, इस अपनेपन के अर्थ के संदर्भ में, हम जिस समुदाय को देखते हैं, वह ज़्यादा मज़बूत है। आप इससे सहमत होंगे, है ना? उदाहरण के लिए, अगर हम "कंपनी" समुदाय की तुलना "पृथ्वी" समुदाय से करें, तो "मैं इस कंपनी का सदस्य हूँ" कहने वाले व्यक्ति का अपनेपन का भाव ज़्यादा मज़बूत होगा।

आपकी शब्दावली में कहें तो, पारस्परिक संबंधों की दूरी और गहराई बिल्कुल अलग-अलग होती है। यह स्वाभाविक है कि जब हम अपनेपन की भावना की तलाश करते हैं, तो हम छोटे समुदाय की ओर आकर्षित होते हैं।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: यह एक सूक्ष्म अवलोकन है। तो आइए इस बारे में सोचना शुरू करें कि हमें विविध और बड़े समुदायों के प्रति जागरूक क्यों होना चाहिए। जैसा कि मैंने पहले कहा, हम सभी विविध समुदायों से जुड़े हैं। हम अपने घरों, अपने स्कूलों, अपने कार्यस्थलों, और स्थानीय समाजों और उन देशों से जुड़े हैं जिनमें हम रहते हैं। क्या आप इस बात से सहमत हैं?

युवक: हां, मैं करता हूं।

दार्शनिक: मान लीजिए कि एक छात्र के रूप में, आपने "स्कूल" नामक समुदाय को पूर्ण माना। दूसरे शब्दों में, स्कूल आपके लिए सब कुछ है, आपका "मैं" स्कूल की वजह से ही अस्तित्व में है, और इसके बिना कोई और "मैं" संभव नहीं है। लेकिन स्वाभाविक रूप से, उस समुदाय में ऐसे मौके आएंगे जब आपको विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ेगा। यह आपके साथ बदसलूकी हो सकती है, या दोस्त न बना पाना, या अपने स्कूल के काम में पूरी तरह से न लग पाना, या स्कूल की व्यवस्था के साथ तालमेल न बिठा पाना हो सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि, यह संभव है कि आपके स्कूल जैसे समुदाय के संबंध में, आपके मन में "यहाँ रहना ठीक है" वाली आत्मीयता की भावना न हो।

युवक: हाँ, बिल्कुल। यह बिल्कुल संभव है।

दार्शनिक: जब ऐसा होगा, अगर आप स्कूल को ही अपना सब कुछ समझते हैं, तो आप किसी भी चीज़ से जुड़ाव महसूस नहीं करेंगे। और फिर, आप अपने घर जैसे एक छोटे से समुदाय में सिमट जाएँगे। आप खुद को बंद कर लेंगे, और शायद अपने ही परिवार के सदस्यों के खिलाफ हिंसा भी करने लगेंगे। और ऐसा करके, आप किसी तरह अपनेपन का एहसास हासिल करने की कोशिश करेंगे। हालाँकि, मैं चाहता हूँ कि आप यहाँ इस बात पर ध्यान केंद्रित करें कि एक "ज़्यादा अलग समुदाय" है और उससे भी बढ़कर, एक "बड़ा समुदाय" भी है।

युवक: इसका क्या मतलब है?

दार्शनिक: एक बड़ी दुनिया है जो स्कूल की सीमाओं से कहीं आगे तक फैली हुई है। और हम में से हर कोई उस दुनिया का सदस्य है। अगर आपके स्कूल में शरण की कोई जगह नहीं है, तो आपको स्कूल की चारदीवारी के बाहर एक अलग शरणस्थली ढूँढ़नी चाहिए। आप स्कूल बदल सकते हैं, और स्कूल से नाम वापस लेना भी ठीक है। एक ऐसा समुदाय जिससे आप सिर्फ़ नाम वापसी का नोटिस देकर संबंध तोड़ सकते हैं, वह ऐसा समुदाय है जिससे आपका किसी भी हालत में ज़्यादा जुड़ाव नहीं हो सकता। एक बार जब आप दुनिया को कितना बड़ा जान जाएँगे, तो आप देखेंगे कि स्कूल में आपने जो भी मुश्किलें झेलीं, वे छोटी-सी बात पर बड़ा बवाल थीं।

Machine Translated by Google

जिस क्षण आप चाय का प्याला छोड़ेंगे, वह प्रचंड तूफ़ान चला जाएगा, और उसके स्थान पर एक हल्की हवा आपका स्वागत करेगी।

युवक: क्या आप यह कह रहे हैं कि जब तक आप स्वयं को चाय के कप के अंदर बंद रखेंगे, तब तक आपको उसके बाहर निकलने का कोई मौका नहीं मिलेगा?

दार्शनिक: अपने कमरे में खुद को बंद कर लेना चाय के प्याले में बंद रहने जैसा है, मानो आप किसी छोटे से आश्रय में दुबके हुए हों। हो सकता है कि आप थोड़ी देर बारिश का इंतज़ार कर लें, लेकिन तूफ़ान तो बदस्तूर जारी रहेगा।

युवक: खैर, सिद्धांततः तो ऐसा हो सकता है। लेकिन इससे बाहर निकलना मुश्किल है। स्कूल छोड़ने का फ़ैसला कोई हल्के में लेने वाली बात नहीं है।

दार्शनिक: मुझे यकीन है कि आप सही हैं—यह आसान नहीं होगा। इसलिए, कार्रवाई का एक सिद्धांत है जिसे मैं चाहूँगा कि आप याद रखें। जब हम अपने पारस्परिक संबंधों में कठिनाइयों का सामना करते हैं, या जब हमें कोई रास्ता नज़र नहीं आता, तो हमें सबसे पहले उस सिद्धांत पर विचार करना चाहिए जो कहता है, "बड़े समुदाय की आवाज़ सुनो।"

युवा: बड़े समुदाय की आवाज?

दार्शनिक: अगर यह एक स्कूल है, तो कोई भी चीज़ का मूल्यांकन उस समुदाय, यानी स्कूल, की सामान्य समझ से नहीं करता, बल्कि एक बड़े समुदाय की सामान्य समझ का अनुसरण करता है। मान लीजिए कि यह आपका स्कूल है, और आपके शिक्षक एक तानाशाही व्यवहार कर रहे हैं। लेकिन आपके शिक्षक के पास जो शक्ति या अधिकार है, वह उस सामान्य समझ के एक पहलू से ज़्यादा कुछ नहीं है जो केवल उस छोटे से समुदाय, यानी स्कूल, तक ही सीमित है। उस समुदाय, यानी "मानव समाज" के दृष्टिकोण से, आप और आपके शिक्षक, दोनों समान मनुष्य हैं। अगर आप पर अनुचित माँगें थोपी जा रही हैं, तो उन पर सीधे आपत्ति करना ठीक है।

युवक: लेकिन जब शिक्षक मेरे सामने होंगे तो आपत्ति करना बहुत कठिन होगा।

दार्शनिक: बिलकुल नहीं। हालाँकि इसे "तुम और मैं" वाला रिश्ता कहा जा सकता है, लेकिन अगर यह सिर्फ़ आपके विरोध जताने पर टूट सकता है, तो यह ऐसा रिश्ता नहीं है जो आपको शुरू से ही बनाना चाहिए। इसे छोड़ देना ही ठीक है। अपने रिश्तों के बिखरने के डर में जीना, जीने का एक आज़ादी-भरा तरीका है, जिसमें इंसान दूसरों के लिए जी रहा होता है।

Machine Translated by Google

युवक: आप यह कह रहे हैं कि मुझे सामुदायिक भावना के साथ-साथ स्वतंत्रता का भी चयन करना चाहिए?

दार्शनिक: हाँ, बिल्कुल। अपने सामने मौजूद छोटे से समुदाय से चिपके मत रहो।
हमेशा अधिक संख्या में "आप और मैं" और अधिक संख्या में "सभी" होंगे, तथा बड़े समुदाय मौजूद रहेंगे।

Machine Translated by Google

डाँटें या प्रशंसा न करें

युवक: ठीक है, ठीक है। लेकिन समझ नहीं आ रहा? आपने ज़रूरी बात पर ध्यान ही नहीं दिया, यानी कार्यों के पृथक्करण से लेकर सामुदायिक भावना तक की प्रगति का क्रम।
तो सबसे पहले, मैं कार्यों को अलग करता हूँ। मैं अपने कार्यों को इस बिंदु तक मानता हूँ, और उसके बाद का सब कुछ दूसरों का कार्य है। मैं दूसरों के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करता, और मैं एक सीमा रेखा खींचता हूँ ताकि दूसरे मेरे कार्यों में हस्तक्षेप न करें। लेकिन कार्यों के इस पृथक्करण के साथ कोई पारस्परिक संबंध कैसे बना सकता है और अंततः इस सामुदायिक भावना तक कैसे पहुँच सकता है कि "यहाँ रहना ठीक है"? एडलरियन मनोविज्ञान हमें काम, दोस्ती और प्रेम जैसे जीवन के कार्यों पर विजय पाने की सलाह कैसे देता है? ऐसा लगता है कि आप बिना किसी ठोस व्याख्या के, केवल अमूर्त शब्दों से मुझे भ्रमित करने की कोशिश कर रहे हैं।

दार्शनिक: हाँ, आपने बिल्कुल सही बात कही है। कार्यों को अलग-अलग करना अच्छे संबंधों से कैसे जुड़ा है? यानी, यह उन संबंधों के निर्माण से कैसे जुड़ा है जिनमें हम एक-दूसरे के साथ सहयोग और सामंजस्य से काम करते हैं? यही हमें "क्षैतिज संबंध" की अवधारणा पर लाता है।

युवा: क्षैतिज संबंध?

दार्शनिक: आइए एक आसानी से समझ आने वाले उदाहरण से शुरुआत करते हैं, वह है माता-पिता और बच्चे के रिश्ते का। चाहे परिस्थितियाँ, उदाहरण के लिए, बच्चों के पालन-पोषण की हों, या कार्यस्थल पर कनिष्ठ कर्मचारियों को प्रशिक्षित करने की, आम तौर पर दो तरीकों पर विचार किया जाता है: एक है डाँट-फटकार कर पालन-पोषण करने का तरीका, और दूसरा है प्रशंसा करके पालन-पोषण करने का तरीका।

युवक: आह, यह एक गरमागरम बहस का मुद्दा है।

दार्शनिक: आपके अनुसार कौन सा विकल्प बेहतर है? डाँटना या प्रशंसा करना?

युवक: बेशक, प्रशंसा करके इसे बढ़ाना बेहतर है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: क्यों?

युवा: उदाहरण के लिए, पशु प्रशिक्षण को ही लीजिए। जानवरों को करतब सिखाते समय, आप उन्हें कोड़े से आज्ञापालन करवा सकते हैं। यह "डाँट-फटकार कर उठाने" का एक विशिष्ट तरीका है। दूसरी ओर, जानवरों को भोजन का इनाम देकर या दयालु शब्द कहकर भी करतब सिखाना संभव है। इसे "प्रशंसा करके उठाने" का तरीका कहते हैं। दोनों ही तरीकों से एक ही परिणाम मिल सकते हैं—वे नए करतब सीखते हैं। लेकिन उद्देश्य की ओर बढ़ने की प्रेरणा पूरी तरह से अलग होती है, अगर जानवर ऐसा इसलिए कर रहा है क्योंकि उसे डाँटा जाएगा या इसलिए कर रहा है क्योंकि वह प्रशंसा चाहता है। बाद वाले मामले में, यह खुशी की भावना के साथ आएगा।

डाँटने से तो जानवर मुरझा जाता है। लेकिन प्रशंसा से पालने से वह स्वाभाविक रूप से मज़बूत और स्वस्थ बनता है। यह एक स्पष्ट निष्कर्ष लगता है।

दार्शनिक: पशु प्रशिक्षण एक दिलचस्प उदाहरण है। अब आइए इसे एडलरियन मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से देखें। एडलरियन मनोविज्ञान में, हम यह मानते हैं कि बच्चों के पालन-पोषण में, और दूसरों के साथ संवाद के किसी भी अन्य तरीके में, प्रशंसा नहीं करनी चाहिए।

युवक: प्रशंसा नहीं करनी चाहिए?

दार्शनिक: शारीरिक दंड तो बिल्कुल ही नहीं दिया जा सकता, और डाँट-फटकार भी स्वीकार्य नहीं है। किसी की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए, और किसी की फटकार भी नहीं। यही एडलरियन मनोविज्ञान का दृष्टिकोण है।

युवक: लेकिन यह कैसे संभव है?

दार्शनिक: प्रशंसा की वास्तविकता पर विचार करें। मान लीजिए, मैंने आपके किसी कथन की प्रशंसा करते हुए कहा, "वाह!" क्या ये शब्द सुनना आपको अजीब नहीं लगेगा?

युवक: हां, मुझे लगता है कि इससे मेरा मूड खराब हो जाएगा।

दार्शनिक: क्या आप बता सकते हैं कि यह अप्रिय क्यों लगेगा?

युवा: अप्रिय बात यह है कि "अच्छा काम!" शब्दों से हमें नीचा दिखाया जा रहा है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: बिल्कुल। प्रशंसा करने में, एक पहलू यह भी है कि यह "एक योग्य व्यक्ति द्वारा एक अयोग्य व्यक्ति पर निर्णय देने जैसा है।" एक माँ अपने बच्चे की, जिसने उसे रात का खाना बनाने में मदद की है, प्रशंसा करते हुए कहती है, "तुम कितने अच्छे मददगार हो!" लेकिन जब उसका पति भी यही करता है, तो आप निश्चिंत रह सकते हैं कि वह उससे यह नहीं कहेगी, "तुम कितने अच्छे मददगार हो!"

युवक: हा-हा, आप सही कह रहे हैं।

दार्शनिक: दूसरे शब्दों में, जो माँ बच्चे की प्रशंसा करते हुए कहती है कि “तुम बहुत अच्छे सहायक हो!” या “अच्छा काम किया!” या “अच्छा, तुम कुछ खास तो हो!” वह अनजाने में एक पदानुक्रमिक संबंध बना रही है और बच्चे को अपने से नीचे समझ रही है।

आपने अभी जो पशु प्रशिक्षण का उदाहरण दिया, वह भी प्रशंसा के पीछे छिपे पदानुक्रमिक संबंध—ऊर्ध्वाधर संबंध—का प्रतीक है। जब एक व्यक्ति दूसरे की प्रशंसा करता है, तो उसका उद्देश्य "किसी ऐसे व्यक्ति को नियंत्रित करना होता है जिसकी क्षमता आपसे कम है।" यह कृतज्ञता या सम्मान से नहीं किया जाता।

युवक: तो आप यह कह रहे हैं कि कोई व्यक्ति चालाकी करने के लिए प्रशंसा करता है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। हम चाहे दूसरों की तारीफ़ करें या डाँटें, फर्क बस इतना है कि हम उन्हें इनाम देते हैं या उन्हें डंडे से मारते हैं, और असली मकसद तो बस चालाकी करना है। एडलरियन मनोविज्ञान इनाम-और-दंड शिक्षा की इतनी आलोचना इसलिए करता है क्योंकि इसका मकसद बच्चों को चालाकी से प्रभावित करना होता है।

युवा: बिलकुल नहीं, आप ग़लत हैं। क्योंकि इसे एक बच्चे के नज़रिए से सोचिए। क्या बच्चों के लिए अपने माता-पिता से तारीफ़ पाना सबसे बड़ी खुशी नहीं होती? क्योंकि वे अपनी पढ़ाई के लिए तारीफ़ चाहते हैं। क्योंकि वे सही व्यवहार करना सीखते हैं, इसलिए तारीफ़ चाहते हैं। मेरे साथ भी बचपन में ऐसा ही था। मैं अपने माता-पिता से कितनी तारीफ़ चाहता था! और बड़े होने के बाद भी, यह वैसा ही है। जब आपका बॉस आपकी तारीफ़ करता है, तो अच्छा लगता है। सबके साथ ऐसा ही होता है। इसका तर्क से कोई लेना-देना नहीं है—यह बस एक सहज भावना है!

दार्शनिक: कोई चाहता है कि कोई उसकी प्रशंसा करे। या इसके विपरीत, कोई किसी की प्रशंसा करने का निश्चय करता है। यह इस बात का प्रमाण है कि वह सभी पारस्परिक संबंधों को "ऊर्ध्वाधर संबंधों" के रूप में देख रहा है। यह आपके लिए भी सत्य है: चूँकि आप ऊर्ध्वाधर संबंधों में रह रहे हैं, इसलिए आप प्रशंसा चाहते हैं। एडलरियन मनोविज्ञान सभी प्रकार के ऊर्ध्वाधर संबंधों का खंडन करता है और प्रस्तावित करता है कि सभी पारस्परिक संबंध

Machine Translated by Google

क्षैतिज संबंध। एक अर्थ में, इस बिंदु को एडलरियन मनोविज्ञान का मूल सिद्धांत माना जा सकता है।

युवा: क्या यह वही बात है जो "समान लेकिन एक जैसा नहीं" शब्दों से व्यक्त होती है?

दार्शनिक: हाँ। बराबर, यानी क्षैतिज। उदाहरण के लिए, कुछ पुरुष अपनी पत्नियों को, जो घर का सारा काम करती हैं, गालियाँ देते हैं, जैसे "तुम पैसे नहीं कमा रही हो, इसलिए मैं यह नहीं सुनना चाहता" या "मेरी बदौलत ही मेज़ पर खाना है।" और मुझे यकीन है कि आपने यह पहले भी सुना होगा: "तुम्हारे पास ज़रूरत की हर चीज़ है, तो तुम किस बात की शिकायत कर रही हो?" यह बिल्कुल शर्मनाक है। आर्थिक श्रेष्ठता या ऐसे ही अन्य बयानों का मानवीय मूल्य से कोई लेना-देना नहीं है। एक कंपनी कर्मचारी और एक पूर्णकालिक गृहिणी के कार्यस्थल और भूमिकाएँ बस अलग-अलग होती हैं, और वे वास्तव में "समान तो हैं, लेकिन एक जैसे नहीं हैं।"

युवक: मैं पूरी तरह सहमत हूं।

दार्शनिक: उन्हें शायद डर है कि महिलाएँ उनकी स्थिति को समझ जाएँगी और पुरुषों से ज़्यादा कमाने लगेंगी, और महिलाएँ अपनी बात मनवाने लगेंगी। वे सभी पारस्परिक संबंधों को ऊर्ध्वाधर संबंधों के रूप में देखते हैं, और उन्हें डर है कि महिलाएँ उन्हें अपने से नीचे समझेंगी। यानी, उनमें हीनता की गहरी, छिपी हुई भावनाएँ होती हैं।

युवा: तो क्या एक तरह से वे श्रेष्ठता की भावना से ग्रस्त हो रहे हैं, जिसमें वे अपनी क्षमताओं का प्रदर्शन करने का प्रयास कर रहे हैं?

दार्शनिक: ऐसा ही लगता है। सबसे पहले, हीनता की भावना एक ऐसी जागरूकता है जो ऊर्ध्वाधर संबंधों में पैदा होती है। अगर कोई ऐसे क्षैतिज संबंध बना सके जो सभी लोगों के लिए "समान हों, लेकिन एक जैसे न हों", तो हीन भावना के उभरने की कोई गुंजाइश नहीं रहेगी।

युवा: हम्म। हो सकता है कि जब मैं दूसरों की तारीफ़ करता हूँ, तो मेरे मन में कहीं न कहीं चालाकी का एहसास होता है। अपने बॉस का दिल जीतने के लिए चापलूसी करना—ये तो चालाकी ही है, है ना? और इसका उल्टा भी है। दूसरों की तारीफ़ों के ज़रिए मेरे साथ भी चालाकी की गई है। अजीब बात है, लगता है मैं भी ऐसा ही इंसान हूँ!

Machine Translated by Google

दार्शनिक: हां, इस अर्थ में कि आप ऊर्ध्वाधर संबंधों से बाहर नहीं निकल पाए हैं, ऐसा प्रतीत होता है।

युवक: यह तो दिलचस्प होता जा रहा है! प्लीज़, आगे बढ़ो!

Machine Translated by Google

प्रोत्साहन दृष्टिकोण

दार्शनिक: जैसा कि आपको याद होगा, कार्यों के पृथक्करण पर हमारी चर्चा में मैंने हस्तक्षेप का विषय उठाया था। यह दूसरे लोगों के कार्यों में दखलंदाज़ी करने की क्रिया है। तो फिर कोई व्यक्ति हस्तक्षेप क्यों करता है? यहाँ भी, पृष्ठभूमि में, ऊर्ध्वाधर संबंध ही सक्रिय हैं। ठीक इसीलिए क्योंकि व्यक्ति पारस्परिक संबंधों को ऊर्ध्वाधर मानता है, और दूसरे पक्ष को अपने से नीचे समझता है, इसलिए हस्तक्षेप करता है। हस्तक्षेप के माध्यम से, व्यक्ति दूसरे पक्ष को इच्छित दिशा में ले जाने का प्रयास करता है। व्यक्ति ने स्वयं को यह विश्वास दिला लिया है कि वह सही है और दूसरा पक्ष गलत। निस्संदेह, यहाँ हस्तक्षेप शुद्ध और स्पष्ट रूप से हेरफेर है। माता-पिता द्वारा बच्चे को पढ़ाई करने का आदेश देना इसका एक विशिष्ट उदाहरण है। हो सकता है कि वे अपने दृष्टिकोण से नेकनीयत से ऐसा कर रहे हों, लेकिन जब बात आती है, तो माता-पिता हस्तक्षेप कर रहे होते हैं और बच्चे को अपनी इच्छित दिशा में ले जाने के लिए हेरफेर करने का प्रयास कर रहे होते हैं।

युवा: यदि कोई क्षैतिज संबंध बना सकता है, तो क्या वह हस्तक्षेप समाप्त हो जाएगा?

दार्शनिक: हाँ, ऐसा होगा।

युवा: ठीक है, अगर आप सिर्फ़ किसी बच्चे की पढ़ाई की बात कर रहे हैं तो बात अलग है। लेकिन जब कोई आपके सामने तकलीफ़ में हो, तो आप उसे यूँ ही नहीं छोड़ सकते, है ना? क्या आप अब भी यही कहेंगे कि मदद करना ही हस्तक्षेप है, और फिर कुछ नहीं करना?

दार्शनिक: इसे अनदेखा नहीं करना चाहिए। ऐसी सहायता देना ज़रूरी है जो हस्तक्षेप में न बदल जाए।

युवा: हस्तक्षेप और सहायता में क्या अंतर है?

दार्शनिक: कार्यों के पृथक्करण पर हमारी चर्चा को याद कीजिए, बच्चे के स्कूल के काम के विषय पर। जैसा कि मैंने तब कहा था, यह एक ऐसा कार्य है जिसे बच्चे को स्वयं हल करना होता है, न कि ऐसा कुछ जो माता-पिता या शिक्षक उसके लिए कर सकते हैं। इसलिए हस्तक्षेप यही है।

Machine Translated by Google

दूसरों के कामों में दखलंदाज़ी करना और उन्हें "तुम्हें पढ़ाई करनी है" या "उस विश्वविद्यालय में दाखिला ले लो" जैसी बातें कहकर निर्देश देना। जबकि दूसरी ओर, सहायता के लिए कार्यों का पृथक्करण और क्षैतिज संबंध भी आवश्यक हैं। यह समझने के बाद कि पढ़ाई बच्चे का काम है, व्यक्ति यह सोचता है कि उसके लिए क्या किया जा सकता है।

ठोस रूप से कहें तो, ऊपर से यह आदेश देने के बजाय कि बच्चे को पढ़ाई करनी ही चाहिए, उस पर इस तरह से कार्य करना चाहिए कि वह अपनी पढ़ाई का ध्यान रखने और अपने कार्यों का सामना स्वयं करने का आत्मविश्वास प्राप्त कर सके।

युवक: और यह कार्रवाई जबरदस्ती तो नहीं की गई?

दार्शनिक: नहीं, ऐसा नहीं है। बिना किसी दबाव के, और कार्यों को हमेशा अलग-अलग रखते हुए, बच्चे को अपने प्रयासों से उन्हें हल करने में मदद की जाती है। यह "घोड़े को पानी तक तो ले जा सकते हैं, लेकिन उसे पानी पिला नहीं सकते" वाला तरीका है। उसे ही अपने कार्यों का सामना करना पड़ता है, और वही संकल्प लेता है।

युवक: तो फिर आप न तो प्रशंसा करते हैं और न ही निन्दा?

दार्शनिक: बिलकुल सही, न तो प्रशंसा की जाती है और न ही फटकार। इस तरह की सहायता, जो क्षैतिज संबंधों पर आधारित होती है, एडलरियन मनोविज्ञान में "प्रोत्साहन" कहलाती है।

युवक: प्रोत्साहन, है ना? हाँ, यही वह शब्द है जिसका ज़िक्र आपने कुछ समय पहले किया था।
आपने कहा था कि आप बाद में स्पष्टीकरण देंगे।

दार्शनिक: जब कोई अपने कामों को पूरा नहीं कर पाता, तो इसका मतलब यह नहीं कि उसमें क्षमता नहीं है। एडलरियन मनोविज्ञान हमें बताता है कि यहाँ मुद्दा क्षमता का नहीं, बल्कि बस यह है कि "व्यक्ति ने अपने कामों का सामना करने का साहस खो दिया है।" और अगर ऐसा है, तो सबसे पहले जो काम करना चाहिए, वह है उस खोए हुए साहस को पुनः प्राप्त करना।

युवा: लेकिन हम तो बस गोल-गोल घूम रहे हैं! यह तो प्रशंसा करने जैसा ही है। जब कोई दूसरा व्यक्ति आपकी प्रशंसा करता है, तो आपको अपनी क्षमता का सही-सही एहसास होता है और आपका साहस वापस लौट आता है। कृपया इस बात पर ज़िद न करें—बस प्रशंसा करने की ज़रूरत को स्वीकार करें।

दार्शनिक: नहीं, मैं इसे स्वीकार नहीं करूंगा।

युवक: क्यों नहीं?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: कारण स्पष्ट है। प्रशंसा पाकर लोग यह मानने लगते हैं कि उनमें कोई योग्यता नहीं है।

युवक: आपने क्या कहा?

दार्शनिक: क्या मैं अपनी बात दोहराऊँ? किसी की जितनी ज़्यादा तारीफ़ होती है, उतना ही ज़्यादा उसे लगता है कि उसमें कोई काबिलियत नहीं है। कृपया इसे याद रखने की पूरी कोशिश करें।

युवक: क्या ऐसे मूर्ख लोग भी होते हैं? सच तो यह है कि तारीफ़ मिलने पर ही इंसान को अपनी काबिलियत का सही-सही एहसास होता है। क्या यह बात साफ़ नहीं है?

दार्शनिक: आप गलत हैं। अगर आपको प्रशंसा से खुशी मिलती भी है, तो यह ऊर्ध्वाधर रिश्तों पर निर्भर रहने और यह स्वीकार करने जैसा है कि आपमें कोई योग्यता नहीं है। क्योंकि प्रशंसा करना एक ऐसा निर्णय है जो एक योग्य व्यक्ति द्वारा एक अयोग्य व्यक्ति पर दिया जाता है।

युवक: मैं इससे सहमत नहीं हो सकता।

दार्शनिक: जब प्रशंसा पाना ही किसी का लक्ष्य बन जाता है, तो वह जीवन जीने का ऐसा तरीका चुन रहा होता है जो दूसरे व्यक्ति के मूल्यों के अनुरूप हो। अब तक के अपने जीवन पर नज़र डालते हुए, क्या आप अपने माता-पिता की उम्मीदों पर खरा उतरने की कोशिश करते-करते थक नहीं गए हैं?

युवक: उम, ठीक है, मुझे ऐसा लगता है।

दार्शनिक: सबसे पहले, कार्यों का पृथक्करण करें। फिर, एक-दूसरे के मतभेदों को स्वीकार करते हुए, समान क्षैतिज संबंध बनाएँ। प्रोत्साहन अगला कदम है।

Machine Translated by Google

कैसे महसूस करें कि आपका मूल्य है

युवक: तो सीधे शब्दों में कहें तो, यह कैसे किया जाए? न तो तारीफ की जा सकती है और न ही फटकार। और क्या शब्द और विकल्प हैं?

दार्शनिक: ज़रा उस समय के बारे में सोचिए जब आपको अपने काम में मदद मिली हो—किसी बच्चे से नहीं, बल्कि किसी ऐसे साथी से जो आपके बराबर का हो—और आपको शायद तुरंत जवाब मिल जाएगा। जब कोई दोस्त आपके घर की सफ़ाई में आपकी मदद करता है, तो आप उससे क्या कहते हैं?

युवक: मैं कहता हूं, “धन्यवाद।”

दार्शनिक: बिलकुल। आप कृतज्ञता के शब्द व्यक्त करते हैं, उस साथी को धन्यवाद कहते हैं जिसने आपके काम में आपकी मदद की है। आप सीधे तौर पर खुशी व्यक्त कर सकते हैं: "मुझे खुशी है।" या आप यह कहकर अपना आभार व्यक्त कर सकते हैं, "यह बहुत मददगार था।" यह प्रोत्साहन का एक ऐसा तरीका है जो क्षैतिज संबंधों पर आधारित है।

युवक: बस इतना ही?

दार्शनिक: हाँ। सबसे ज़रूरी बात यह है कि दूसरों का न्याय न करें। "निर्णय" शब्द ऊर्ध्वाधर संबंधों से निकला है। अगर कोई क्षैतिज संबंध बना रहा है, तो उसके शब्द ज़्यादा स्पष्ट कृतज्ञता, सम्मान और खुशी के होंगे।

युवा: हम्म, आपकी बात कि निर्णय ऊर्ध्वाधर संबंधों से बनता है, बिल्कुल सही लगती है। लेकिन इस बारे में क्या? क्या "धन्यवाद" शब्दों में वाकई इतनी शक्ति हो सकती है कि वे साहस वापस ला सकें? आखिरकार, मुझे लगता है कि मैं प्रशंसा पाना ज़्यादा पसंद करूँगा, भले ही मैं जो शब्द सुन रहा हूँ वे ऊर्ध्वाधर संबंधों से ही क्यों न आए हों।

दार्शनिक: प्रशंसा पाने का मूलतः अर्थ है कि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति से "अच्छा" कहकर अपनी राय दे रहा है। और उस कार्य में क्या अच्छा है या क्या बुरा, यह उस व्यक्ति का पैमाना है। अगर कोई प्रशंसा पाना चाहता है, तो उसके पास कोई विकल्प नहीं होगा।

Machine Translated by Google

बल्कि उस व्यक्ति के मापदंड के अनुसार ढलना और अपनी स्वतंत्रता पर ब्रेक लगाना।
दूसरी ओर, "धन्यवाद" किसी निर्णय के बजाय, कृतज्ञता की एक स्पष्ट अभिव्यक्ति है। जब कोई कृतज्ञता के शब्द सुनता है, तो उसे पता चलता है कि उसने दूसरे व्यक्ति के लिए कुछ योगदान दिया है।

युवा: तो क्या इसका मतलब यह है कि यदि कोई व्यक्ति आपको "अच्छा" भी मानता है, तो भी आपको ऐसा नहीं लगता कि आपने कोई योगदान दिया है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। यह एक ऐसा बिंदु है जो हमारी आगे की चर्चा से भी जुड़ा होगा—एडलरियन मनोविज्ञान में, "योगदान" पर बहुत ज़ोर दिया जाता है।

युवक: ऐसा क्यों?

दार्शनिक: तो फिर, साहस पाने के लिए एक व्यक्ति को क्या करना पड़ता है? एडलर के अनुसार, "जब कोई व्यक्ति यह महसूस करने में सक्षम होता है कि वह योग्य है, तभी वह साहस प्राप्त कर सकता है।"

युवा: कब कोई व्यक्ति यह महसूस करने में सक्षम हो जाता है कि उसका कोई मूल्य है?

दार्शनिक: क्या आपको याद है, जब हम हीनता की भावना पर चर्चा कर रहे थे, तो मैंने इसे व्यक्तिपरक मूल्य का मुद्दा बताया था? क्या कोई यह महसूस कर पाता है कि उसका कोई मूल्य है, या वह खुद को बेकार समझता है? अगर कोई यह महसूस कर पाता है कि उसका कोई मूल्य है, तो वह खुद को वैसे ही स्वीकार कर सकता है जैसे वह है और अपने जीवन के कार्यों का सामना करने का साहस रख सकता है।

तो इस बिंदु पर जो मुद्दा उठता है वह यह है कि आखिर कोई व्यक्ति कैसे यह महसूस कर सकता है कि वह मूल्यवान है?

युवक: हाँ, बिल्कुल! प्लीज़, मुझे चाहिए कि आप इसे साफ़-साफ़ समझाएँ।

दार्शनिक: यह बहुत आसान है। जब कोई यह महसूस करने में सक्षम होता है कि "मैं समाज के लिए लाभदायक हूँ", तभी उसे अपनी कीमत का सही अंदाज़ा हो सकता है। एडलरियन मनोविज्ञान में यही उत्तर दिया जाएगा।

युवक: कि मैं समुदाय के लिए लाभदायक हूं?

दार्शनिक: कि व्यक्ति समुदाय पर, यानी दूसरे लोगों पर, कार्य कर सकता है, और यह महसूस कर सकता है कि "मैं किसी के काम का हूँ।" किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा "अच्छा" समझे जाने के बजाय, अपने व्यक्तिपरक दृष्टिकोण से यह महसूस करने में सक्षम होना कि "मैं

Machine Translated by Google

दूसरों के लिए योगदान दे सकते हैं।" यही वह बिंदु है जहाँ, आखिरकार, हमें अपनी कीमत का सही एहसास हो सकता है। सामुदायिक भावना और प्रोत्साहन के बारे में हम जो कुछ भी चर्चा कर रहे हैं, वह यहाँ जुड़ता है।

युवक: हम्म। मुझे नहीं पता, यह थोड़ा उलझन भरा होने लगा है।

दार्शनिक: अब हम चर्चा के मूल में पहुँच रहे हैं। कृपया कुछ देर और मेरे साथ बने रहिए। यह दूसरों के प्रति चिंता, क्षैतिज संबंध बनाने और प्रोत्साहन का दृष्टिकोण अपनाने के बारे में है। ये सभी बातें "मैं किसी के काम आ सकता हूँ" की गहरी जीवन-चेतना से जुड़ी हैं, और बदले में, आपके जीने के साहस से भी।

युवक: किसी के काम आना। यही तो मेरे जीवन का उद्देश्य है...

दार्शनिक: चलो थोड़ा आराम करते हैं। क्या तुम कॉफ़ी लोगे?

युवक: हाँ, कृपया।

सामुदायिक भावना की चर्चा पहले से कहीं अधिक भ्रामक हो गयी थी।
किसी को प्रशंसा नहीं करनी चाहिए। और न ही किसी को फटकार लगानी चाहिए। दूसरों को आंकने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले सभी शब्द ऊर्ध्वाधर संबंधों से निकले शब्द हैं, और हमें क्षैतिज संबंध बनाने की ज़रूरत है। और जब कोई यह महसूस करने में सक्षम होता है कि वह किसी के लिए उपयोगी है, तभी उसे अपनी कीमत का सच्चा एहसास हो सकता है। इस तर्क में कहीं न कहीं एक बड़ी खामी थी। युवक ने इसे सहज रूप से महसूस किया। जैसे ही उसने गर्म कॉफी की चुस्की ली, उसके मन में अपने दादाजी के विचार कौंध गए।

Machine Translated by Google

वर्तमान में अस्तित्व में रहो

दार्शनिक: अच्छा, क्या तुमने सब कुछ सुलझा लिया है?

युवक: धीरे-धीरे, लेकिन हाँ, यह बात साफ़ होती जा रही है। लगता है आपको इसका एहसास नहीं है, लेकिन अभी आपने कुछ बहुत ही ज़्यादा कहा। यह एक ख़तरनाक, बल्कि अतिवादी राय है जो दुनिया की हर चीज़ को नकार देती है।

दार्शनिक: अरे, सच में? क्या बात है?

युवा: यह विचार कि किसी के काम आना ही व्यक्ति को अपनी कीमत का सच्चा एहसास दिलाता है। अगर इसे दूसरे तरीके से देखें, तो जो व्यक्ति दूसरों के काम नहीं आता, उसका कोई मूल्य नहीं है। यही तो आप कह रहे हैं, है ना? अगर इसे तार्किक रूप से देखा जाए, तो नवजात शिशुओं, अपाहिजों और बिस्तर पर पड़े बुज़ुर्गों का जीवन भी जीने लायक नहीं है। ऐसा कैसे हो सकता है? मेरे दादाजी के बारे में बात करते हैं। वे वृद्धाश्रम में बिस्तर पर पड़े अपना समय बिताते हैं। चूँकि उन्हें मनोभ्रंश है, वे अपने किसी भी बच्चे या पोते-पोती को नहीं पहचानते, और उनकी हालत ऐसी है कि वे निरंतर देखभाल के बिना जी नहीं पाएँगे। कोई सोच भी नहीं सकता कि वे किसी के काम आ सकते हैं। समझ नहीं आ रहा? आपकी राय मूलतः मेरे दादाजी से कहने जैसी ही है, "तुम्हारे जैसे लोग जीने के लायक नहीं हैं!"

दार्शनिक: मैं इसे निश्चित रूप से अस्वीकार करता हूं।

युवक: आप इसे कैसे अस्वीकार करते हैं?

दार्शनिक: ऐसे माता-पिता हैं जो प्रोत्साहन की अवधारणा के बारे में मेरे स्पष्टीकरण का खंडन करते हुए कहते हैं, "हमारा बच्चा सुबह से रात तक बुरे काम करता रहता है, और उसे कभी यह कहने का अवसर नहीं मिलता कि, 'धन्यवाद', या 'आपने बहुत मदद की।'" संदर्भ संभवतः वही है जिसके बारे में आप बात कर रहे हैं, है ना?

Machine Translated by Google

युवक: हाँ, बिल्कुल। तो कृपया मुझे बताइए कि आप इसे कैसे उचित ठहराते हैं।

दार्शनिक: इस बिंदु पर, आप किसी अन्य व्यक्ति को उसके कार्यों के स्तर पर देख रहे हैं।
दूसरे शब्दों में, उस व्यक्ति ने "कुछ किया"। तो इस नज़रिए से, ऐसा लग सकता है कि बिस्तर पर पड़े बुज़ुर्ग लोग सिर्फ़ एक उपद्रव हैं और किसी के काम के नहीं हैं। तो आइए दूसरे लोगों को "कार्यों के स्तर" पर नहीं, बल्कि "अस्तित्व के स्तर" पर देखें। यह तय किए बिना कि दूसरे लोगों ने कुछ किया है या नहीं, हम उनके होने पर, उनके अस्तित्व पर ही आनंदित होते हैं, और कृतज्ञता के शब्दों में उनका आह्वान करते हैं।

युवक: आप उनके अस्तित्व की दुहाई दे रहे हैं? आखिर आप किस बारे में बात कर रहे हैं?

दार्शनिक: अगर आप चीज़ों को अस्तित्व के स्तर पर देखें, तो हम दूसरों के काम आ सकते हैं और सिर्फ़ यहाँ होने से ही हमारी अहमियत है। यह एक निर्विवाद तथ्य है।

युवक: बिल्कुल नहीं! बहुत हो गया मज़ाक। यहाँ होने भर से किसी के काम आना - ये तो कोई नया धर्म ही होगा।

दार्शनिक: मान लीजिए, आपकी माँ का कार एक्सीडेंट हो जाता है। उनकी हालत गंभीर है और उनकी जान को खतरा हो सकता है। ऐसे में, आप यह नहीं सोचेंगे कि आपकी माँ ने "कुछ किया" है या ऐसा कुछ। ज़्यादातर, आप बस यही सोचेंगे कि अगर वह बच गईं तो आपको खुशी होगी, और आपको खुशी है कि वह अभी भी ज़िंदा हैं।

युवक: हां, मैं ऐसा करूंगा!

दार्शनिक: अस्तित्व के स्तर पर कृतज्ञ होने का यही अर्थ है। हो सकता है कि आपकी माँ अपनी गंभीर स्थिति में ऐसा कुछ न कर पाएँ जिसे एक कृत्य माना जाए, लेकिन सिर्फ़ जीवित रहकर, वह आपकी और आपके परिवार की मानसिक स्थिति को सहारा दे रही होंगी, और इसलिए उपयोगी होंगी। यही बात आपके लिए भी कही जा सकती है। अगर आपकी जान को ख़तरा हो, और आप किसी धागे से लटके हों, तो आपके आस-पास के लोग शायद आपके अस्तित्व मात्र से ही बहुत खुश होंगे। वे बस इस बात के लिए आभारी होंगे कि आप इस समय सुरक्षित हैं, और वे नहीं चाहेंगे कि आप कोई प्रत्यक्ष कृत्य करें। कम से कम, ऐसा कोई कारण तो नहीं है कि उन्हें ऐसा सोचना पड़े। इसलिए अपने बारे में कृत्यों के स्तर पर सोचने के बजाय, सबसे पहले व्यक्ति अपने आप को अस्तित्व के स्तर पर स्वीकार करता है।

युवा: यह एक चरम उदाहरण है - रोजमर्रा की जिंदगी अलग है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: नहीं, यह वही है।

युवक: इसमें समानता क्या है? कृपया मुझे कोई और रोज़मर्रा का उदाहरण देने की कोशिश करें।
यदि आप ऐसा नहीं कर सकते तो मैं भी इससे सहमत नहीं हो पाऊंगा।

दार्शनिक: ठीक है। जब हम दूसरों को देखते हैं, तो हम अपने बारे में अपनी आदर्श छवियाँ गढ़ लेते हैं, जिन्हें हम कमतर आंकते हैं और फिर उनका मूल्यांकन करते हैं। उदाहरण के लिए, एक बच्चे की कल्पना कीजिए जो अपने माता-पिता से कभी मुँह नहीं मोड़ता, पढ़ाई और खेलकूद, दोनों में अव्वल आता है, एक अच्छे विश्वविद्यालय में जाता है और एक बड़ी कंपनी में नौकरी करता है। ऐसे माता-पिता भी होते हैं जो अपने बच्चे की तुलना ऐसे आदर्श बच्चे की छवि से करते हैं—जो कि एक असंभव कल्पना है—और फिर शिकायतों और असंतोष से भर जाते हैं। वे आदर्श छवि को सौ अंक मानते हैं, और धीरे-धीरे उसमें से घटाते जाते हैं। यह वास्तव में एक "निर्णयात्मक" सोच है। इसके बजाय, माता-पिता अपने बच्चे की तुलना किसी और से करने से बच सकते हैं, उसे उसके वास्तविक रूप में देख सकते हैं, और उसके होने पर खुश और आभारी हो सकते हैं। किसी आदर्श छवि से अंक घटाने के बजाय, वे शून्य से शुरुआत कर सकते हैं। और अगर वे ऐसा करते हैं, तो वे स्वयं उसके अस्तित्व को पुकार सकेंगे।

युवा: ठीक है, लेकिन मैं कहूँगा कि यह सिर्फ़ एक आदर्शवादी दृष्टिकोण है। तो क्या आप यह कहना चाह रहे हैं कि ऐसे बच्चे के साथ भी जो कभी स्कूल नहीं जाता या नौकरी नहीं करता, बल्कि खुद को घर में बंद करके बैठा रहता है, हमें कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिए और धन्यवाद कहना चाहिए?

दार्शनिक: बिल्कुल। मान लीजिए आपका घर में बंद रहने वाला बच्चा खाने के बाद बर्तन धोने में आपकी मदद करता है। अगर आप कहें, "बस, अब बहुत हो गया - बस स्कूल जाओ," तो आप ऐसे माता-पिता के शब्द इस्तेमाल कर रहे होंगे जो एक आदर्श बच्चे की छवि को धूमिल करते हैं।
अगर आप ऐसा करेंगे, तो बच्चा शायद और भी ज़्यादा निराश हो जाएगा। हालाँकि, अगर आप सीधे-सीधे शुक्रिया कह दें, तो हो सकता है कि बच्चा अपनी अहमियत समझे और आगे बढ़ने की दिशा में एक नया कदम बढ़ाए।

युवक: यह तो बिल्कुल पाखंड है! यह किसी पाखंडी की बेतुकी बात से ज़्यादा कुछ नहीं है। यह उस "पड़ोसी प्रेम" जैसा लगता है जिसकी ईसाई लोग बात करते हैं। सामुदायिक भावना, क्षैतिज संबंध, अस्तित्व के प्रति कृतज्ञता, वगैरह।

आखिर पृथ्वी पर ऐसा काम कौन कर सकता है?

दार्शनिक: सामुदायिक भावना के इस मुद्दे पर, एक व्यक्ति ने एडलर से भी ऐसा ही प्रश्न पूछा था। एडलर का उत्तर था: "किसी न किसी को तो शुरुआत करनी ही होगी।"
हो सकता है दूसरे लोग सहयोग न करें, लेकिन इसका आपसे कोई लेना-देना नहीं है। मेरी सलाह है

Machine Translated by Google

यह: आपको शुरुआत करनी चाहिए। इस बात की परवाह किए बिना कि दूसरे सहयोग करेंगे या नहीं।" मेरी सलाह भी बिल्कुल यही है।

Machine Translated by Google

लोग स्वयं का उचित उपयोग नहीं कर पाते

युवक: मुझे शुरू करना चाहिए?

दार्शनिक: बिलकुल सही। इस बात की परवाह किए बिना कि दूसरे लोग सहयोग करेंगे या नहीं।

युवक: ठीक है, मैं आपसे फिर पूछूँगा। "लोग सिर्फ़ ज़िंदा रहकर ही किसी और के काम आ सकते हैं, और सिर्फ़ ज़िंदा रहकर ही उन्हें अपनी क़ीमत का सही अंदाज़ा हो सकता है।" क्या आप यही कह रहे हैं?

दार्शनिक: हाँ.

युवक: खैर, मुझे नहीं पता। मैं ज़िंदा हूँ, यहीं और अभी। "मैं", जो कोई और नहीं, बल्कि मैं ही हूँ, यहीं ज़िंदा हूँ। लेकिन फिर भी, मुझे लगता है कि मेरी कोई कीमत नहीं है।

दार्शनिक: क्या आप शब्दों में बता सकते हैं कि आपको ऐसा क्यों लगता है कि आपमें कोई मूल्य नहीं है?

युवा: मुझे लगता है कि आप इसे पारस्परिक संबंध कह रहे हैं। बचपन से लेकर आज तक, मेरे आस-पास के लोग, खासकर मेरे माता-पिता, मुझे हमेशा छोटा भाई होने का एक घटिया बहाना मानकर नीचा दिखाते रहे हैं। उन्होंने कभी मुझे पहचानने की कोशिश ही नहीं की कि मैं कौन हूँ। आप कहते हैं कि मूल्य वह चीज़ है जो व्यक्ति खुद को देता है। लेकिन यह एक अव्यावहारिक सिद्धांत है। उदाहरण के लिए, जिस पुस्तकालय में मैं काम करता हूँ, वहाँ ज़्यादातर मेरा काम लौटाई गई किताबों को छाँटना और उन्हें वापस अलमारियों में रखना ही होता है। यह एक नियमित काम है जिसे कोई भी एक बार सीख लेने के बाद कर सकता है। अगर मैं काम पर जाना बंद कर दूँ, तो मेरे बॉस को मेरी जगह किसी और को ढूँढ़ने में कोई परेशानी नहीं होगी। मेरी ज़रूरत सिर्फ़ मेरे द्वारा दिए जाने वाले अकुशल श्रम के लिए है, और इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि वहाँ काम करने वाला "मैं" हूँ या कोई और, या कोई मशीन। किसी को भी ख़ास तौर पर "इस मैं" की ज़रूरत नहीं है। ऐसी परिस्थितियों में, क्या आपको खुद पर भरोसा होगा? क्या आप अपने मूल्य का सच्चा एहसास कर पाएँगे?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: एडलरियन मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से, इसका उत्तर सरल है। सबसे पहले, अपने और दूसरे व्यक्ति के बीच एक क्षैतिज संबंध बनाएँ। एक ही काफ़ी है। चलिए, वहीं से शुरुआत करते हैं।

युवक: कृपया मुझे मूर्ख मत समझिए! देखिए, मेरे दोस्त हैं। और मैं उनके साथ मज़बूत रिश्ते बना रहा हूँ।

दार्शनिक: फिर भी, मुझे संदेह है कि अपने माता-पिता और अपने बॉस के साथ, और अपने कनिष्ठ सहकर्मियों और अन्य लोगों के साथ भी, आप जो रिश्ते बना रहे हैं, वे ऊर्ध्वाधर हैं।

युवक: हाँ, मेरे रिश्ते अलग-अलग तरह के हैं। सबके रिश्ते ऐसे ही होते हैं।

दार्शनिक: यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण बिंदु है। क्या कोई ऊर्ध्वाधर संबंध बनाता है, या क्षैतिज संबंध? यह जीवनशैली का मामला है, और मनुष्य इतना चतुर नहीं है कि ज़रूरत पड़ने पर अलग-अलग जीवनशैली अपना सके। दूसरे शब्दों में, यह तय करना कि कोई "इस व्यक्ति के बराबर" है या "उस व्यक्ति के साथ पदानुक्रमिक संबंध में" है, काम नहीं करता।

युवा: क्या आपका मतलब यह है कि किसी को एक या दूसरे को चुनना होगा - ऊर्ध्वाधर संबंध या क्षैतिज संबंध?

दार्शनिक: बिल्कुल, हाँ। अगर आप किसी के साथ एक भी सीधा रिश्ता बना रहे हैं, तो इससे पहले कि आपको पता चले कि क्या हो रहा है, आप अपने सभी पारस्परिक संबंधों को सीधा ही मान रहे होंगे।

युवक: तो क्या मैं अपने मित्रों के साथ अपने संबंधों को भी ऊर्ध्वाधर मान रहा हूँ?

दार्शनिक: यह सही है। भले ही आप उनके साथ बॉस या अधीनस्थ जैसा व्यवहार न कर रहे हों, यह ऐसा है जैसे आप कह रहे हों, "ए मुझसे ऊपर है और बी मुझसे नीचे है," उदाहरण के लिए, या "मैं ए की सलाह मानूँगा, लेकिन बी की बात अनसुनी करूँगा," या "मुझे सी से किया अपना वादा तोड़ने में कोई आपत्ति नहीं है।"

युवक: हम्म!

दार्शनिक: दूसरी ओर, यदि कोई व्यक्ति कम से कम एक व्यक्ति के साथ क्षैतिज संबंध बनाने में कामयाब रहा है - यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन में बराबरी का रिश्ता बनाने में सक्षम रहा है, तो यह एक अच्छा विचार है।

Machine Translated by Google

शब्द के सही अर्थ में—यह जीवनशैली में एक बड़ा बदलाव है। इस सफलता के साथ, व्यक्ति के सभी पारस्परिक संबंध धीरे-धीरे क्षैतिज हो जाएँगे।

युवक: क्या बकवास है! मैं इसे कई तरीकों से खारिज कर सकता हूँ। उदाहरण के लिए, किसी कंपनी के माहौल के बारे में सोचिए। निदेशक और उसके नए कर्मचारियों के लिए बराबरी के रिश्ते बनाना वाकई संभव नहीं होगा, है ना? पदानुक्रमिक रिश्ते हमारे समाज की व्यवस्था का हिस्सा हैं, और इसे नज़रअंदाज़ करना सामाजिक व्यवस्था की अनदेखी करना है। देखिए, अगर आप सुनें कि आपकी कंपनी में कोई नया कर्मचारी, जो लगभग बीस साल का है, अचानक साठ साल के निदेशक के साथ दोस्ती करने लगा है, तो क्या आपको नहीं लगता कि यह बात बहुत अटपटी लगेगी?

दार्शनिक: अपने से बड़ों का सम्मान करना निश्चित रूप से महत्वपूर्ण है। किसी भी कंपनी में ज़िम्मेदारी के अलग-अलग स्तर होना स्वाभाविक है। मैं आपको हर किसी से दोस्ती करने या ऐसा व्यवहार करने के लिए नहीं कह रहा हूँ जैसे आप उनके करीबी दोस्त हों। बल्कि, महत्वपूर्ण बात यह है कि आप चेतना में समान रहें और जो ज़रूरी है उसे कहें।

युवा: मैं अपने सीनियर्स को बुरा-भला कहने वाला इंसान नहीं हूँ, और मैं कभी कोशिश भी नहीं करूँगा। अगर मैंने ऐसा किया तो मेरी सामाजिक समझदारी पर सवाल उठेंगे।

दार्शनिक: "वरिष्ठ" क्या होता है? ये "बकवास" क्या होता है? अगर कोई परिस्थिति के माहौल का अंदाज़ा लगाकर सीधे रिश्तों पर निर्भर हो रहा है, तो वो गैर-ज़िम्मेदाराना हरकतें कर रहा है—वो अपनी ज़िम्मेदारियों से बचने की कोशिश कर रहा है।

युवक: इसमें गैरजिम्मेदाराना क्या है?

दार्शनिक: मान लीजिए कि आपके बॉस के निर्देशों का पालन करने के कारण आपका काम असफल हो जाता है, तो इसकी ज़िम्मेदारी किसकी है?

युवक: खैर, ये मेरे बॉस की ज़िम्मेदारी होगी। क्योंकि मैं तो बस आदेशों का पालन कर रहा था, और वही उन पर फ़ैसला लेते थे।

दार्शनिक: इसमें कोई जिम्मेदारी आपकी नहीं है?

युवक: नहीं, ऐसा नहीं है। यह उस बॉस की ज़िम्मेदारी है जिसने आदेश दिया है। इसे ही संगठनात्मक जवाबदेही कहते हैं।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: आप ग़लत हैं। यह ज़िंदगी का झूठ है। आपके पास मना करने की गुंजाइश है , और काम करने का बेहतर तरीका सुझाने की भी गुंजाइश होनी चाहिए। आप बस यही सोच रहे हैं कि मना करने की कोई गुंजाइश नहीं है ताकि आप जुड़े हुए पारस्परिक संबंधों के टकराव से बच सकें और ज़िम्मेदारी से बच सकें—और आप ऊर्ध्वाधर संबंधों पर निर्भर हो रहे हैं।

युवक: क्या आप कह रहे हैं कि मुझे अपने बॉस की बात नहीं माननी चाहिए? हाँ, सिद्धांततः, मुझे ऐसा करना चाहिए।
सैद्धांतिक रूप से, यह बिल्कुल वैसा ही है जैसा आप कह रहे हैं। लेकिन मैं ऐसा नहीं कर सकता! मैं ऐसा रिश्ता बना ही नहीं सकता।

दार्शनिक: सच में? तुम अभी मेरे साथ एक क्षैतिज रिश्ता बना रहे हो। तुम अपनी बात बहुत अच्छी तरह से कह रहे हो। इस या उस मुश्किल के बारे में सोचने के बजाय, तुम यहीं से शुरुआत कर सकते हो।

युवक: क्या मैं यहां से शुरुआत कर सकता हूं?

दार्शनिक: हाँ, इस छोटे से अध्ययन में। जैसा कि मैंने पहले कहा था, मेरे लिए आप एक अपूरणीय मित्र हैं।

युवा: । । ·

दार्शनिक: क्या मैं ग़लत हूँ?

युवक: मैं इसकी कद्र करता हूँ, सचमुच करता हूँ। लेकिन मुझे डर लग रहा है। मैं आपका प्रस्ताव स्वीकार करने से डर रहा हूँ।

दार्शनिक: आप वास्तव में किससे डरते हैं?

युवक: दोस्ती के काम, ज़ाहिर है। मैंने आप जैसे किसी बड़े आदमी से कभी दोस्ती नहीं की। मुझे नहीं पता कि इतनी उम्र के अंतर के साथ दोस्ती का रिश्ता मुमकिन भी है या नहीं, या फिर मुझे इसे छात्र-शिक्षक का रिश्ता ही समझना चाहिए।

दार्शनिक: प्यार और दोस्ती में उम्र मायने नहीं रखती। यह सच है कि दोस्ती के लिए दृढ़ साहस की ज़रूरत होती है। मेरे साथ तुम्हारे रिश्ते के लिहाज़ से, थोड़ी-थोड़ी दूरी कम करना ठीक रहेगा। इतनी दूरी कि हम बहुत नज़दीक न हों, लेकिन फिर भी अपनी बाहें फैलाकर एक-दूसरे के चेहरे को छू सकें, यूँ कहें।

Machine Translated by Google

युवक: कृपया मुझे थोड़ा समय दीजिए। बस एक बार फिर, मैं खुद ही चीज़ों को समझने की कोशिश करने के लिए कुछ समय चाहता हूँ। आज की हमारी चर्चा ने मुझे बहुत कुछ सोचने को दिया है।
मैं यह सब घर ले जाना चाहता हूँ और शांति से इस पर विचार करना चाहता हूँ।

दार्शनिक: सामुदायिक भावना को सही मायने में समझने में समय लगता है। अभी और यहीं इसके बारे में सब कुछ समझ पाना लगभग असंभव होगा। कृपया अपने घर वापस जाएँ और इस पर ध्यान से विचार करें, और बाकी सभी बातों से इसकी तुलना करें।

युवक: हाँ, ज़रूर। खैर, यह सुनकर मुझे बहुत धक्का लगा कि मैं कभी दूसरों की तरफ़ नहीं देखता, और मुझे सिर्फ़ अपनी ही चिंता है। तुम सच में बहुत बुरे आदमी हो!

दार्शनिक: हा-हा। आप कितने खुश होकर कह रहे हैं।

युवक: हाँ, मुझे इसमें बहुत मज़ा आता है। बेशक, दर्द होता है। ऐसा लगता है जैसे मेरे अंदर एक तेज़ दर्द दौड़ रहा हो, मानो मैं सुइयाँ निगल रहा हूँ। फिर भी, मुझे इसमें बहुत मज़ा आता है। आपके साथ इस तरह की चर्चाएँ करना आदत सी बन गई है। मुझे कुछ देर पहले एहसास हुआ कि शायद मैं सिर्फ़ आपके तर्क को ही नहीं, बल्कि मेरे तर्क को भी तोड़-मरोड़ कर पेश करना चाहता हूँ।

दार्शनिक: मैं समझ गया। यह एक दिलचस्प विश्लेषण है।

युवक: लेकिन मत भूलना। मैंने तुमसे कहा था कि मैं तुम्हारे तर्क को तोड़कर तुम्हें घुटनों पर ला दूँगा, और मैंने हार नहीं मानी है।

दार्शनिक: शुक्रिया। मैंने भी बहुत अच्छा समय बिताया। जब भी आप इसे वापस लेने के लिए तैयार हों, आ जाना।

Machine Translated by Google

Machine Translated by Google

पांचवीं रात:

यहीं और अभी ईमानदारी से जीना

Machine Translated by Google

युवक ने मन ही मन सोचा, एडलरियन मनोविज्ञान पारस्परिक संबंधों की गहन पड़ताल में लगा हुआ है। और इन पारस्परिक संबंधों का अंतिम लक्ष्य सामुदायिक भावना है। लेकिन क्या यह सचमुच पर्याप्त है? क्या मुझे इस दुनिया में कुछ और हासिल करने के लिए नहीं लाया गया है? जीवन का अर्थ क्या है? मैं कहाँ जा रहा हूँ, और मैं कैसा जीवन जीने की कोशिश कर रहा हूँ? युवक जितना सोचता गया, उसे उतना ही लगने लगा कि उसका अपना अस्तित्व छोटा और महत्वहीन था।

Machine Translated by Google

अत्यधिक आत्म-चेतना स्वयं को दबा देती है

दार्शनिक: काफी समय हो गया है, है न?

युवक: हाँ, मैं लगभग एक महीने पहले आया था। तब से मैं सामुदायिक भावना के अर्थ के बारे में सोच रहा हूँ।

दार्शनिक: तो अब आप इसके बारे में कैसा महसूस करते हैं?

युवा: खैर, सामुदायिक भावना निश्चित रूप से एक आकर्षक विचार है। उदाहरण के लिए, अपनेपन का भाव, कि "यहाँ रहना ठीक है", जो हमारी एक मूलभूत इच्छा है। मुझे लगता है कि यह सामाजिक प्राणी के रूप में हमारे अस्तित्व की एक शानदार अंतर्दृष्टि है।

दार्शनिक: यह एक शानदार अंतर्दृष्टि है, सिवाय इसके कि...?

युवक: अजीब बात है, आपने तुरंत बात समझ ली। हाँ, मुझे अभी भी इससे कुछ दिक्कत है। मैं साफ़-साफ़ कह दूँ—मुझे समझ नहीं आ रहा कि आप ब्रह्मांड वगैरह का ज़िक्र करके क्या कहना चाह रहे हैं, और आखिर में शुरू से आखिर तक धर्म की बू आती है।

इसमें एक प्रकार का पंथीय गुण है जिसे मैं नहीं छोड़ सकता।

दार्शनिक: जब एडलर ने पहली बार सामुदायिक भावना की अवधारणा प्रस्तुत की थी, तो इसी तरह का भारी विरोध हुआ था। लोगों का कहना था कि मनोविज्ञान एक विज्ञान है, और यहाँ एडलर मूल्य के मुद्दे पर चर्चा कर रहे थे। उन्होंने कहा कि इस तरह की चीज़ें विज्ञान नहीं हैं।

युवा: तो मैंने अपने तरीके से यह समझने की कोशिश की कि मैं आपकी बात क्यों नहीं समझ पाया, और मुझे लगता है कि शायद चीज़ों का क्रम ही समस्या है। आप ब्रह्मांड और निर्जीव वस्तुओं, भूत और भविष्य वगैरह से शुरुआत कर रहे हैं, इसलिए मैं चीज़ों का ध्यान ही नहीं रख पा रहा हूँ। इसके बजाय, व्यक्ति को "मैं" की गहरी समझ हासिल करनी चाहिए। इसके बाद, व्यक्ति को व्यक्तिगत संबंधों पर विचार करना चाहिए। यानी, पारस्परिक संबंधों पर।

Machine Translated by Google

"आप और मैं" के रिश्ते। और एक बार ऐसा करने के बाद, बड़ा समुदाय सामने आना चाहिए।

दार्शनिक: मैं समझ गया। यह अच्छा आदेश है।

युवा: अब, सबसे पहली बात जो मैं पूछना चाहता हूँ, वह है स्वयं के प्रति आसक्ति। आप कह रहे हैं कि व्यक्ति को "मैं" से आसक्ति छोड़कर "दूसरों की चिंता" की ओर रुख करना होगा। मुझे यकीन है कि यह बिल्कुल वैसा ही है जैसा आप कह रहे हैं—दूसरों की चिंता ज़रूरी है, मैं इससे सहमत हूँ।

लेकिन चाहे कुछ भी हो, हम अपने बारे में चिंता करते हैं; हम हर समय अपने आप को देखते हैं।

दार्शनिक: क्या आपने सोचा है कि हम अपने बारे में चिंता क्यों करते हैं?

युवा: हाँ, हाँ। अगर मैं एक आत्ममुग्ध व्यक्ति होता, उदाहरण के लिए—अगर मैं खुद से प्यार करता और लगातार खुद पर मोहित रहता—तो शायद चीज़ें आसान हो जातीं। क्योंकि आपका निर्देश, "दूसरों की ज़्यादा परवाह करो," बिल्कुल सही है। लेकिन मैं आत्म-प्रेमी आत्ममुग्ध नहीं हूँ। मैं एक आत्म-घृणा करने वाला यथार्थवादी हूँ। मुझे अपने आप से नफ़रत है, और इसीलिए मैं हर समय खुद को देखता रहता हूँ। मुझे खुद पर भरोसा नहीं है, और इसीलिए मैं ज़रूरत से ज़्यादा आत्म-जागरूक रहता हूँ।

दार्शनिक: आपको कब ऐसा महसूस होता है कि आप अत्यधिक आत्म-चेतन हैं?

युवा: खैर, मिसाल के तौर पर, मीटिंग्स में मुझे हाथ उठाकर अपनी बात कहने में बहुत दिक्कत होती है। मैं बेवजह की बातें सोचता हूँ, जैसे अगर मैं यह सवाल पूछूँगा, तो शायद वे मुझ पर हँसेंगे, या अगर मैं जो कहना चाहता हूँ वह अप्रासंगिक है, तो मेरा मज़ाक उड़ाया जाएगा, वगैरह -वगैरह, और मैं चुप हो जाता हूँ। सच कहूँ तो, लोगों के सामने बेतुके चुटकुले सुनाने में भी मैं हिचकिचाता हूँ।

हर बार, मेरी आत्म-चेतना जाग उठती है और ब्रेक लगा देती है, और ऐसा लगता है जैसे मुझे किसी बंधन में बाँध दिया गया हो। मेरी आत्म-चेतना मुझे मासूमियत से पेश आने नहीं देगी। लेकिन मुझे आपसे जवाब माँगने की भी ज़रूरत नहीं है। मुझे यकीन है कि यह हमेशा की तरह ही होगा: हिम्मत रखो। लेकिन आप जानते हैं, ऐसे शब्द मेरे किसी काम के नहीं हैं। क्योंकि यह सिर्फ़ हिम्मत की बात नहीं है।

दार्शनिक: समझ गया। पिछली बार मैंने सामुदायिक भावना का एक संक्षिप्त विवरण दिया था। आज हम इस पर और गहराई से चर्चा करेंगे।

युवक: और यह हमें कहां ले जाएगा?

दार्शनिक: हम संभवतः इस प्रश्न पर पहुंचेंगे कि खुशी क्या है?

Machine Translated by Google

युवक: ओह! तो खुशी सामुदायिक भावना से परे है?

दार्शनिक: जवाब देने में जल्दबाज़ी करने की ज़रूरत नहीं है। हमें बातचीत की ज़रूरत है।

युवक: ठीक है, तो चलिए शुरू करते हैं!

Machine Translated by Google

आत्म-पुष्टि नहीं - आत्म-स्वीकृति

दार्शनिक: सबसे पहले, आइए देखें कि आप क्या कह रहे थे, आपकी आत्म-चेतना ने आप पर ब्रेक लगा दिया है और आपको निर्दोष तरीके से व्यवहार नहीं करने दिया है।

शायद बहुत से लोग इस परेशानी का अनुभव करते हैं। तो चलिए फिर से मूल स्रोत पर वापस जाएँ और अपने लक्ष्य के बारे में सोचें। अपने मासूम व्यवहार पर लगाम लगाकर आप क्या हासिल करना चाहते हैं?

युवा: यह सच्ची इच्छा है कि लोग मुझ पर न हँसें, न ही मुझे मूर्ख समझें।

दार्शनिक: तो दूसरे शब्दों में, आपको अपने मासूम स्वभाव पर, अपने आप पर, जैसे आप हैं, भरोसा नहीं है, है ना? और आप उस तरह के पारस्परिक संबंधों से दूर रहते हैं जिसमें आप बस खुद बने रह सकते हैं। लेकिन मैं शर्त लगा सकता हूँ कि जब आप घर पर अकेले होते हैं, तो आप ज़ोर-ज़ोर से गाते हैं, संगीत पर नाचते हैं और जीवंत आवाज़ में बोलते हैं।

युवक: हा-हा! ऐसा लग रहा है जैसे तुमने मेरे कमरे में निगरानी कैमरा लगा दिया हो! पर हाँ, ये सच है। मैं अकेले में खुलकर व्यवहार कर सकता हूँ।

दार्शनिक: अकेले में कोई भी राजा जैसा व्यवहार कर सकता है। इसलिए यह एक ऐसा मुद्दा है जिस पर पारस्परिक संबंधों के संदर्भ में विचार किया जाना चाहिए। क्योंकि ऐसा नहीं है कि आपमें मासूमियत नहीं है—बात बस इतनी है कि आप दूसरों के सामने ऐसा नहीं कर सकते।

युवक: तो फिर मुझे क्या करना चाहिए?

दार्शनिक: आख़िरकार, यह सामुदायिक भावना के बारे में है। सीधे शब्दों में कहें तो, यह स्वयं के प्रति आसक्ति (स्वार्थ) से दूसरों के प्रति चिंता (सामाजिक हित) की ओर बदलाव लाना और सामुदायिक भावना की भावना विकसित करना है। इस बिंदु पर तीन चीज़ों की आवश्यकता है: "आत्म-स्वीकृति", "दूसरों में विश्वास", और "दूसरों के लिए योगदान"।

युवा: दिलचस्प! नए कीवर्ड्स, समझ गया। ये किसकी ओर इशारा करते हैं?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: आइए आत्म-स्वीकृति से शुरुआत करें। हमारी पहली रात को, मैंने एडलर का यह कथन याद दिलाया था: "महत्वपूर्ण बात यह नहीं है कि आप किस चीज़ के साथ पैदा हुए हैं, बल्कि यह है कि आप उस उपकरण का क्या उपयोग करते हैं।" क्या आपको यह याद है?

युवक: हां, बिल्कुल।

दार्शनिक: हम उस पात्र को, जो "मैं" है, त्याग नहीं सकते, और न ही उसे बदल सकते हैं। हालाँकि, महत्वपूर्ण बात यह है कि "हम उस उपकरण का क्या उपयोग करते हैं।"
व्यक्ति अपने “मैं” को देखने के तरीके को बदल देता है - अर्थात, वह इसका उपयोग करने के तरीके को बदल देता है।

युवा: क्या इसका मतलब है कि आप ज़्यादा सकारात्मक बनें और आत्म-पुष्टि की भावना ज़्यादा मज़बूत रखें? हर चीज़ के बारे में ज़्यादा सकारात्मक सोचें?

दार्शनिक: सकारात्मक होने और खुद को पुष्ट करने के लिए किसी बाहरी व्यक्ति की ज़रूरत नहीं है। हमारा ध्यान आत्म-पुष्टि से नहीं, बल्कि आत्म-स्वीकृति से है।

युवा: आत्म-पुष्टि नहीं, बल्कि आत्म-स्वीकृति?

दार्शनिक: बिलकुल सही। इसमें एक स्पष्ट अंतर है। आत्म-पुष्टि स्वयं को सुझाव देना है, जैसे "मैं यह कर सकता हूँ" या "मैं शक्तिशाली हूँ", तब भी जब कोई चीज़ उसकी क्षमता से परे हो। यह एक ऐसी धारणा है जो श्रेष्ठता की भावना पैदा कर सकती है, और इसे जीवन जीने का एक ऐसा तरीका भी कहा जा सकता है जिसमें व्यक्ति स्वयं से झूठ बोलता है। दूसरी ओर, आत्म-स्वीकृति में, यदि कोई कुछ नहीं कर सकता, तो वह बस "अपने असमर्थ स्व" को वैसे ही स्वीकार कर लेता है और आगे बढ़ता है ताकि वह जो कुछ भी कर सकता है, कर सके।

यह खुद से झूठ बोलने का कोई तरीका नहीं है। इसे और सरल भाषा में कहें तो, मान लीजिए आपको 60 प्रतिशत अंक मिले हैं, लेकिन आप खुद से कहते हैं, " इस बार मैं बदकिस्मत रहा, और असली मैं तो 100 प्रतिशत हूँ।" यही आत्म-पुष्टि है। इसके विपरीत, अगर कोई खुद को जैसा है, 60 प्रतिशत मानकर स्वीकार कर ले और खुद से सोचे, " मैं 100 प्रतिशत के करीब कैसे पहुँचूँ?"—यह आत्म-स्वीकृति है।

युवा: तो यदि आप केवल 60 प्रतिशत ही हैं, तो भी निराशावादी होने की कोई आवश्यकता नहीं है?

दार्शनिक: बिल्कुल नहीं। कोई भी पूर्ण नहीं होता। याद है, जब मैं श्रेष्ठता की खोज के बारे में समझा रहा था, तब मैंने क्या कहा था? कि सभी लोग सुधार की चाहत में रहते हैं? दूसरी तरफ़, कोई भी व्यक्ति शत-प्रतिशत नहीं होता।

यह ऐसी बात है जिसे हमें सक्रिय रूप से स्वीकार करना चाहिए।

Machine Translated by Google

युवक: हम्म। आप जो कह रहे हैं वह कई मायनों में सकारात्मक लगता है, लेकिन इसमें नकारात्मक पहलू भी हैं।

दार्शनिक: यहां मैं “सकारात्मक त्यागपत्र” शब्द का प्रयोग कर रहा हूं।

युवा: सकारात्मक इस्तीफा?

दार्शनिक: कार्यों के पृथक्करण के मामले में भी यही बात लागू होती है—व्यक्ति यह तय करता है कि वह किन चीज़ों को बदल सकता है और किन चीज़ों को नहीं। जो उसके साथ पैदा हुआ है, उसे वह नहीं बदल सकता। लेकिन वह अपनी शक्ति से, उस उपकरण का उपयोग कैसे करे, इसे बदल सकता है। तो ऐसे में, व्यक्ति को बस इस बात पर ध्यान केंद्रित करना होगा कि वह क्या बदल सकता है, बजाय इसके कि वह क्या नहीं बदल सकता। इसे ही मैं आत्म-स्वीकृति कहता हूँ।

युवा: क्या बदला जा सकता है और क्या नहीं?

दार्शनिक: बिलकुल सही। जो अपूरणीय है उसे स्वीकार करो। "इस मैं" को वैसे ही स्वीकार करो जैसा वह है।
और जो बदला जा सकता है उसे बदलने का साहस रखें । यही आत्म-स्वीकृति है।

युवा: हम्म। मुझे लेखक कर्ट वोनगुट की एक पंक्ति याद आ रही है जो उन्होंने अपनी एक किताब में कही थी: "ईश्वर मुझे उन चीज़ों को स्वीकार करने की शांति दे जिन्हें मैं बदल नहीं सकता; उन चीज़ों को बदलने का साहस दे जिन्हें मैं बदल सकता हूँ; और अंतर समझने की बुद्धि दे।" यह उपन्यास स्लॉटरहाउस-फाइव में है।

दार्शनिक: हाँ, मुझे पता है। यह शांति प्रार्थना है। ये शब्द सुप्रसिद्ध हैं और ईसाई समाजों में कई वर्षों से प्रचलित हैं।

युवक: उसने तो "साहस" शब्द का भी इस्तेमाल किया। मैंने किताब इतनी ध्यान से पढ़ी है कि मुझे वह याद हो जानी चाहिए। लेकिन अब तक मैंने इस बात पर ध्यान नहीं दिया था।

दार्शनिक: यह सच है। हममें योग्यता की कमी नहीं है। बस साहस की कमी है। सब कुछ साहस पर निर्भर करता है।

Machine Translated by Google

विश्वास और आत्मविश्वास के बीच अंतर

युवा: इस “सकारात्मक त्यागपत्र” में कुछ ऐसा है जो निराशावादी लगता है।
यह बहुत निराशाजनक है कि इस लंबी चर्चा का नतीजा इस्तीफा ही हो।

दार्शनिक: क्या ऐसा है? त्यागपत्र का अर्थ है, धैर्य और स्वीकृति के साथ स्पष्ट रूप से देखना। चीज़ों की सच्चाई पर दृढ़ पकड़ होना—यही त्यागपत्र है। इसमें निराशावाद जैसा कुछ नहीं है।

युवा: सत्य पर दृढ़ पकड़. . .

दार्शनिक: बेशक, सिर्फ़ इसलिए कि कोई व्यक्ति आत्म-स्वीकृति के रूप में सकारात्मक त्याग पर पहुँच गया है, इसका मतलब यह नहीं कि उसे सामुदायिक भावनाएँ स्वतः ही आ जाएँगी। यही वास्तविकता है। जब कोई व्यक्ति स्वयं के प्रति आसक्ति से दूसरों के प्रति चिंता की ओर बढ़ रहा होता है, तो दूसरी प्रमुख अवधारणा—दूसरों में विश्वास—बेहद ज़रूरी हो जाती है।

युवा: दूसरों पर भरोसा। दूसरे शब्दों में, दूसरों पर विश्वास करना?

दार्शनिक: यहाँ, मैं भरोसे और आत्मविश्वास में अंतर करने के संदर्भ में "दूसरों पर विश्वास" शब्दों पर विचार करूँगा। सबसे पहले, जब हम भरोसे की बात करते हैं, तो हम किसी ऐसी चीज़ की बात कर रहे होते हैं जो निश्चित शर्तों के साथ आती है। हम इसे ऋण कहते हैं। उदाहरण के लिए, जब कोई बैंक से पैसा उधार लेना चाहता है, तो उसके पास किसी प्रकार की ज़मानत होनी चाहिए। बैंक उस ज़मानत के मूल्य के आधार पर ऋण की राशि की गणना करता है, और कहता है, "हम आपको इतना उधार देंगे।" "हम आपको इस शर्त पर उधार देंगे कि आप इसे वापस चुकाएँगे" या "हम आपको उतना उधार देंगे जितना आप चुका सकते हैं" जैसा रवैया किसी पर भरोसा करने जैसा नहीं है। यह भरोसा है।

युवक: हां, मुझे लगता है कि बैंक वित्तपोषण इसी तरह काम करता है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: इसके विपरीत, एडलरियन मनोविज्ञान के दृष्टिकोण से, पारस्परिक संबंधों का आधार विश्वास पर नहीं बल्कि आत्मविश्वास पर आधारित है।

युवक: और इस मामले में "आत्मविश्वास" क्या है...?

दार्शनिक: दूसरों पर विश्वास करना बिना किसी शर्त के करना है। भले ही किसी के पास किसी पर भरोसा करने के लिए पर्याप्त वस्तुनिष्ठ आधार न हों, फिर भी वह विश्वास करता है। वह बिना किसी सुरक्षा की चिंता किए बिना बिना शर्त विश्वास करता है। यही आत्मविश्वास है।

युवा: बिना शर्त विश्वास? तो क्या आप अपने पड़ोसी प्रेम की पसंदीदा धारणा पर वापस लौट आए हैं?

दार्शनिक: बेशक, अगर कोई बिना कोई शर्त रखे दूसरों पर विश्वास करता है, तो कई बार उसका फायदा उठाया जा सकता है। कर्ज़ के गारंटर की तरह, कई बार नुकसान भी हो सकता है। ऐसे हालात में भी किसी पर विश्वास बनाए रखने के रवैये को ही हम आत्मविश्वास कहते हैं।

युवक: कोई भोला-भाला मूर्ख ही ऐसा कर सकता है! मुझे लगता है आप जन्मजात मानवीय अच्छाई के सिद्धांत पर विश्वास करते हैं, जबकि मैं जन्मजात मानवीय बुराई के सिद्धांत पर।
पूर्णतः अजनबियों पर बिना शर्त विश्वास करें, और आपका इस्तेमाल और दुरुपयोग ही होगा।

दार्शनिक: और कई बार ऐसा भी होता है जब कोई आपको धोखा देता है, और आप उसी का फायदा उठाते हैं। लेकिन इसे उस व्यक्ति के नज़रिए से देखिए जिसका फायदा उठाया गया है। ऐसे लोग भी होते हैं जो बिना शर्त आप पर विश्वास करते रहेंगे, भले ही आपने ही उनका फायदा उठाया हो। ऐसे लोग आप पर भरोसा करते रहेंगे, चाहे उनके साथ कैसा भी व्यवहार क्यों न किया जाए। क्या आप ऐसे व्यक्ति को बार-बार धोखा दे पाएँगे?

युवक: उम्म, नहीं। खैर, यह तो होगा...

दार्शनिक: मुझे यकीन है कि आपके लिए ऐसा करना काफी कठिन होगा।

युवक: इतना सब कुछ होने के बाद, क्या आप कह रहे हैं कि भावनाओं को जगाना ज़रूरी है? एक संत की तरह आस्था बनाए रखना और दूसरे व्यक्ति की अंतरात्मा के अनुसार काम करना? आप कह रहे हैं कि एडलर के लिए नैतिकता मायने नहीं रखती, लेकिन क्या हम यहाँ ठीक इसी बारे में बात नहीं कर रहे हैं?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: नहीं, ऐसा नहीं है। आपके अनुसार आत्मविश्वास का विपरीत क्या है?

युवा: आत्मविश्वास का विलोम शब्द? उह...

दार्शनिक: यह संदेह है। मान लीजिए आपने अपने पारस्परिक संबंधों की नींव में "संदेह" को रखा है। आप अपना जीवन दूसरों पर संदेह करते हुए जीते हैं—अपने दोस्तों पर, यहाँ तक कि अपने परिवार पर और जिनसे आप प्यार करते हैं उन पर भी संदेह करते हैं। इससे किस तरह का रिश्ता बन सकता है? दूसरा व्यक्ति आपकी आँखों में संदेह को तुरंत पहचान लेगा। उसे सहज ही समझ आ जाएगा कि "इस व्यक्ति को मुझ पर भरोसा नहीं है।" क्या आपको लगता है कि इस बिंदु से कोई सकारात्मक रिश्ता बना पाएगा? क्योंकि हम बिना शर्त विश्वास की नींव रखते हैं, इसलिए हमारे लिए एक गहरा रिश्ता बनाना संभव है।

युवक: ठीक है, मुझे लगता है।

दार्शनिक: एडलरियन मनोविज्ञान को समझने का तरीका आसान है। अभी आप सोच रहे हैं, " अगर मैं किसी पर बिना शर्त भरोसा करूँ, तो मेरा फ़ायदा उठाया जाएगा।" हालाँकि, फ़ायदा उठाना है या नहीं, यह तय करने वाले आप नहीं हैं। यह दूसरे व्यक्ति का काम है। आपको बस यह सोचना है, " मुझे क्या करना चाहिए?" अगर आप खुद से कह रहे हैं, " अगर वह मेरा फ़ायदा नहीं उठाएगा तो मैं उसे दे दूँगा", तो यह सिर्फ़ विश्वास का रिश्ता है जो सुरक्षा या शर्तों पर आधारित होता है।

युवक: तो क्या वहां भी कार्यों को अलग-अलग किया जाता है?

दार्शनिक: हाँ। जैसा कि मैंने बार-बार कहा है, कार्यों को अलग करने से जीवन आश्चर्यजनक रूप से सरल हो जाता है। लेकिन कार्यों को अलग करने का सिद्धांत समझना आसान है, लेकिन इसे व्यवहार में लाना मुश्किल है। मैं इस बात को मानता हूँ।

युवक: तो फिर आप मुझे कह रहे हैं कि मैं सब पर भरोसा करता रहूँ, सब पर विश्वास करता रहूँ, भले ही वे मुझे धोखा दें, और बस एक भोला-भाला मूर्ख बना रहूँ? यह कोई दर्शनशास्त्र या मनोविज्ञान या ऐसा कुछ नहीं है—यह तो बस एक कट्टरपंथी का उपदेश है!

दार्शनिक: मैं इसे सिरे से खारिज करता हूँ। एडलरियन मनोविज्ञान किसी नैतिक मूल्य प्रणाली के आधार पर यह नहीं कहता कि "दूसरों पर बिना शर्त भरोसा करो"।
बिना शर्त आत्मविश्वास किसी व्यक्ति के साथ आपके पारस्परिक संबंधों को बेहतर बनाने और एक क्षैतिज संबंध बनाने का एक साधन है। अगर आपकी इच्छा नहीं है, तो

Machine Translated by Google

यदि आप उस व्यक्ति के साथ अपने रिश्ते को बेहतर बनाना चाहते हैं, तो आगे बढ़ें और उसे तोड़ दें।
क्योंकि विच्छेदन करना आपका कार्य है।

युवा: तो क्या होगा अगर मैंने अपने रिश्ते को बेहतर बनाने के लिए किसी दोस्त पर बिना शर्त भरोसा किया हो? मैंने इस दोस्त के लिए हर तरह की कोशिश की है, पैसों की हर माँग को खुशी-खुशी पूरा किया है, और उसके लिए अपना समय और मेहनत भी दी है। लेकिन ऐसे मामलों में भी, कई बार ऐसा होता है जब किसी का फायदा उठाया जाता है। उदाहरण के लिए, अगर किसी ऐसे व्यक्ति ने, जिस पर उसने पूरी तरह से विश्वास किया है, उसका बुरी तरह से फायदा उठाया हो, तो क्या यह अनुभव उसे "दूसरे लोग मेरे दुश्मन हैं" वाली जीवनशैली की ओर नहीं ले जाएगा?

दार्शनिक: लगता है आपको अभी तक आत्मविश्वास के लक्ष्य की समझ नहीं आई है। मान लीजिए, आप किसी प्रेम संबंध में हैं, लेकिन आपको अपने साथी पर शक है और आप मन ही मन सोचते हैं, " मैं शर्त लगा सकता हूँ कि वह मुझे धोखा दे रही है।" और आप इसे साबित करने के लिए सबूत ढूँढ़ने की बेतहाशा कोशिशें करने लगते हैं। आपको क्या लगता है, इसका नतीजा क्या होगा?

युवक: खैर, मुझे लगता है कि यह स्थिति पर निर्भर करेगा।

दार्शनिक: नहीं, हर मामले में आपको इस बात के पर्याप्त सबूत मिलेंगे कि वह आपको धोखा दे रही है।

युवक: रुको? ऐसा क्यों?

दार्शनिक: आपकी पार्टनर की सामान्य टिप्पणियाँ, फ़ोन पर किसी से बात करते समय उसका लहजा, वो पल जब आप उससे बात नहीं कर पाते... जब तक आप शक की निगाहों से उसे देखते रहेंगे, आपके आस-पास की हर चीज़ इस बात का सबूत लगेगी कि वो आपको धोखा दे रही है। भले ही वो धोखा न दे रही हो।

युवक: हम्म.

दार्शनिक: अभी तो आपको बस उन पलों की चिंता है जब आपका फ़ायदा उठाया गया, और किसी बात की नहीं। आप सिर्फ़ उन ज़ख्मों के दर्द पर ध्यान देते हैं जो आपको ऐसे मौकों पर मिले थे। लेकिन अगर आप दूसरों पर भरोसा करने से डरते हैं, तो आगे चलकर आप किसी के साथ भी गहरे रिश्ते नहीं बना पाएँगे।

Machine Translated by Google

युवा: अच्छा, मैं समझ गया कि आप क्या कहना चाह रहे हैं—मुख्य उद्देश्य, यानी गहरे रिश्ते बनाना। लेकिन फिर भी, फायदा उठाया जाना डरावना होता है, और यही हकीकत है, है ना?

दार्शनिक: यदि यह एक उथला रिश्ता है, तो जब यह टूटेगा तो दर्द हल्का होगा।
और रिश्तों से मिलने वाली रोज़मर्रा की खुशियाँ भी कम होंगी। क्योंकि दूसरों पर भरोसा करके गहरे रिश्तों में बंधने का साहस हासिल किया जा सकता है, इसलिए आपसी रिश्तों का आनंद बढ़ सकता है और जीवन का आनंद भी बढ़ सकता है।

युवक: नहीं! मैं उस बारे में बात नहीं कर रहा था, आप फिर से विषय बदल रहे हैं। फायदा उठाए जाने के डर पर काबू पाने का साहस—यह कहाँ से आता है?

दार्शनिक: यह आत्म-स्वीकृति से आता है। अगर कोई खुद को जैसा है वैसा ही स्वीकार कर ले, और यह तय कर ले कि वह क्या कर सकता है और क्या नहीं, तो वह यह समझ पाता है कि "फायदा उठाना" दूसरे व्यक्ति का काम है, और "दूसरों पर विश्वास" के मूल तक पहुँचना कम मुश्किल हो जाता है।

युवक: आप कह रहे हैं कि किसी का फ़ायदा उठाना दूसरे का काम है, और कोई कुछ नहीं कर सकता? मुझे स्वीकार कर लेना चाहिए, हाँ? आपके तर्क हमेशा हमारी भावनाओं को नज़रअंदाज़ करते हैं। जब किसी का फ़ायदा उठाया जाता है, तो जो गुस्सा और दुख होता है, उसका क्या करें?

दार्शनिक: जब कोई दुखी हो, तो उसे जी भरकर दुखी होना चाहिए। जब कोई दर्द और उदासी से बचने की कोशिश करता है, तो वह फँस जाता है और किसी के साथ गहरे रिश्ते बनाने में असमर्थ हो जाता है। इसे इस तरह से सोचें। हम विश्वास कर सकते हैं। और हम संदेह भी कर सकते हैं। लेकिन हम दूसरों को अपना साथी मानने की आकांक्षा रखते हैं। विश्वास करें या संदेह करें—चुनाव स्पष्ट होना चाहिए।

Machine Translated by Google

कार्य का सार सामान्य के लिए योगदान है

अच्छा

युवक: ठीक है। मान लीजिए कि मैं आत्म-स्वीकृति प्राप्त कर पाया हूँ। और दूसरों पर भी मेरा विश्वास बढ़ गया है। तब मुझमें किस तरह के बदलाव आएँगे?

दार्शनिक: सबसे पहले, व्यक्ति अपने अपूरणीय "इस मैं" को, जैसा वह है, वैसे ही स्वीकार करता है। यही आत्म-स्वीकृति है। फिर, वह दूसरों पर बिना शर्त भरोसा करता है। यही दूसरों पर भरोसा है। आप खुद को स्वीकार कर सकते हैं, और दूसरों पर भी भरोसा कर सकते हैं।

तो अब दूसरे लोग आपके लिए क्या हैं?

युवक: मेरे साथी?

दार्शनिक: बिल्कुल। असल में, दूसरों पर भरोसा करना दूसरों को अपने साथी के रूप में देखने से जुड़ा है। क्योंकि वे आपके साथी हैं, इसलिए आप उन पर भरोसा कर सकते हैं। अगर वे आपके साथी न होते, तो आप उस आत्मविश्वास के स्तर तक नहीं पहुँच पाते। और फिर, दूसरों को अपना साथी मानना, उस समुदाय में शरण पाने से जुड़ा है जिससे आप जुड़े हुए हैं। इस तरह आप अपनेपन का एहसास पा सकते हैं, कि "यहाँ रहना ठीक है।"

युवा: दूसरे शब्दों में, आप कह रहे हैं कि "यहाँ रहना ठीक है" का एहसास पाने के लिए, दूसरों को अपना साथी समझना ज़रूरी है। और दूसरों को अपना साथी समझने के लिए, आत्म-स्वीकृति और दूसरों पर भरोसा, दोनों ज़रूरी हैं।

दार्शनिक: बिलकुल सही। अब आप इसे और तेज़ी से समझ रहे हैं। इसे एक कदम आगे ले जाएँ तो कह सकते हैं कि जो लोग दूसरों को दुश्मन समझते हैं, उन्होंने आत्म-स्वीकृति हासिल नहीं की है और उन्हें दूसरों पर पूरा भरोसा नहीं है।

Machine Translated by Google

युवा: ठीक है। यह सच है कि लोग अपनेपन का एहसास चाहते हैं, कि "यहाँ रहना ठीक है।" और इसे पाने के लिए उन्हें आत्म-स्वीकृति और दूसरों पर विश्वास की ज़रूरत होती है। मुझे इससे कोई आपत्ति नहीं है। लेकिन मुझे नहीं पता। क्या सिर्फ़ दूसरों को अपना साथी मानकर और उन पर भरोसा करके कोई सचमुच अपनेपन का एहसास हासिल कर सकता है?

दार्शनिक: बेशक, सामुदायिक भावना केवल आत्म-स्वीकृति और दूसरों पर विश्वास से प्राप्त नहीं हो सकती। यहीं पर तीसरी प्रमुख अवधारणा—दूसरों के लिए योगदान—आवश्यक हो जाती है।

युवा: दूसरों के लिए योगदान?

दार्शनिक: किसी न किसी तरह से अपने साथियों पर काम करना। योगदान देने की कोशिश करना। यही "दूसरों के लिए योगदान" है।

युवा: तो जब आप कहते हैं "योगदान", तो क्या आपका मतलब आत्म-बलिदान की भावना दिखाना और अपने आस-पास के लोगों की सेवा करना है?

दार्शनिक: दूसरों के लिए योगदान का अर्थ आत्म-बलिदान नहीं है। एडलर तो यहाँ तक चेतावनी देते हैं कि जो लोग दूसरों के लिए अपने प्राणों का बलिदान करते हैं, वे समाज के साथ बहुत ज़्यादा घुल-मिल गए हैं। और कृपया यह न भूलें: हमें अपनी कीमत का सही-सही एहसास तभी होता है जब हमें लगता है कि हमारा अस्तित्व और व्यवहार समाज के लिए लाभदायक है, यानी जब हमें लगता है कि "मैं किसी के काम आ सकता हूँ।" क्या आपको यह याद है? दूसरे शब्दों में, दूसरों के लिए योगदान, "मैं" से छुटकारा पाने और किसी की सेवा करने के बजाय, वास्तव में वह काम है जो व्यक्ति "मैं" के मूल्य का सही-सही एहसास पाने के लिए करता है।

युवा: क्या दूसरों के लिए योगदान करना अपने लिए है?

दार्शनिक: हाँ। आत्म-बलिदान की कोई ज़रूरत नहीं है।

युवक: अरे-अरे, तुम्हारा तर्क तो यहीं टूटने लगा है, है ना? तुमने अपनी कब्र खुद खोदने का कमाल कर दिया है। "मैं" की संतुष्टि के लिए, इंसान खुद को दूसरों की सेवा में लगा देता है। क्या यही पाखंड की असली परिभाषा नहीं है? मैंने पहले भी कहा था: तुम्हारा पूरा तर्क पाखंडी है। यह एक फिसलन भरा तर्क है। देखो, मैं उस खलनायक पर ज़्यादा विश्वास करूँगा जो अपनी इच्छाओं के प्रति ईमानदार है, बजाय उस अच्छे इंसान पर जो झूठ का पुलिंदा बोलता है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: ये तो बहुत जल्दबाज़ी में निकाले गए निष्कर्ष हैं। आप अभी तक सामुदायिक भावना को नहीं समझ पाए हैं।

युवा: तो फिर मैं चाहता हूं कि आप दूसरों के लिए योगदान के बारे में ठोस उदाहरण प्रस्तुत करें।

दार्शनिक: दूसरों के लिए सबसे आसानी से समझा जाने वाला योगदान शायद काम करना है। समाज में रहना और कामगारों की टोली में शामिल होना। या फिर अपने घर की देखभाल का काम करना। श्रम पैसा कमाने का ज़रिया नहीं है। श्रम के ज़रिए ही व्यक्ति दूसरों के लिए योगदान देता है और अपने समुदाय के प्रति प्रतिबद्ध होता है, और उसे सचमुच यह एहसास होता है कि "मैं किसी के काम आ रहा हूँ" और यहाँ तक कि वह अपने अस्तित्वगत मूल्य को भी स्वीकार करता है।

युवा: आप कह रहे हैं कि काम का सार दूसरों के लिए योगदान है?

दार्शनिक: पैसा कमाना भी एक बड़ा कारक है, ज़ाहिर है। यह कुछ-कुछ दोस्तोवस्की के उस कथन जैसा है जो आपको अचानक याद आया: "पैसा आज़ादी का प्रतीक है।" लेकिन कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनके पास इतना पैसा होता है कि वे उसका पूरा इस्तेमाल ही नहीं कर पाते। और इनमें से कई लोग लगातार अपने काम में लगे रहते हैं। वे काम क्यों करते हैं? क्या वे असीम लालच से प्रेरित होते हैं? नहीं। वे काम इसलिए करते हैं ताकि वे दूसरों के लिए योगदान दे सकें, और साथ ही अपनेपन की भावना, इस भावना की पुष्टि भी कर सकें कि "यहाँ रहना ठीक है।" धनवान लोग, जो अपार धन-संपत्ति अर्जित करने के बाद, अपनी ऊर्जा धर्मार्थ कार्यों पर केंद्रित करते हैं, ऐसा इसलिए करते हैं ताकि उन्हें अपनी अहमियत का एहसास हो और वे खुद को यह विश्वास दिला सकें कि "यहाँ रहना ठीक है।"

युवक: हम्म, मुझे लगता है कि यह एक सच्चाई है। लेकिन...

दार्शनिक: लेकिन क्या?

आत्म-स्वीकृति: अपने अपूरणीय "इस मैं" को वैसे ही स्वीकार करना जैसा वह है।
दूसरों पर भरोसा: अपने पारस्परिक संबंधों के आधार पर संदेह पैदा करने के बजाय बिना शर्त विश्वास को स्थापित करना।
युवक को ये दोनों अवधारणाएँ काफी विश्वसनीय लगीं। हालाँकि, दूसरों के लिए योगदान, वह पूरी तरह समझ नहीं पाया।
अगर वह योगदान "दूसरों के लिए" माना जाता है, तो उसे कटु आत्म-बलिदान करना होगा। दूसरी ओर,

Machine Translated by Google

दूसरी ओर, अगर वह योगदान वास्तव में "अपने लिए" है, तो यह पाखंड की पराकाष्ठा है। यह बात पूरी तरह स्पष्ट होनी चाहिए। दृढ़ स्वर में, युवक ने आगे कहा।

Machine Translated by Google

युवा लोग वयस्कों से आगे बढ़ते हैं

युवा: मैं मानता हूँ कि काम में दूसरों के लिए योगदान के पहलू भी होते हैं। लेकिन यह तर्क कि आधिकारिक तौर पर कोई दूसरों के लिए योगदान कर रहा है, जबकि वास्तव में वह अपने लिए कर रहा है, पाखंड के अलावा और कुछ नहीं है। आप इसे कैसे समझाएँगे?

दार्शनिक: इस तरह के दृश्य की कल्पना कीजिए। घर में खाना खाने के बाद, मेज़ पर अभी भी बर्तन रखे हुए हैं। बच्चे अपने कमरों में चले गए हैं, और पति सोफ़े पर बैठकर टीवी देख रहा है। बर्तन धोने और सब कुछ साफ़ करने का काम मेरी पत्नी (मुझ पर) ने छोड़ दिया है। इससे भी बदतर, परिवार इसे हल्के में लेता है, और मदद करने की ज़रा भी कोशिश नहीं करता। ऐसी स्थिति में, आमतौर पर कोई सोचता है, " वे मेरी मदद क्यों नहीं करते?" या "मुझे ही सारा काम क्यों करना पड़ता है?" भले ही सफाई करते समय मुझे अपने परिवार से "धन्यवाद" न सुनने को मिले, मैं चाहता हूँ कि वे सोचें कि मैं परिवार के लिए उपयोगी हूँ। यह सोचने के बजाय कि दूसरे मेरे लिए क्या कर सकते हैं, मैं यह सोचना चाहता हूँ और उसे अमल में लाना चाहता हूँ कि मैं दूसरों के लिए क्या कर सकता हूँ। योगदान की इस भावना से ही, मेरे सामने की वास्तविकता एक बिल्कुल अलग रंग ले लेगी। दरअसल, अगर मैं बर्तन धोते हुए मन ही मन बड़बड़ा रही हूँ, तो शायद मेरे आस-पास रहना ज़्यादा मज़ेदार नहीं होगा, इसलिए सब लोग बस दूरी बनाए रखना चाहते हैं। वहीं दूसरी ओर, अगर मैं मन ही मन गुनगुना रही हूँ और खुश होकर बर्तन धो रही हूँ, तो बच्चे आकर मेरी मदद कर सकते हैं। कम से कम, मैं ऐसा माहौल तो बना पाऊँगी जिसमें उनके लिए मदद करना आसान हो जाएगा।

युवक: खैर, उस स्थिति में तो ऐसा ही हो सकता है।

दार्शनिक: अब, उस परिस्थिति में मुझे योगदान की भावना कैसे आती है? मुझे यह इसलिए आती है क्योंकि मैं अपने परिवार के सदस्यों को अपना साथी मान पाता हूँ। अगर मैं ऐसा नहीं कर पाता, तो मेरे मन में ऐसे विचार अवश्य आएंगे, जैसे, मैं ही यह सब क्यों कर रहा हूँ? और कोई मेरी मदद क्यों नहीं करेगा? दूसरों को दुश्मन समझते हुए किया गया योगदान वास्तव में पाखंड की ओर ले जा सकता है। लेकिन अगर दूसरे लोग आपके साथी हैं, तो ऐसा कभी नहीं होना चाहिए, चाहे कुछ भी हो जाए।

Machine Translated by Google

कोई व्यक्ति जो योगदान देता है, वह कितना महत्वपूर्ण है। आप "पाखंड" शब्द पर अड़े हुए हैं क्योंकि आप अभी तक सामुदायिक भावना को नहीं समझ पाए हैं।

युवक: ठीक है...

दार्शनिक: सुविधा के लिए, अब तक मैंने आत्म-स्वीकृति, दूसरों में विश्वास और दूसरों के लिए योगदान, इसी क्रम में, पर चर्चा की है। हालाँकि, ये तीनों एक अनिवार्य इकाई के रूप में, एक प्रकार की वृत्ताकार संरचना में जुड़े हुए हैं। चूँकि व्यक्ति स्वयं को वैसे ही स्वीकार करता है जैसे वह है—स्वयं को स्वीकार करता है—इसलिए वह "दूसरों में विश्वास" रख सकता है बिना इस डर के कि उसका फायदा उठाया जाएगा। और चूँकि व्यक्ति दूसरों पर बिना शर्त विश्वास रख सकता है, और यह महसूस कर सकता है कि लोग उसके साथी हैं, इसलिए वह "दूसरों के लिए योगदान" कर सकता है। इसके अलावा, चूँकि व्यक्ति दूसरों के लिए योगदान करता है, इसलिए उसे यह गहरी जागरूकता हो सकती है कि "मैं किसी के काम आ सकता हूँ" और वह स्वयं को वैसे ही स्वीकार कर सकता है जैसे वह है। व्यक्ति आत्म-स्वीकृति कर सकता है। पिछले दिनों आपने जो नोट्स लिए थे, क्या वे आपके पास हैं?

युवक: ओह, आपका मतलब एडलरियन मनोविज्ञान द्वारा प्रस्तुत उद्देश्यों पर टिप्पणी से है?
उस दिन से, ज़ाहिर है, मैंने इसे अपने पास रखा है। यह रहा: "व्यवहार के दो उद्देश्य: आत्मनिर्भर होना और समाज के साथ सामंजस्य बिठाकर रहना। इन व्यवहारों का समर्थन करने वाले मनोविज्ञान के दो उद्देश्य: यह चेतना कि मेरे पास क्षमता है और यह चेतना कि लोग मेरे साथी हैं।"

दार्शनिक: अगर आप इस नोट की विषयवस्तु को हमारी अभी-अभी की चर्चा से जोड़ते हैं, तो आपको गहरी समझ मिलनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, "आत्मनिर्भर होना" और "यह चेतना कि मेरे पास क्षमता है" हमारी आत्म-स्वीकृति की चर्चा से मेल खाती है। और फिर "समाज के साथ सामंजस्य बिठाकर रहना" और "यह चेतना कि लोग मेरे साथी हैं" दूसरों में विश्वास और फिर दूसरों के लिए योगदान से जुड़ते हैं।

युवक: मैं समझ गया। तो जीवन का उद्देश्य सामुदायिक भावना है। हालाँकि, मुझे लगता है कि इसे अपने दिमाग में स्पष्ट करने में मुझे कुछ समय लगेगा।

दार्शनिक: हाँ, शायद ऐसा होगा। जैसा कि एडलर ने खुद कहा था, "किसी इंसान को समझना कोई आसान बात नहीं है। मनोविज्ञान के सभी रूपों में, व्यक्तिगत मनोविज्ञान सीखना और व्यवहार में लाना शायद सबसे कठिन है।"

Machine Translated by Google

युवक: बिलकुल सही! सिद्धांत भले ही विश्वसनीय हों, उन्हें व्यवहार में लाना मुश्किल है।

दार्शनिक: यह भी कहा जाता है कि एडलरियन मनोविज्ञान को सही मायने में समझने और उसे अपनी जीवनशैली में बदलाव लाने के लिए, किसी व्यक्ति को "अपने जीवन के आधे वर्षों" की आवश्यकता होती है। दूसरे शब्दों में, अगर आप चालीस साल की उम्र में इसका अध्ययन शुरू करते हैं, तो आपको साठ साल पूरे होने तक बीस साल और लगेंगे। अगर आप बीस साल की उम्र में अध्ययन शुरू करते हैं, तो आपको तीस साल पूरे होने तक दस साल लगेंगे। आप अभी भी युवा हैं। जीवन में इतनी कम उम्र में शुरुआत करने का मतलब है कि आप ज़्यादा तेज़ी से बदल सकते हैं। इस मायने में कि आप तेज़ी से बदल सकते हैं, आप दुनिया के वयस्कों से आगे चल रहे हैं। खुद को बदलने और एक नई दुनिया बनाने के लिए, एक तरह से आप मुझसे भी आगे हैं। अपना रास्ता भटक जाना या ध्यान भटक जाना ठीक है। ऊर्ध्वाधर रिश्तों पर निर्भर न रहें या नापसंद किए जाने से न डरें, और बस स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ते रहें। अगर सभी वयस्क यह देख सकें कि युवा उनसे आगे चल रहे हैं, तो मुझे यकीन है कि दुनिया नाटकीय रूप से बदल जाएगी।

युवक: मैं आपसे आगे चल रहा हूं?

दार्शनिक: हाँ, आप तो बिलकुल सही हैं। हम एक ही ज़मीन पर चल रहे हैं, और आप मुझसे आगे चल रहे हैं।

युवक: हा-हा। तुम पहले व्यक्ति हो जिससे मैं मिला हूँ जो अपने बेटे के बराबर उम्र के किसी व्यक्ति से ऐसी बात कहेगा।

दार्शनिक: मैं चाहता हूं कि अधिक से अधिक युवा एडलर के विचारों के बारे में जानें।
और मैं चाहूँगा कि ज़्यादा से ज़्यादा वयस्क भी इसके बारे में जानें। क्योंकि लोग बदल सकते हैं, चाहे उनकी उम्र कुछ भी हो।

Machine Translated by Google

काम के प्रति जुनून एक जीवन-झूठ है

युवक: ठीक है। मैं सहजता से स्वीकार करता हूँ कि मुझमें आत्म-स्वीकृति या दूसरों पर विश्वास करने की दिशा में कदम उठाने का साहस नहीं है। लेकिन क्या यह वास्तव में केवल "मैं" का दोष है? क्या यह वास्तव में दूसरों द्वारा उत्पन्न समस्या नहीं है, जो मुझ पर बेवजह आरोप लगाते हैं और मुझ पर हमला करते हैं?

दार्शनिक: यह तो निश्चित है कि दुनिया में हर कोई अच्छा और गुणी व्यक्ति नहीं है।
पारस्परिक संबंधों में व्यक्ति को कई अप्रिय अनुभवों से गुज़रना पड़ता है। लेकिन इस मोड़ पर एक बात है जिसे ग़लत नहीं समझना चाहिए: यह कि हर बार, समस्या "वह व्यक्ति" ही है जो आप पर हमला करता है, और यह बिल्कुल भी सच नहीं है कि हर कोई बुरा होता है। विक्षिप्त जीवनशैली वाले लोग अपनी बातचीत में "हर कोई", "हमेशा" और "सब कुछ" जैसे शब्दों का इस्तेमाल करते हैं।

वे कहेंगे, “हर कोई मुझसे नफ़रत करता है,” या “हमेशा मुझे ही नुकसान होता है,” या “सब कुछ ग़लत है।” अगर आपको लगता है कि आपको ऐसे सामान्यीकरण वाले बयानों का इस्तेमाल करने की आदत है, तो आपको सावधान हो जाना चाहिए।

युवक: हां, यह तो काफी परिचित सा लगता है।

दार्शनिक: एडलरियन मनोविज्ञान में, हम इसे जीवन जीने का एक ऐसा तरीका मानते हैं जिसमें "जीवन के सामंजस्य" का अभाव है। यह जीवन जीने का एक ऐसा तरीका है जिसमें व्यक्ति चीज़ों का केवल एक हिस्सा देखता है, लेकिन समग्रता का मूल्यांकन करता है।

युवा: जीवन में सामंजस्य?

दार्शनिक: यहूदी धर्म की शिक्षाओं में एक किस्सा मिलता है: "अगर दस लोग हैं, तो उनमें से एक ऐसा होगा जो आपके हर काम की आलोचना करेगा। वह व्यक्ति आपको नापसंद करने लगेगा, और आप भी उसे पसंद करना नहीं सीखेंगे। फिर, दो और लोग होंगे जो आपकी हर बात मानेंगे और जिन्हें आप भी स्वीकार करेंगे, और आप उनके करीबी दोस्त बन जाएँगे। बाकी सात लोग न तो आपकी आलोचना करेंगे और न ही आपकी आलोचना करेंगे।"

Machine Translated by Google

इन प्रकारों में से।" अब, क्या आप उस एक व्यक्ति पर ध्यान केंद्रित करते हैं जो आपको नापसंद करता है? क्या आप उन दो लोगों पर ज़्यादा ध्यान देते हैं जो आपसे प्यार करते हैं? या आप भीड़ पर, बाकी सात लोगों पर ध्यान केंद्रित करेंगे? जिस व्यक्ति के जीवन में सामंजस्य की कमी है, वह केवल उसी एक व्यक्ति को देखेगा जिसे वह नापसंद करता है और उसी के आधार पर दुनिया का आकलन करेगा।

युवा: दिलचस्प.

दार्शनिक: कुछ समय पहले, मैंने हकलाने वाले लोगों और उनके परिवारों के लिए एक कार्यशाला में भाग लिया था। क्या आप किसी ऐसे व्यक्ति को जानते हैं जो हकलाता हो?

युवक: हाँ, जिस स्कूल में मैं पढ़ता था, वहाँ एक छात्र हकलाता था। इससे निपटना बहुत मुश्किल होता होगा, उस व्यक्ति के लिए भी जिसे हकलाने की समस्या थी और उसके परिवार के लिए भी।

दार्शनिक: हकलाहट से निपटना इतना मुश्किल क्यों है? एडलरियन मनोविज्ञान का मानना है कि हकलाने वाले लोग सिर्फ़ अपनी बात कहने के तरीके को लेकर चिंतित रहते हैं, उनमें हीनता की भावना होती है और वे अपने जीवन को असहनीय रूप से कठिन समझते हैं।

और परिणामस्वरूप वे बहुत अधिक आत्म-सचेत हो जाते हैं और अपने शब्दों को बार-बार दोहराने लगते हैं।

युवा: वे केवल अपने बोलने के तरीके के बारे में चिंतित हैं?

दार्शनिक: बिलकुल सही। ऐसे बहुत कम लोग होते हैं जो किसी के कभी-कभार अपनी बातों से चूक जाने पर उस पर हँसते या उसका मज़ाक उड़ाते हैं। मैंने अभी जो उदाहरण दिया है, उसके अनुसार, ऐसा शायद दस में से एक व्यक्ति ही करेगा। खैर, ऐसे मूर्ख व्यक्ति से, जो ऐसा रवैया अपनाता है, रिश्ता तोड़ देना ही बेहतर है। लेकिन अगर किसी के जीवन में सामंजस्य की कमी है, तो वह सिर्फ़ उसी पर ध्यान केंद्रित करेगा और अंत में यही सोचेगा, " सब मुझ पर हँस रहे हैं।"

युवक: लेकिन यह तो मानव स्वभाव है!

दार्शनिक: मेरा एक रीडिंग ग्रुप है जो नियमित रूप से मिलता है, और उसमें एक प्रतिभागी हकलाता है। कभी-कभी जब उसकी पढ़ने की बारी आती है तो यह बात सामने आ जाती है। लेकिन वहाँ एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो इस पर उस पर हँसे। हर कोई बस चुपचाप बैठा रहता है और अगले शब्दों के आने का सहज रूप से इंतज़ार करता है। मुझे यकीन है कि यह कोई ऐसी घटना नहीं है जो सिर्फ़ मेरे रीडिंग ग्रुप तक ही सीमित हो। जब किसी के पारस्परिक संबंध ठीक नहीं होते, तो इसका दोष हकलाने या शर्मिंदगी के डर या ऐसी किसी भी चीज़ पर नहीं डाला जा सकता। हालाँकि समस्या असल में यह है कि व्यक्ति ने आत्म-नियंत्रण हासिल नहीं किया है।

Machine Translated by Google

दूसरों को स्वीकार करना या उन पर भरोसा करना, या दूसरों के लिए योगदान देना, इन सब बातों में, व्यक्ति केवल उन चीज़ों के एक छोटे से हिस्से पर ध्यान केंद्रित कर रहा है जिनका कोई महत्व नहीं होना चाहिए और उसी के आधार पर पूरी दुनिया के बारे में राय बनाने की कोशिश कर रहा है। यह एक भटकी हुई जीवनशैली है जिसमें जीवन के सामंजस्य का अभाव है।

युवक: क्या आपने वास्तव में हकलाने से पीड़ित लोगों को ऐसा कठोर विचार बताया था?

दार्शनिक: बिल्कुल। शुरुआत में तो कुछ प्रतिकूल प्रतिक्रियाएँ हुईं, लेकिन तीन दिन की कार्यशाला के अंत तक, सभी लोग इससे पूरी तरह सहमत हो गए।

युवक: यह वाकई एक दिलचस्प तर्क है। लेकिन हकलाने की समस्या से जूझ रहे लोगों पर ध्यान केंद्रित करना एक खास उदाहरण लगता है। क्या आप मुझे कोई और उदाहरण दे सकते हैं?

दार्शनिक: अच्छा, दूसरा उदाहरण होगा काम में डूबे रहने वाला व्यक्ति। यह भी एक ऐसे व्यक्ति का उदाहरण है जिसके जीवन में सामंजस्य का स्पष्ट अभाव है।

युवा: क्या कोई काम का आदी होता है? ऐसा क्यों?

दार्शनिक: हकलाने की समस्या से पीड़ित लोग चीज़ों के केवल एक हिस्से को देखते हैं, लेकिन समग्रता का आकलन करते हैं। काम के प्रति जुनूनी लोगों का ध्यान जीवन के केवल एक विशिष्ट पहलू पर ही केंद्रित होता है।

वे शायद यह कहकर इसे सही ठहराने की कोशिश करते हैं, "मैं काम में व्यस्त हूँ, इसलिए मेरे पास अपने परिवार के बारे में सोचने के लिए पर्याप्त समय नहीं है।" लेकिन यह एक जीवन-झूठ है। वे बस काम को बहाना बनाकर अपनी अन्य ज़िम्मेदारियों से बचने की कोशिश कर रहे हैं। घर के कामों और बच्चों की परवरिश से लेकर अपनी दोस्ती और शौक वगैरह तक, हर चीज़ में खुद को व्यस्त रखना चाहिए। एडलर जीवन जीने के ऐसे तरीकों को मान्यता नहीं देते जिनमें कुछ पहलू असामान्य रूप से हावी हों।

युवक: आह. · मेरे पिता बिल्कुल ऐसे ही इंसान थे। बस यही था: काम में डूबे रहो, अपने काम में डूब जाओ और नतीजे हासिल करो। और फिर परिवार पर इस आधार पर हुकूमत करो कि तुम कमाने वाले हो। वे बहुत सामंतवादी व्यक्ति थे।

दार्शनिक: एक तरह से, यह अपने जीवन के कार्यों को स्वीकार न करने का एक तरीका है। "काम" का मतलब किसी कंपनी में नौकरी करना नहीं है। घर का काम, बच्चों की परवरिश, स्थानीय समाज में योगदान, शौक और हर तरह की दूसरी चीज़ें।

Machine Translated by Google

काम। कंपनियाँ वगैरह तो बस इसका एक छोटा सा हिस्सा हैं। जीवन जीने का वह तरीका जो सिर्फ़ कंपनी के काम को ही महत्व देता है, जीवन में सामंजस्य का अभाव है।

युवक: बिलकुल वैसा ही है जैसा तुम कह रहे हो! और ऐसा भी नहीं है कि जिस परिवार का वह पालन-पोषण कर रहा है, उसकी भी इसमें कोई भूमिका है। जब तुम्हारे पिता हिंसक स्वर में गुर्राते हैं, "मेरी बदौलत ही तो मेज़ पर खाना है," तो तुम उनसे बहस नहीं कर सकते।

दार्शनिक: ऐसा पिता शायद अपने मूल्य को केवल कर्मों के स्तर पर ही पहचान पाया है। वह घंटों काम करता है, परिवार का भरण-पोषण करने लायक पैसा कमाता है, और समाज में उसकी पहचान है—और इसी आधार पर, वह खुद को अपने परिवार के अन्य सदस्यों से ज़्यादा मूल्यवान समझता है। हालाँकि, हम सभी के लिए एक समय ऐसा आता है जब वह परिवार का पालन-पोषण करने में असमर्थ हो जाता है। उदाहरण के लिए, जब कोई बूढ़ा हो जाता है और सेवानिवृत्ति की आयु तक पहुँच जाता है, तो उसके पास अपनी पेंशन या बच्चों से मिलने वाले समर्थन पर निर्भर रहने के अलावा कोई विकल्प नहीं रह जाता। युवावस्था में भी, चोट या खराब स्वास्थ्य के कारण वह और काम करने में असमर्थ हो सकता है। ऐसे मौकों पर, जो लोग खुद को केवल कर्मों के स्तर पर स्वीकार कर पाते हैं, उन्हें बहुत नुकसान होता है।

युवा: आपका मतलब उन लोगों से है जिनकी जीवनशैली पूरी तरह काम पर केंद्रित है?

दार्शनिक: हाँ। जिन लोगों के जीवन में सामंजस्य का अभाव है।

युवा: उस स्थिति में, मुझे लगता है कि मैं अब समझ रहा हूँ कि आप "अस्तित्व के स्तर" से क्या मतलब रखते हैं, जिसका ज़िक्र आपने पिछली बार किया था। और मैंने इस बात पर ज़्यादा विचार नहीं किया है कि एक दिन मैं काम नहीं कर पाऊँगा या कृत्यों के स्तर पर कुछ भी नहीं कर पाऊँगा।

दार्शनिक: क्या कोई व्यक्ति स्वयं को कर्म के स्तर पर स्वीकार करता है, या अस्तित्व के स्तर पर?
यह वास्तव में एक ऐसा प्रश्न है जो खुश रहने के साहस से संबंधित है।

Machine Translated by Google

अब आप खुश रह सकते हैं

युवक: खुश रहने का साहस। अच्छा, सुनिए कैसा साहस होना चाहिए?

दार्शनिक: हाँ, यह एक महत्वपूर्ण बात है।

युवा: आप कहते हैं कि सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। और फिर आप इसे पलटकर कहते हैं कि हमारी खुशी हमारे पारस्परिक संबंधों में भी निहित है। लेकिन मुझे अभी भी इन पहलुओं को स्वीकार करना मुश्किल लगता है। क्या मनुष्य जिसे खुशी कहते हैं, वह सिर्फ़ हमारे अच्छे पारस्परिक संबंधों का ही एक हिस्सा है? यानी, क्या हमारा जीवन ऐसे छोटे से विश्राम और आनंद के लिए है?

दार्शनिक: मुझे आपकी समस्याओं का अच्छा अंदाज़ा है। जब मैंने पहली बार एडलर के मनोविज्ञान पर एक व्याख्यान सुना, तो व्याख्याता ऑस्कर क्रिस्टेंसन, जो एडलर के एक शिष्य के शिष्य थे, ने यह बयान दिया: "जो लोग आज मेरा व्याख्यान सुनेंगे, वे अभी, इसी क्षण खुश हो सकते हैं। लेकिन जो नहीं सुनेंगे, वे कभी खुश नहीं हो पाएँगे।"

युवक: वाह! ये तो किसी ठग के मुँह से निकला है। तुम ये तो नहीं कह रहे कि तुम इसके झाँसे में आ गए, है ना?

दार्शनिक: मनुष्य के लिए खुशी क्या है? यह एक ऐसा विषय है जो प्राचीन काल से ही दर्शनशास्त्र के निरंतर सूत्रों में से एक रहा है। मैंने हमेशा मनोविज्ञान को दर्शनशास्त्र के एक क्षेत्र से ज़्यादा कुछ नहीं माना था, और इस तरह समग्र रूप से मनोविज्ञान में मेरी बहुत कम रुचि थी। इसलिए दर्शनशास्त्र के एक छात्र के रूप में, मैंने अपने तरीके से, इस प्रश्न पर विचार किया: खुशी क्या है? अगर मैं यह स्वीकार न करूँ कि क्रिस्टेंसन के शब्दों को सुनकर मुझे कुछ हिचकिचाहट हुई थी, तो यह मेरी लापरवाही होगी। हालाँकि, जिस समय मैंने उस हिचकिचाहट का अनुभव किया, मुझे कुछ एहसास हुआ। मैंने खुशी के वास्तविक स्वरूप पर बहुत गहराई से विचार किया था। मैंने उत्तर खोजे थे। लेकिन मैंने हमेशा इस प्रश्न पर गहराई से विचार नहीं किया था: कैसे

Machine Translated by Google

क्या कोई खुश रह सकता है? तब मुझे लगा कि भले ही मैं दर्शनशास्त्र का छात्र हूँ, फिर भी शायद मैं खुश नहीं हूँ।

युवक: मैं समझ गया। तो एडलरियन मनोविज्ञान से आपकी पहली मुलाक़ात असंगति की भावना से शुरू हुई?

दार्शनिक: यह सही है।

युवक: तो फिर कृपया मुझे बताइये: क्या आप अंततः खुश हो गये?

दार्शनिक: बिल्कुल।

युवक: आप इतना आश्वस्त कैसे हो सकते हैं?

दार्शनिक: इंसान के लिए सबसे बड़ा दुख खुद को पसंद न कर पाना है। एडलर ने इस हकीकत का जवाब बेहद आसान तरीके से दिया।

अर्थात्, "मैं समुदाय के लिए लाभदायक हूँ" या "मैं किसी के लिए उपयोगी हूँ" की भावना ही एकमात्र ऐसी चीज़ है जो किसी को यह सच्ची जागरूकता दे सकती है कि वह मूल्यवान है।

युवा: क्या आपका मतलब "दूसरों के लिए योगदान" से है जिसका आपने पहले उल्लेख किया था?

दार्शनिक: हाँ। और यह एक महत्वपूर्ण बात है: जब हम दूसरों के लिए योगदान की बात करते हैं, तो इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि वह योगदान दिखाई नहीं दे रहा है।

युवा: यदि योगदान प्रत्यक्ष नहीं है तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ता?

दार्शनिक: यह तय करने वाले आप नहीं हैं कि आपका योगदान उपयोगी है या नहीं। यह दूसरों का काम है, और यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें आप दखल दे सकें। सिद्धांततः, ऐसा कोई तरीका भी नहीं है जिससे आप जान सकें कि आपने सचमुच कोई योगदान दिया है या नहीं।

कहने का तात्पर्य यह है कि जब हम दूसरों के लिए योगदान कर रहे होते हैं, तो योगदान को दृश्यमान होना आवश्यक नहीं है - हमें केवल व्यक्तिपरक भावना की आवश्यकता होती है कि "मैं किसी के लिए उपयोगी हूं," या दूसरे शब्दों में, योगदान की भावना।

युवक: ज़रा रुको! अगर ऐसा है, तो जिसे तुम खुशी कह रहे हो, वो...

दार्शनिक: क्या अब आपको समझ आ रहा है? एक शब्द में कहें तो खुशी योगदान की भावना है।
यही खुशी की परिभाषा है।

Machine Translated by Google

युवक: लेकिन... लेकिन यह तो...

दार्शनिक: क्या कुछ गड़बड़ है?

युवक: ऐसी सरल परिभाषा को मैं किसी भी तरह स्वीकार नहीं कर सकता। देखिए, मैं आपकी कही बात नहीं भूल रहा हूँ। आपने कहा था कि भले ही कर्मों के स्तर पर कोई किसी के काम न आए, लेकिन अस्तित्व के स्तर पर हर व्यक्ति उपयोगी है। लेकिन अगर ऐसा है, तो आपके तर्क के अनुसार, सभी मनुष्य सुखी होंगे!

दार्शनिक: सभी मनुष्य सुखी हो सकते हैं। लेकिन यह समझना ज़रूरी है कि इसका मतलब यह नहीं कि सभी मनुष्य सुखी हैं । चाहे वह कर्मों के स्तर पर हो या अस्तित्व के स्तर पर, व्यक्ति को यह महसूस होना चाहिए कि वह किसी के काम आ सकता है। यानी, योगदान की भावना होनी चाहिए।

युवक: तो आप यह कह रहे हैं कि मैं खुश नहीं हूं, क्योंकि मुझमें योगदान की भावना नहीं है?

दार्शनिक: यह सही है।

युवा: तो फिर मैं योगदान की भावना कैसे प्राप्त कर सकता हूँ? काम करके? स्वयंसेवी गतिविधियों के माध्यम से?

दार्शनिक: पहले हम पहचान की चाहत के बारे में बात कर रहे थे। मेरे इस कथन के जवाब में कि पहचान की चाहत नहीं रखनी चाहिए, आपने कहा कि पहचान की चाहत एक सार्वभौमिक चाहत है।

युवक: हाँ, मैंने सोचा था। लेकिन सच कहूँ तो, मैं अभी भी इस बात को लेकर पूरी तरह आश्वस्त नहीं हूँ।

दार्शनिक: लेकिन मुझे यकीन है कि लोगों द्वारा पहचान पाने की चाहत का कारण अब आपको समझ आ गया होगा। लोग खुद को पसंद करना चाहते हैं। वे महसूस करना चाहते हैं कि उनका कोई मूल्य है। ऐसा महसूस करने के लिए, वे योगदान की भावना चाहते हैं जो उन्हें बताए कि "मैं किसी के काम आ सकता हूँ।" और वे योगदान की इस भावना को पाने के एक आसान साधन के रूप में दूसरों से पहचान चाहते हैं।

युवा: आप कह रहे हैं कि मान्यता की इच्छा योगदान की भावना प्राप्त करने का एक साधन है?

Machine Translated by Google

दार्शनिक: क्या ऐसा नहीं है?

युवक: बिल्कुल नहीं। यह आपकी अब तक कही गई हर बात का खंडन करता है। क्योंकि क्या दूसरों से पहचान पाना योगदान की भावना पैदा करने का एक ज़रिया नहीं है? और फिर आप कहते हैं, "खुशी योगदान की भावना है।" अगर ऐसा है, तो पहचान की चाहत पूरी करना सीधे तौर पर खुशी से जुड़ा है, है ना? हा-हा! आखिरकार, आपने पहचान की चाहत की ज़रूरत को स्वीकार कर ही लिया।

दार्शनिक: आप एक महत्वपूर्ण बात भूल रहे हैं। अगर किसी के योगदान की भावना पाने का ज़रिया "दूसरों द्वारा मान्यता प्राप्त करना" है, तो आगे चलकर उसके पास दूसरों की इच्छाओं के अनुसार जीवन जीने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचेगा। मान्यता की चाहत से प्राप्त योगदान की भावना में कोई आज़ादी नहीं होती। हम ऐसे प्राणी हैं जो सुख की आकांक्षा रखते हुए आज़ादी चुनते हैं।

युवक: तो क्या किसी को खुशी तभी मिल सकती है जब उसके पास स्वतंत्रता हो?

दार्शनिक: हाँ। एक संस्था के रूप में स्वतंत्रता देश, काल या संस्कृति के अनुसार भिन्न हो सकती है। लेकिन हमारे पारस्परिक संबंधों में स्वतंत्रता सार्वभौमिक है।

युवा: क्या आप मान्यता की इच्छा को स्वीकार नहीं करेंगे?

दार्शनिक: अगर किसी के अंदर सचमुच योगदान की भावना है, तो उसे दूसरों से पहचान की कोई ज़रूरत नहीं रहेगी। क्योंकि उसे पहले से ही यह एहसास होगा कि "मैं किसी के काम आ सकता हूँ", और उसे दूसरों से पहचान पाने के लिए कुछ अलग करने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। दूसरे शब्दों में, जो व्यक्ति पहचान की चाहत में डूबा रहता है, उसमें अभी तक सामुदायिक भावना नहीं होती, और वह आत्म-स्वीकृति, दूसरों पर भरोसा, या दूसरों के लिए योगदान करने में कामयाब नहीं हो पाता।

युवा: तो क्या यदि किसी के मन में सामुदायिक भावना होगी तो मान्यता की इच्छा समाप्त हो जाएगी?

दार्शनिक: हाँ, यह गायब हो जाएगा। दूसरों से मान्यता लेने की कोई ज़रूरत नहीं है।

Machine Translated by Google

दार्शनिक के बिंदुओं को इस प्रकार संक्षेपित किया जा सकता है: लोग वास्तव में अपने मूल्य के बारे में तभी जागरूक हो सकते हैं जब वे यह महसूस करने में सक्षम हों कि "मैं किसी के लिए उपयोगी हूं।"

हालाँकि, अगर ऐसे समय में कोई व्यक्ति जो योगदान देता है वह बिना किसी प्रत्यक्ष रूप में हो, तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता। किसी के काम आने का व्यक्तिपरक भाव, यानी योगदान की भावना, ही काफी है। और तब दार्शनिक इस निष्कर्ष पर पहुँचता है: खुशी योगदान की भावना है। इसमें निश्चित रूप से सत्य के कुछ पहलू प्रतीत होते हैं। लेकिन क्या सचमुच यही खुशी है? अगर यही वह खुशी है जिसकी मुझे तलाश है, तो बिल्कुल नहीं!

Machine Translated by Google

"विशेष" बनने की चाह रखने वालों द्वारा अपनाए गए दो रास्ते प्राणी”

युवा: आपने अभी भी मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया है। हो सकता है कि मैं दूसरों के योगदान के माध्यम से वास्तव में खुद को पसंद करना सीख सकूँ। हो सकता है कि मुझे यह एहसास हो कि मेरा कोई मूल्य है, कि मैं कोई बेकार प्राणी नहीं हूँ। लेकिन क्या किसी व्यक्ति को खुश रहने के लिए बस इतना ही चाहिए? इस दुनिया में आने के बाद, मुझे लगता है कि जब तक मैं उस तरह का महान कार्य पूरा नहीं कर पाता जिसके लिए आने वाली पीढ़ियाँ मुझे याद रखेंगी, जब तक मैं खुद को "मैं, जो कोई और नहीं बल्कि मैं हूँ" के रूप में साबित नहीं कर पाता, मुझे कभी भी सच्ची खुशी नहीं मिलेगी। आप आत्म-साक्षात्कार की खुशी के बारे में कुछ भी कहे बिना हर चीज़ को पारस्परिक संबंधों के दायरे में ढालने की कोशिश कर रहे हैं। अगर आप मुझसे पूछें, तो यह टालमटोल के अलावा और कुछ नहीं है!

दार्शनिक: मुझे समझ नहीं आ रहा कि "आत्म-साक्षात्कार वाली खुशी" से आपका क्या मतलब है। आप वास्तव में किसकी बात कर रहे हैं?

युवा: यह हर व्यक्ति के लिए अलग-अलग होता है। मुझे लगता है कि कुछ लोग समाज में सफल होना चाहते हैं और कुछ ऐसे भी हैं जिनके अपने निजी उद्देश्य हैं—जैसे कोई शोधकर्ता कोई चमत्कारी दवा बनाने की कोशिश कर रहा हो, या कोई कलाकार जो संतोषजनक कृतियाँ बनाने की कोशिश कर रहा हो।

दार्शनिक: यह आपके लिए क्या है?

युवा: मैं अभी भी नहीं जानता कि मैं क्या चाहता हूं या भविष्य में क्या करना चाहता हूं।
लेकिन मुझे पता है कि मुझे कुछ करना ही होगा। मैं अपने बाकी दिन किसी विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में काम करते हुए नहीं बिताऊँगा। जब मुझे कोई ऐसा सपना मिलेगा जिसके लिए मैं अपना जीवन समर्पित कर सकूँ, और मुझे आत्म-साक्षात्कार प्राप्त होगा, तभी मुझे सच्ची खुशी का अनुभव होगा। मेरे पिता दिन-रात अपने काम में डूबे रहते थे, और मुझे नहीं पता कि उनके लिए यही खुशी थी या नहीं। कम से कम मेरी नज़र में तो वे हमेशा व्यस्त और कभी खुश नहीं रहते थे। मैं ऐसी ज़िंदगी नहीं जीना चाहता।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: ठीक है। अगर आप समस्याग्रस्त व्यवहार वाले बच्चों का उदाहरण लेकर इस बात पर विचार करें, तो इसे समझना आसान हो सकता है।

युवा: समस्यापूर्ण व्यवहार?

दार्शनिक: बिलकुल सही। सबसे पहले, हम इंसानों में एक सार्वभौमिक इच्छा होती है जिसे "श्रेष्ठता की खोज" कहा जाता है। क्या आपको इस बारे में हमारी चर्चा याद है?

युवा: हाँ। सीधे शब्दों में कहें तो यह एक ऐसा शब्द है जो "सुधार की आशा" और "आदर्श स्थिति की खोज" को दर्शाता है।

दार्शनिक: कई बच्चे अपने शुरुआती दौर में ख़ास तौर पर अच्छे बनने की कोशिश करते हैं। ख़ास तौर पर, वे अपने माता-पिता की आज्ञा मानते हैं, सामाजिक रूप से स्वीकार्य व्यवहार करते हैं, पढ़ाई और खेलकूद में पूरी लगन से जुट जाते हैं, और पाठ्येतर गतिविधियों में भी अव्वल आते हैं। इस तरह, वे अपने माता-पिता से अपनी पहचान बनवाने की कोशिश करते हैं। हालाँकि, जब ख़ास तौर पर अच्छा बनने का कोई फ़ायदा नहीं होता—जैसे कि उनकी पढ़ाई या खेलकूद ठीक नहीं चलता—तो वे पलट जाते हैं और ख़ास तौर पर बुरे बनने की कोशिश करते हैं।

युवक: वे ऐसा क्यों करते हैं?

दार्शनिक: चाहे वे विशेष रूप से अच्छे बनने की कोशिश कर रहे हों, या विशेष रूप से बुरे बनने की कोशिश कर रहे हों, लक्ष्य एक ही है: अन्य लोगों का ध्यान आकर्षित करना, "सामान्य" स्थिति से बाहर निकलना और एक "विशेष व्यक्ति" बनना। यही उनका एकमात्र लक्ष्य है।

युवक: हम्म। ठीक है, कृपया आगे बढ़ें।

दार्शनिक: किसी भी स्थिति में, चाहे वह पढ़ाई हो या खेलकूद, किसी भी तरह से, अगर किसी को कोई महत्वपूर्ण परिणाम प्राप्त करना है तो निरंतर प्रयास करने की आवश्यकता है। लेकिन जो बच्चे विशेष रूप से बुरे बनने की कोशिश करते हैं—अर्थात, जो समस्याग्रस्त व्यवहार में लिप्त होते हैं—वे ऐसे किसी भी स्वस्थ प्रयास से बचते हुए भी दूसरों का ध्यान आकर्षित करने का प्रयास कर रहे होते हैं। एडलरियन मनोविज्ञान में, इसे "आसान श्रेष्ठता की खोज" कहा जाता है। उदाहरण के लिए, उस समस्याग्रस्त बच्चे को लें जो रबड़ फेंककर या ऊँची आवाज़ में बोलकर पाठ में बाधा डालता है। वह निश्चित रूप से अपने दोस्तों और शिक्षकों का ध्यान आकर्षित करेगा। भले ही यह कुछ ऐसा हो जो उस स्थान तक ही सीमित हो, वह संभवतः एक विशेष व्यक्ति बनने में सफल होगा। लेकिन यह आसान श्रेष्ठता की खोज है, और यह एक अस्वास्थ्यकर रवैया है।

Machine Translated by Google

युवा: तो क्या जो बच्चे अपराधी कृत्य करते हैं, वे भी आसान श्रेष्ठता की खोज में लगे रहते हैं?

दार्शनिक: हाँ, बिल्कुल। स्कूल जाने से मना करने से लेकर कलाई काटने, कम उम्र में शराब पीने और धूम्रपान करने तक, सभी तरह के समस्याग्रस्त व्यवहार, आसान श्रेष्ठता की चाहत के ही रूप हैं। और आपका एकांतप्रिय दोस्त, जिसके बारे में आपने मुझे शुरुआत में बताया था, भी इसमें शामिल है। जब कोई बच्चा समस्याग्रस्त व्यवहार करता है, तो उसके माता-पिता और दूसरे बड़े उसे डाँटते हैं। डाँट-फटकार, किसी भी चीज़ से ज़्यादा, बच्चे पर तनाव डालती है। लेकिन अगर यह डाँट-फटकार के रूप में भी हो, तो बच्चा अपने माता-पिता का ध्यान चाहता है। वह एक खास इंसान बनना चाहता है, और ध्यान का कोई भी रूप मायने नहीं रखता। इसलिए एक तरह से, यह स्वाभाविक ही है कि वह समस्याग्रस्त व्यवहार करना बंद नहीं करेगा, चाहे उसे कितनी भी कड़ी फटकार क्यों न लगाई जाए।

युवक: क्या यह उनकी डांट-फटकार के कारण है कि वह समस्याग्रस्त व्यवहार बंद नहीं करता?

दार्शनिक: बिल्कुल। क्योंकि माता-पिता और दूसरे बड़े लोग उसे डाँट-फटकार के ज़रिए ध्यान दे रहे हैं।

युवा: लेकिन पहले तो आपने समस्याग्रस्त व्यवहार का लक्ष्य माता-पिता से बदला लेना बताया था, है ना? क्या यह किसी तरह से इससे जुड़ा है?

दार्शनिक: हाँ। "बदला" और "आसान श्रेष्ठता की चाह" एक-दूसरे से आसानी से जुड़े हुए हैं। एक व्यक्ति दूसरे के लिए मुसीबत खड़ी करता है और साथ ही "ख़ास" बनने की कोशिश भी करता है।

Machine Translated by Google

सामान्य होने का साहस

युवक: लेकिन कैसे. · ? सभी इंसानों का विशेष रूप से अच्छा होना, या ऐसा कुछ भी होना असंभव होगा, है ना? चाहे कुछ भी हो, लोगों की अपनी खूबियाँ और कमज़ोरियाँ होती हैं, और उनमें हमेशा अंतर रहेगा। दुनिया में गिने-चुने प्रतिभाशाली लोग ही होते हैं, और हर कोई ऑनर्स स्टूडेंट बनने के लिए तैयार नहीं होता। इसलिए सभी असफल लोगों के लिए, विशेष रूप से बुरा होने के अलावा और कुछ नहीं है।

दार्शनिक: हाँ, यह सुकरात का विरोधाभास है कि कोई भी बुराई नहीं चाहता। क्योंकि समस्याग्रस्त व्यवहार करने वाले बच्चों के लिए, हिंसक कृत्य और चोरी भी "अच्छाई" की उपलब्धि हैं।

युवक: लेकिन यह तो भयानक है! यह तर्क का ऐसा तरीका है जिसका कोई रास्ता नहीं है।

दार्शनिक: एडलरियन मनोविज्ञान इस मोड़ पर जिस बात पर जोर देता है, वह है "सामान्य होने का साहस।"

युवा: सामान्य होने का साहस?

दार्शनिक: ख़ास होना क्यों ज़रूरी है? शायद इसलिए कि कोई अपने सामान्य स्वभाव को स्वीकार नहीं कर पाता। और यही वजह है कि जब ख़ास तौर पर अच्छा होना एक असंभव काम बन जाता है, तो व्यक्ति ख़ास तौर पर बुरा बनने की ओर छलांग लगा देता है—बिल्कुल विपरीत। लेकिन क्या सामान्य होना, साधारण होना, वाकई इतनी बुरी बात है? क्या यह कोई घटिया चीज़ है? या, सच में, क्या हर कोई सामान्य नहीं है? इस पर तार्किक निष्कर्ष तक विचार करना ज़रूरी है।

युवक: तो क्या आप यह कह रहे हैं कि मुझे सामान्य होना चाहिए?

दार्शनिक: आत्म-स्वीकृति ही पहला ज़रूरी कदम है। अगर आप सामान्य होने का साहस जुटा पाएँ, तो दुनिया को देखने का आपका नज़रिया नाटकीय रूप से बदल जाएगा।

Machine Translated by Google

युवक: लेकिन...

दार्शनिक: आप शायद सामान्यता को नकार रहे हैं क्योंकि आप सामान्य होने को अक्षमता के बराबर समझते हैं। सामान्य होना अक्षमता नहीं है। किसी को अपनी श्रेष्ठता का दिखावा करने की ज़रूरत नहीं है।

युवक: ठीक है, मैं ख़ास बनने के ख़तरे को समझता हूँ। लेकिन क्या किसी को वाकई जानबूझकर सामान्य बनने का चुनाव करना ज़रूरी है? अगर मैं इस दुनिया में अपना समय बिल्कुल नीरस तरीके से बिताऊँ, अगर मैं अपने अस्तित्व का कोई भी रिकॉर्ड या स्मृति छोड़े बिना एक निरर्थक जीवन जीऊँ, तो क्या मुझे बस अपने भाग्य से संतुष्ट रहना चाहिए, क्योंकि मैं ऐसा ही इंसान हूँ? आप मज़ाक कर रहे हैं। मैं ऐसी ज़िंदगी एक पल में छोड़ दूँगा!

दार्शनिक: आप विशेष बनना चाहते हैं, चाहे कुछ भी हो?

युवक: नहीं! देखो, जिसे तुम "सामान्य" कहते हो, उसे स्वीकार करने से मुझे अपने निष्क्रिय स्वभाव को स्वीकार करना पड़ेगा! यह बस यही कहेगा, "मैं बस इतना ही कर सकता हूँ और यही ठीक है।" मैं ऐसी निष्क्रिय जीवनशैली को स्वीकार करने से इनकार करता हूँ। क्या तुम्हें लगता है कि नेपोलियन, सिकंदर महान, आइंस्टीन या मार्टिन लूथर किंग ने "सामान्य" को स्वीकार किया होगा? और सुकरात और प्लेटो के बारे में क्या? बिल्कुल नहीं! ज़्यादा संभावना यही है कि वे सभी किसी महान आदर्श या उद्देश्य की मशाल थामे हुए अपना जीवन जीते थे। तुम्हारे तर्क के अनुसार कोई दूसरा नेपोलियन कभी नहीं उभर सकता। तुम दुनिया से प्रतिभाओं को मिटाने की कोशिश कर रहे हो!

दार्शनिक: तो आप यह कह रहे हैं कि जीवन में ऊंचे लक्ष्य रखने चाहिए।

युवक: लेकिन यह तो स्पष्ट है!

"सामान्य होने का साहस"—वाकई कितने भयानक शब्द हैं। क्या एडलर और यह दार्शनिक सचमुच मुझे ऐसा रास्ता चुनने के लिए कह रहे हैं? बिल्कुल साधारण, गुमनाम लोगों के बीच एक और आत्मा बनकर जीने के लिए? बेशक, मैं कोई प्रतिभाशाली नहीं हूँ। हो सकता है कि "सामान्य" होना ही मेरे पास एकमात्र विकल्प हो। हो सकता है कि मुझे अपने साधारण स्वभाव को स्वीकार करना पड़े और एक साधारण, रोज़मर्रा के जीवन को जीने के लिए समर्पित होना पड़े। लेकिन मैं इससे लड़ूँगी। चाहे कुछ भी हो जाए, मैं इस आदमी का अंत तक विरोध करूँगी। ऐसा लगता है कि हम अपनी चर्चा के केंद्र में पहुँच रहे हैं। युवा

Machine Translated by Google

आदमी की धड़कनें तेज़ थीं, और हवा में सर्दी के बावजूद, उसकी मुट्ठियाँ पसीने से चमक रही थीं।

Machine Translated by Google

जीवन क्षणों की एक श्रृंखला है

दार्शनिक: ठीक है। जब आप ऊँचे लक्ष्यों की बात करते हैं, तो मेरा अंदाज़ा है कि आपके मन में किसी पर्वतारोही की छवि उभर रही होगी जो शिखर पर पहुँचने का लक्ष्य रखता है।

युवा: हाँ, यह सही है। लोग, जिनमें मैं भी शामिल हूँ, पहाड़ की चोटी पर पहुँचने का लक्ष्य रखते हैं।

दार्शनिक: लेकिन अगर ज़िंदगी शिखर तक पहुँचने के लिए पहाड़ चढ़ना होती, तो ज़िंदगी का ज़्यादातर हिस्सा "रास्ते में" ही होता। यानी, किसी की "असली ज़िंदगी" पहाड़ पर चढ़ाई से शुरू होती, और उस मुकाम तक पहुँचने के लिए तय की गई दूरी एक "अस्थायी ज़िंदगी" होती, जिसका नेतृत्व एक "अस्थायी मैं" करता।

युवा: शायद यही कहना है। मैं अभी जिस तरह का हूँ, मैं निश्चित रूप से एक "रास्ते में" इंसान हूँ।

दार्शनिक: अब, मान लीजिए आप पहाड़ की चोटी तक नहीं पहुँच पाए, तो आपके जीवन पर इसका क्या असर होगा? दुर्घटनाओं, बीमारियों वगैरह के चलते लोग हमेशा पूरी ऊँचाई तक नहीं पहुँच पाते, और पहाड़ पर चढ़ना भी मुश्किलों से भरा होता है और अक्सर नाकामी में ही खत्म होता है। तो किसी का जीवन "रास्ते में" ही रुक जाएगा, और बस यह "अस्थायी मैं" एक "अस्थायी जीवन" जी रहा होगा। यह कैसा जीवन होगा?

युवक: ये तो... खैर, ये तो अपने किए का फल पाने जैसा मामला होगा। तो मेरे पास पहाड़ चढ़ने की क्षमता नहीं थी, या मेरे पास शारीरिक शक्ति नहीं थी, या मैं भाग्यशाली नहीं था, या मुझमें हुनर की कमी थी—बस! हाँ, ये एक सच्चाई है जिसे मैं स्वीकार करने को तैयार हूँ।

दार्शनिक: एडलरियन मनोविज्ञान का दृष्टिकोण अलग है। जो लोग जीवन को पहाड़ पर चढ़ने जैसा मानते हैं, वे अपने अस्तित्व को रेखाओं की तरह मानते हैं। मानो एक रेखा हो जो इस दुनिया में आते ही शुरू हो जाती है, और शिखर तक पहुँचने तक, विभिन्न आकारों के विभिन्न वक्रों में चलती रहती है, और अंततः अपने अंतिम बिंदु, जो मृत्यु है, पर पहुँचती है। यह अवधारणा, जो जीवन को एक प्रकार की रेखा मानती है,

Machine Translated by Google

कहानी, एक विचार है जो फ्रायडियन एटियलजि (कारणों का आरोपण) से जुड़ता है, और यह सोचने का एक तरीका है जो जीवन के बड़े हिस्से को कुछ ऐसा बना देता है जो "मार्ग पर है।"

युवक: अच्छा, जीवन के बारे में आपकी क्या छवि है?

दार्शनिक: इसे एक रेखा मत समझो। जीवन को बिंदुओं की एक श्रृंखला समझो। अगर तुम आवर्धक कांच से चाक से खींची गई एक ठोस रेखा को देखो, तो तुम पाओगे कि जिसे तुम एक रेखा समझ रहे थे, वह असल में छोटे-छोटे बिंदुओं की एक श्रृंखला है। रैखिक सा दिखने वाला अस्तित्व असल में बिंदुओं की एक श्रृंखला है; दूसरे शब्दों में, जीवन क्षणों की एक श्रृंखला है।

युवा: कुछ क्षणों की श्रृंखला?

दार्शनिक: हाँ। यह क्षणों की एक श्रृंखला है जिसे "अभी" कहा जाता है। हम केवल यहीं और अभी में ही जी सकते हैं। हमारा जीवन केवल क्षणों में ही मौजूद है। जो वयस्क इस बात को नहीं समझते, वे युवाओं पर "रेखीय" जीवन थोपने की कोशिश करते हैं। उनकी सोच यह है कि पारंपरिक रास्तों पर चलना—अच्छा विश्वविद्यालय, बड़ी कंपनी, स्थिर परिवार—एक सुखी जीवन है।

लेकिन जीवन रेखाओं या ऐसी किसी चीज़ से नहीं बना है।

युवा: तो फिर जीवन नियोजन या कैरियर नियोजन की कोई आवश्यकता नहीं है?

दार्शनिक: अगर जीवन एक रेखा होता, तो जीवन की योजना बनाना संभव होता। लेकिन हमारा जीवन तो बस बिंदुओं की एक श्रृंखला है। एक सुनियोजित जीवन को ज़रूरी या अनावश्यक नहीं समझा जाना चाहिए, क्योंकि यह असंभव है।

युवक: अरे, बकवास! कितना बेतुका विचार है!

Machine Translated by Google

ऐसे जियो जैसे तुम नाच रहे हो

दार्शनिक: इसमें गलत क्या है?

युवा: आपका तर्क न केवल जीवन में योजनाएँ बनाने से इनकार करता है, बल्कि प्रयास करने से भी इनकार करता है। उदाहरण के लिए, किसी ऐसे व्यक्ति का जीवन लीजिए जिसने बचपन से ही वायलिन वादक बनने का सपना देखा था, और जो वर्षों के कठोर प्रशिक्षण के बाद आखिरकार एक प्रतिष्ठित ऑर्केस्ट्रा का सक्रिय सदस्य बन गया है। या फिर किसी ऐसे व्यक्ति का जीवन, जो गहन अध्ययन से भरा है और जो सफलतापूर्वक बार परीक्षा उत्तीर्ण करके वकील बनता है। इनमें से कोई भी जीवन उद्देश्यों और योजनाओं के बिना संभव नहीं होता।

दार्शनिक: तो दूसरे शब्दों में, पर्वत शिखर तक पहुंचने का लक्ष्य रखने वाले पर्वतारोहियों की तरह, वे अपने पथ पर अडिग रहे हैं?

युवक: बिल्कुल!

दार्शनिक: लेकिन क्या सच में ऐसा है? क्या ऐसा नहीं है कि इन लोगों ने अपने जीवन का हर पल यहीं और अभी जिया है? यानी, "रास्ते में" जीवन जीने के बजाय, वे हमेशा यहीं और अभी जी रहे हैं। उदाहरण के लिए, जिस व्यक्ति का वायलिन वादक बनने का सपना था, वह हमेशा संगीत के टुकड़ों को देखता रहता था, और हर टुकड़े पर, हर सुर और हर माप पर ध्यान केंद्रित करता था।

युवा: क्या वे इस तरह अपने उद्देश्य प्राप्त कर सकेंगे?

दार्शनिक: इसे इस तरह सोचिए: ज़िंदगी पलों की एक श्रृंखला है, जिसे इंसान ऐसे जीता है मानो नाच रहा हो, अभी, हर गुज़रते पल के इर्द-गिर्द। और जब कोई अपने आस-पास का जायज़ा लेता है, तो उसे एहसास होता है, शायद मैं यहाँ तक पहुँच गया हूँ।

वायलिन का नृत्य करने वालों में, कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो इस राह पर चलते रहते हैं और पेशेवर संगीतकार बन जाते हैं। बार परीक्षा का नृत्य करने वालों में, कुछ लोग वकील बन जाते हैं।

Machine Translated by Google

ऐसे लोग जिन्होंने लेखन का नृत्य किया है और लेखक बन गए हैं। बेशक, ऐसा भी होता है कि लोग पूरी तरह से अलग-अलग जगहों पर पहुँच जाते हैं। लेकिन इनमें से किसी का भी जीवन "रास्ते में" समाप्त नहीं हुआ। अगर कोई इस नृत्य में, यहीं और अभी, पूर्णता पा लेता है, तो यह पर्याप्त है।

युवक: क्या यह पर्याप्त है कि कोई वर्तमान में नृत्य कर सके?

दार्शनिक: हाँ। नृत्य में, नृत्य ही लक्ष्य है, और किसी को भी नृत्य करके कहीं पहुँचने की चिंता नहीं होती। स्वाभाविक रूप से, ऐसा हो सकता है कि नृत्य करने के परिणामस्वरूप कोई कहीं पहुँच जाए। चूँकि व्यक्ति नृत्य कर रहा है, इसलिए वह एक ही स्थान पर नहीं रुकता। लेकिन कोई मंज़िल नहीं है।

युवक: बिना मंज़िल वाली ज़िंदगी, ऐसा कभी सुना है किसने? ऐसी अस्थिर ज़िंदगी को कौन स्वीकार करेगा, जो हवा के रुख़ के साथ झुक जाती है?

दार्शनिक: जिस तरह के जीवन की आप बात कर रहे हैं, जो किसी मंज़िल तक पहुँचने की कोशिश करता है, उसे "गतिशील (डायनामिक) जीवन" कहा जा सकता है। इसके विपरीत, जिस तरह के नृत्यमय जीवन की मैं बात कर रहा हूँ, उसे "ऊर्जावान (वास्तविक-सक्रिय-अवस्था) जीवन" कहा जा सकता है।

युवा: गतिज? ऊर्जात्मक?

दार्शनिक: आइए अरस्तू की व्याख्या देखें। साधारण गति—जिसे गति-गति कहते हैं—का एक आरंभिक बिंदु और एक अंतिम बिंदु होता है। आरंभिक बिंदु से अंतिम बिंदु तक की गति सर्वोत्तम होती है यदि इसे यथासंभव कुशलतापूर्वक और शीघ्रता से किया जाए। यदि कोई एक्सप्रेस ट्रेन ले सकता है, तो हर स्टॉप पर जाने वाली लोकल ट्रेन में यात्रा करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

युवा: दूसरे शब्दों में, यदि किसी का लक्ष्य वकील बनना है, तो सबसे अच्छा है कि वह यथाशीघ्र और कुशलतापूर्वक वहां पहुंचे।

दार्शनिक: हाँ। और उस मंज़िल तक पहुँचने के लिए जो रास्ता अपनाया जाता है, वह इस मायने में अधूरा है कि अभी तक लक्ष्य प्राप्त नहीं हुआ है। यही गतिज जीवन है।

युवक: क्योंकि यह आधा रास्ता है?

दार्शनिक: बिलकुल सही। दूसरी ओर, एनर्जिया एक प्रकार की गति है जिसमें जो "अभी बन रहा है" वही "बन चुका है।"

Machine Translated by Google

युवा: जो “अब बन रहा है” वह “बन चुका है”?

दार्शनिक: इसे एक ऐसी गति भी समझा जा सकता है जिसमें प्रक्रिया को ही परिणाम मान लिया जाता है। नृत्य भी ऐसा ही है, और यह एक यात्रा भी है।

युवक: आह, मैं उलझन में पड़ रहा हूँ... यह यात्रा क्या है?

दार्शनिक: यात्रा पर जाने का क्या उद्देश्य है? मान लीजिए आप मिस्र की यात्रा पर जा रहे हैं। क्या आप गीज़ा के महान पिरामिड तक जल्द से जल्द और कुशलतापूर्वक पहुँचने की कोशिश करेंगे, और फिर सबसे छोटे रास्ते से सीधे घर लौट जाएँगे? इसे "यात्रा" नहीं कहेंगे। घर से बाहर कदम रखते ही आपको यात्रा पर होना चाहिए, और अपनी मंज़िल तक पहुँचने के सभी पल एक यात्रा होने चाहिए। बेशक, ऐसी परिस्थितियाँ हो सकती हैं जो आपको पिरामिड तक पहुँचने से रोकती हों, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि आप यात्रा पर नहीं गए। यही "ऊर्जावान जीवन" है।

युवक: शायद मैं इसे समझ नहीं पा रहा हूँ। क्या आप पहाड़ की चोटी पर पहुँचने के लक्ष्य वाली मूल्य-प्रणाली का खंडन नहीं कर रहे थे? अगर आप ऊर्जावान जीवन की तुलना पर्वतारोहण से करें तो क्या होगा?

दार्शनिक: अगर पहाड़ पर चढ़ने का लक्ष्य शिखर तक पहुँचना होता, तो यह एक गतिज क्रिया होती। इसे चरम पर ले जाने के लिए, इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि आप हेलीकॉप्टर से पहाड़ की चोटी पर गए, वहाँ पाँच मिनट या उससे ज़्यादा रुके, और फिर हेलीकॉप्टर से वापस आ गए। बेशक, अगर आप पहाड़ की चोटी तक नहीं पहुँच पाए, तो इसका मतलब होगा कि पर्वतारोहण अभियान विफल रहा। हालाँकि, अगर लक्ष्य सिर्फ़ पहाड़ पर चढ़ना है, न कि सिर्फ़ शिखर तक पहुँचना, तो इसे ऊर्जा-आधारित कहा जा सकता है। ऐसे में, अंत में इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि कोई पहाड़ की चोटी तक पहुँचता है या नहीं।

युवक: इस तरह का तर्क तो बिल्कुल बेतुका है! तुम एक पूरी तरह से आत्म-पराजित विरोधाभास में फँस गए हो। इससे पहले कि पूरी दुनिया के सामने तुम्हारी इज़्ज़त गिर जाए, मैं तुम्हारी बेशर्मी भरी बकवास को हमेशा के लिए खत्म कर दूँगा।

दार्शनिक: ओह, मैं आपका बहुत आभारी रहूंगा।

Machine Translated by Google

यहाँ और अभी पर प्रकाश डालें

युवा: देखिए, कारण-निदान के अपने खंडन में, आपने अतीत पर ध्यान केंद्रित करने से इनकार किया। आपने कहा कि अतीत का कोई अस्तित्व नहीं है, और उसका कोई अर्थ नहीं है। मैं इन बातों को मानता हूँ। यह सच है कि अतीत को बदला नहीं जा सकता। अगर कुछ बदला जा सकता है, तो वह है भविष्य। लेकिन अब, इस ऊर्जा-आधारित जीवन शैली की वकालत करके, आप योजना बनाने का खंडन कर रहे हैं; यानी, आप अपनी इच्छा से अपने भविष्य को बदलने से भी इनकार कर रहे हैं। इसलिए जहाँ आप पीछे मुड़कर देखने से इनकार करते हैं, वहीं आगे देखने से भी इनकार कर रहे हैं। यह ऐसा है जैसे आप मुझे आँखों पर पट्टी बाँधकर एक पथहीन रास्ते पर चलने के लिए कह रहे हों।

दार्शनिक: आप न तो अपने पीछे देख सकते हैं और न ही अपने सामने?

युवक: यह सही है, मैं नहीं देख सकता!

दार्शनिक: क्या यह स्वाभाविक नहीं है? इसमें समस्या क्या है?

युवक: क्या? आप किस बारे में बात कर रहे हैं?

दार्शनिक: कल्पना कीजिए कि आप किसी थिएटर के मंच पर खड़े हैं। अगर घर की लाइटें जल रही हों, तो आप शायद हॉल के पीछे तक देख पाएँगे। लेकिन अगर आप तेज़ स्पॉटलाइट में हों, तो आप आगे की पंक्ति भी नहीं देख पाएँगे। हमारे जीवन के साथ भी ठीक ऐसा ही है। क्योंकि हम अपने पूरे जीवन पर एक मंद रोशनी डालते हैं, इसलिए हम अतीत और भविष्य देख पाते हैं। या कम से कम हम कल्पना तो करते हैं कि हम देख सकते हैं। लेकिन अगर कोई यहाँ और अभी पर तेज़ स्पॉटलाइट डाल रहा है, तो वह अतीत या भविष्य नहीं देख पाता।

युवा: एक उज्ज्वल स्पॉटलाइट?

दार्शनिक: हाँ। हमें और भी गंभीरता से यहीं और अभी जीना चाहिए। यह तथ्य कि आप सोचते हैं कि आप अतीत देख सकते हैं, या भविष्य की भविष्यवाणी कर सकते हैं, इस बात का प्रमाण है कि आप यहाँ और अभी ईमानदारी से जीने के बजाय, एक धुंधलके में जी रहे हैं। जीवन क्षणों की एक श्रृंखला है,

Machine Translated by Google

और न तो अतीत है और न ही भविष्य। आप अतीत और भविष्य पर ध्यान केंद्रित करके खुद को एक रास्ता देने की कोशिश कर रहे हैं। अतीत में जो हुआ उसका आपके वर्तमान से कोई लेना-देना नहीं है, और भविष्य में क्या होगा, यह अभी और यहाँ सोचने का विषय नहीं है। अगर आप ईमानदारी से वर्तमान में जी रहे हैं, तो आपको ऐसी चीज़ों की चिंता नहीं होगी।

युवक: लेकिन...

दार्शनिक: जब कोई फ्रायडियन एटियलजि के दृष्टिकोण को अपनाता है, तो वह जीवन को कारण और प्रभाव पर आधारित एक विशाल कहानी के रूप में देखता है। तो फिर यह सब इस पर निर्भर करता है कि मैं कहाँ और कब पैदा हुआ, मेरा बचपन कैसा था, मैंने किस स्कूल में पढ़ाई की और किस कंपनी में मुझे नौकरी मिली। और यही तय करता है कि मैं आज कौन हूँ और क्या बनूँगा। निश्चित रूप से, अपने जीवन की तुलना किसी कहानी से करना शायद एक मनोरंजक काम है। समस्या यह है कि कहानी के अंत में आने वाले धुंधलेपन को कोई देख सकता है। इसके अलावा, वह उस कहानी के अनुरूप जीवन जीने की कोशिश करेगा। और फिर वह कहता है, "मेरा जीवन ऐसा-वैसा है, इसलिए मेरे पास इस तरह जीने के अलावा कोई विकल्प नहीं है, और यह मेरी वजह से नहीं है—यह मेरा अतीत है, यह मेरा परिवेश है," इत्यादि। लेकिन यहाँ अतीत को सामने लाना एक रास्ता, एक जीवन-झूठ के अलावा और कुछ नहीं है। हालाँकि, जीवन बिंदुओं की एक श्रृंखला है, क्षणों की एक श्रृंखला है। यदि आप इसे समझ सकें तो आपको कहानी की आवश्यकता नहीं रहेगी।

युवा: अगर आप इसे इस तरह से कहें तो एडलर जिस जीवनशैली की वकालत कर रहे हैं वह भी एक तरह की कहानी है।

दार्शनिक: जीवनशैली का मतलब है अभी और यहीं, और इसे अपनी मर्ज़ी से बदला जा सकता है। अतीत का जीवन जो एक सीधी रेखा की तरह दिखता था, वह आपको सिर्फ़ इसलिए ऐसा लगता है क्योंकि आप लगातार न बदलने के संकल्प लेते रहते हैं। आपके आगे जो जीवन है, वह एक कोरा पन्ना है, और उसमें आपके लिए कोई पगडंडियाँ नहीं बिछाई गई हैं। वहाँ कोई कहानी नहीं है।

युवक: लेकिन यह तो बस पल भर की ज़िंदगी है। या इससे भी बदतर, एक भयंकर सुख-भोग!

दार्शनिक: नहीं। यहां और अभी पर प्रकाश डालने का अर्थ है, जो कुछ हम अभी कर सकते हैं, उसे ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा से करना।

Machine Translated by Google

सबसे बड़ा जीवन-झूठ

युवा: ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा से जीना?

दार्शनिक: उदाहरण के लिए, कोई विश्वविद्यालय में प्रवेश तो चाहता है, लेकिन पढ़ाई का कोई प्रयास नहीं करता। यह वर्तमान में और अभी गंभीरता से न जीने का रवैया है। बेशक, हो सकता है कि प्रवेश परीक्षा अभी दूर हो। हो सकता है कि उसे यह पता न हो कि क्या पढ़ना है या कितनी गहराई से, और उसे यह परेशानी भरा लगता हो। फिर भी, इसे थोड़ा-थोड़ा करके करना ही काफी है—हर दिन कोई कुछ गणितीय सूत्र निकाल सकता है, कुछ शब्द याद कर सकता है। संक्षेप में, कोई नृत्य कर सकता है। ऐसा करने से, उसे यह एहसास ज़रूर होगा कि "मैंने आज यही किया"; आज, यह एक दिन, इसी के लिए था। ज़ाहिर है, आज का दिन दूर भविष्य में होने वाली किसी प्रवेश परीक्षा के लिए नहीं है। और यही बात आपके पिता के लिए भी सच होगी—शायद वे अपने रोज़मर्रा के काम के नृत्य में पूरी गंभीरता से लगे रहते थे। वे बिना किसी महान उद्देश्य या उस उद्देश्य को प्राप्त करने की आवश्यकता के, वर्तमान में और अभी गंभीरता से जीते थे। और, अगर ऐसा होता, तो ऐसा लगता कि आपके पिता का जीवन सुखी था।

युवक: क्या आप मुझे इस तरह जीने के लिए कह रहे हैं? कि मुझे अपने पिता के लगातार काम के बोझ तले दबे जीवन को स्वीकार करना चाहिए...?

दार्शनिक: खुद को इसकी पुष्टि करने के लिए मजबूर करने की ज़रूरत नहीं है। बस उसके जीवन को एक सीमा के रूप में देखने के बजाय, यह देखना शुरू करें कि उसने इसे कैसे जिया, उसके जीवन के पलों को देखें।

युवा: क्षण.

दार्शनिक: और यही बात आपके अपने जीवन के बारे में भी कही जा सकती है। आप दूर के भविष्य के लिए लक्ष्य निर्धारित करते हैं, और वर्तमान को अपनी तैयारी का समय मानते हैं। आप सोचते हैं, " मैं सचमुच यह करना चाहता हूँ, और समय आने पर मैं इसे करूँगा।" यह जीवन जीने का एक ऐसा तरीका है जो जीवन को टालता है। जब तक हम जीवन को टालते रहेंगे, हम कभी कहीं नहीं जा पाएँगे और हमारे दिन एक के बाद एक नीरसता में ही बीतेंगे, क्योंकि हम यहीं और यहीं के बारे में सोचते हैं।

Machine Translated by Google

अभी को सिर्फ़ एक तैयारी के दौर के रूप में, धैर्य के समय के रूप में। लेकिन एक "यहाँ और अभी" जिसमें कोई दूर के भविष्य में किसी प्रवेश परीक्षा की तैयारी कर रहा है, उदाहरण के लिए, असली चीज़ है।

युवक: ठीक है, मैं इसे स्वीकार करता हूँ। मैं यहाँ और अभी ईमानदारी से जीना स्वीकार कर सकता हूँ, और कोई मनगढ़ंत कहानी नहीं गढ़ सकता। लेकिन मेरे जीवन में कोई सपने या उद्देश्य नहीं हैं। मुझे नहीं पता कि कौन सा नृत्य करूँ। मेरा वर्तमान और वर्तमान, बिल्कुल बेकार पलों के अलावा कुछ नहीं है।

दार्शनिक: उद्देश्य वगैरह न रखना ठीक है। यहीं और अभी ईमानदारी से जीना अपने आप में एक नृत्य है। हमें बहुत ज़्यादा गंभीर नहीं होना चाहिए। कृपया गंभीरता और अति गंभीरता को एक दूसरे से न जोड़ें।

युवा: गंभीर रहें, लेकिन बहुत गंभीर नहीं।

दार्शनिक: बिलकुल सही। ज़िंदगी हमेशा सरल होती है, इसे लेकर ज़्यादा गंभीर होने की ज़रूरत नहीं है। अगर कोई हर पल को ईमानदारी से जी रहा है, तो उसे ज़्यादा गंभीर होने की ज़रूरत नहीं है।

और एक और बात है जो मैं चाहूंगा कि आप ध्यान में रखें: जब कोई व्यक्ति ऊर्जा-संबंधी दृष्टिकोण अपना लेता है, तो जीवन सदैव पूर्ण होता है।

युवक: क्या यह पूरा हो गया?

दार्शनिक: अगर तुम्हारा जीवन, या मेरा भी, यहीं और अभी खत्म हो जाए, तो दोनों को दुखी कहना ठीक नहीं होगा। बीस साल की उम्र में खत्म होने वाला जीवन और नब्बे साल की उम्र में खत्म होने वाला जीवन, दोनों ही पूर्ण जीवन हैं, और खुशियों से भरे जीवन हैं।

युवक: तो क्या यदि मैंने यहीं और अभी ईमानदारी से जीवन जिया है, तो वे क्षण सदैव पूर्ण रहेंगे?

दार्शनिक: बिल्कुल। अब, मैंने अपनी पूरी चर्चा में "जीवन-झूठ" शब्द का बार-बार इस्तेमाल किया है। मैं सबसे बड़े जीवन-झूठ के बारे में बात करके अपनी बात समाप्त करना चाहूँगा।

युवक: कृपया करें।

Machine Translated by Google

दार्शनिक: जीवन का सबसे बड़ा झूठ है, यहाँ और अभी में न जीना। यह अतीत और भविष्य को देखते रहना है, अपने पूरे जीवन पर एक धुंधली रोशनी डालना है, और यह मान लेना है कि आप कुछ देख पा रहे हैं। अब तक, आप वर्तमान से मुँह मोड़कर केवल मनगढ़ंत अतीत और भविष्य पर ही प्रकाश डालते रहे हैं। आपने अपने जीवन से, इन अपूरणीय क्षणों से एक बहुत बड़ा झूठ बोला है।

युवक: ओह, ठीक है!

दार्शनिक: तो जीवन के झूठ को त्याग दो और निडर होकर यहीं और अभी पर एक उज्ज्वल प्रकाश डालो। यह कुछ ऐसा है जो तुम कर सकते हो।

युवक: क्या मैं ऐसा कर सकता हूँ? क्या आपको लगता है कि मुझमें इन पलों को ईमानदारी से जीने का साहस है, बिना जीवन-झूठ का सहारा लिए?

दार्शनिक: चूँकि न तो अतीत है और न ही भविष्य, तो आइए अभी की बात करें। इसका फैसला कल या आने वाला कल नहीं करता। यह यहीं और अभी है।

Machine Translated by Google

अर्थहीन प्रतीत होने वाले जीवन को अर्थ दें

युवक: आप क्या कह रहे हैं?

दार्शनिक: मुझे लगता है कि यह चर्चा अब पानी के किनारे तक पहुँच गई है। आप पानी पिएँगे या नहीं, यह पूरी तरह आप पर निर्भर है।

युवक: आह, शायद एडलरियन मनोविज्ञान और आपका दर्शन मुझे सचमुच बदल रहे हैं। हो सकता है कि मैं न बदलने का अपना संकल्प छोड़कर, जीने का एक नया तरीका, एक नई जीवनशैली अपनाने की कोशिश कर रहा हूँ... लेकिन रुकिए, एक आखिरी बात है जो मैं पूछना चाहता हूँ।

दार्शनिक: और वह क्या होगा?

युवा: जब जीवन को क्षणों की एक श्रृंखला के रूप में लिया जाता है, मानो वह केवल यहीं और अभी मौजूद हो, तो इसका क्या अर्थ हो सकता है? मैं किसलिए पैदा हुआ हूँ, और अपनी आखिरी साँस तक इस कष्टमय जीवन को किसलिए झेल रहा हूँ? इन सबका अर्थ मेरी समझ से परे है।

दार्शनिक: जीवन का अर्थ क्या है? लोग किसलिए जी रहे हैं? जब किसी ने एडलर से ये सवाल पूछे, तो उनका जवाब था: "आम तौर पर जीवन का कोई अर्थ नहीं होता।"

युवक: क्या जीवन निरर्थक है?

दार्शनिक: जिस दुनिया में हम रहते हैं, वह लगातार हर तरह की भयावह घटनाओं से घिरी रहती है, और हम चारों ओर युद्ध और प्राकृतिक आपदाओं के कहर के बीच जी रहे हैं। युद्ध की उथल-पुथल में बच्चों की मौत के तथ्य के सामने, जीवन के अर्थ के बारे में बात करना मुश्किल हो जाता है। दूसरे शब्दों में, जीवन के बारे में बात करने के लिए सामान्यीकरण का कोई मतलब नहीं है। लेकिन बिना कोई कार्रवाई किए ऐसी समझ से परे त्रासदियों का सामना करना, उनकी पुष्टि करने के समान है।

परिस्थितियाँ चाहे जो भी हों, हमें किसी न किसी रूप में कार्रवाई करनी ही होगी। हमें कांट के "झुकाव" के सामने खड़ा होना होगा।

Machine Translated by Google

युवक: हाँ!

दार्शनिक: अब, मान लीजिए कि कोई व्यक्ति किसी बड़ी प्राकृतिक आपदा का अनुभव करता है, और उसकी प्रतिक्रिया अतीत को एक कारणात्मक तरीके से देखने और यह सोचने की होती है, "ऐसी घटना किस कारण से घटित हुई होगी?" यह कितना सार्थक होगा? कठिनाई का अनुभव आगे देखने और यह सोचने का अवसर होना चाहिए कि अब मैं क्या कर सकता हूँ?

युवक: मैं पूरी तरह सहमत हूँ!

दार्शनिक: और एडलर ने कहा कि "सामान्यतः जीवन का कोई अर्थ नहीं है", फिर आगे कहा, "जीवन का जो भी अर्थ है, वह व्यक्ति द्वारा ही उसे दिया जाना चाहिए।"

युवा: व्यक्ति द्वारा इसे सौंपा गया? इसका क्या मतलब है?

दार्शनिक: युद्ध के दौरान, मेरे दादाजी पर बमबारी की गई थी और उनका चेहरा बुरी तरह जल गया था। हर लिहाज़ से, यह एक भयावह और अमानवीय घटना थी। उनके लिए "दुनिया एक भयानक जगह है" या "लोग मेरे दुश्मन हैं" के नज़रिए से जीवनशैली चुनना निश्चित रूप से संभव था। हालाँकि, जब मेरे दादाजी अस्पताल जाने के लिए ट्रेन में सफर करते थे, तो हमेशा दूसरे यात्री होते थे जो उनके लिए अपनी सीटें छोड़ देते थे। यह बात मैंने अपनी माँ से सुनी थी, इसलिए मुझे नहीं पता कि उन्हें वास्तव में कैसा लगा होगा। लेकिन मेरा मानना है: मेरे दादाजी ने "लोग मेरे साथी हैं और दुनिया एक अद्भुत जगह है" के नज़रिए से जीवनशैली चुनी थी। एडलर ठीक यही बात कह रहे हैं जब वे कहते हैं कि जीवन का जो भी अर्थ है, वह व्यक्ति को ही देना होगा। इसलिए सामान्य तौर पर जीवन का कोई अर्थ नहीं है। लेकिन आप उस जीवन को अर्थ दे सकते हैं। और केवल आप ही अपने जीवन को अर्थ दे सकते हैं।

युवक: तो फिर, मुझे बताइए! मैं इस अर्थहीन जीवन को सही अर्थ कैसे दे सकता हूँ? मुझे अभी आत्मविश्वास नहीं आया है!

दार्शनिक: तुम अपनी ज़िंदगी में खोए हुए हो। तुम क्यों खोए हुए हो? तुम इसलिए खोए हुए हो क्योंकि तुम आज़ादी चुनने की कोशिश कर रहे हो, यानी एक ऐसा रास्ता जिस पर तुम्हें दूसरों द्वारा नापसंद किए जाने का डर न हो और तुम दूसरों की ज़िंदगी न जी रहे हो—एक ऐसा रास्ता जो सिर्फ़ तुम्हारा है।

युवक: बिलकुल सही! मैं खुशी और आज़ादी चुनना चाहता हूँ!

Machine Translated by Google

दार्शनिक: जब कोई आज़ादी चुनने की कोशिश करता है, तो स्वाभाविक है कि वह रास्ता भटक जाए। इस मोड़ पर, एडलरियन मनोविज्ञान एक "मार्गदर्शक तारे" को एक भव्य कम्पास के रूप में पेश करता है जो आज़ादी के जीवन की ओर इशारा करता है।

युवा: एक मार्गदर्शक सितारा?

दार्शनिक: जिस तरह एक यात्री ध्रुव तारे पर निर्भर रहता है, उसी तरह हमें भी अपने जीवन में एक मार्गदर्शक तारे की ज़रूरत होती है। यही एडलरियन मनोविज्ञान की सोच है। यह एक व्यापक आदर्श है जो कहता है कि जब तक हम इस दिशासूचक यंत्र को नज़रअंदाज़ नहीं करते और इस दिशा में चलते रहते हैं, तब तक खुशी बनी रहती है।

युवक: वह तारा कहां है?

दार्शनिक: यह दूसरों के लिए योगदान है।

युवक: हुह? दूसरों के लिए योगदान!

दार्शनिक: चाहे आप किसी भी दौर से गुज़र रहे हों, या फिर ऐसे लोग हों जो आपको नापसंद करते हों, जब तक आप "मैं दूसरों के लिए योगदान देता हूँ" के मार्गदर्शक सिद्धांत को नज़रअंदाज़ नहीं करते, तब तक आप अपना रास्ता नहीं भटकेंगे, और आप जो चाहें कर सकते हैं। चाहे आपको नापसंद किया जाए या नहीं, आप इस पर ध्यान न दें और आज़ादी से जिएँ।

युवा: यदि दूसरों के लिए योगदान का सितारा मेरे ऊपर आसमान में ऊंचा रहेगा, तो मेरे साथ हमेशा खुशियां और साथी रहेंगे।

दार्शनिक: तो फिर, आइए हम वर्तमान के क्षणों में ईमानदारी से नाचें और ईमानदारी से जिएँ। न अतीत को देखें, न भविष्य को। हर पल को एक नृत्य की तरह जिएँ। किसी से प्रतिस्पर्धा करने की ज़रूरत नहीं है, और न ही मंज़िल की कोई ज़रूरत है। जब तक आप नाच रहे हैं, आप कहीं न कहीं पहुँच ही जाएँगे।

युवा: एक “जगह” जिसे कोई और नहीं जानता!

दार्शनिक: ऊर्जामय जीवन का यही स्वभाव है। अगर मैं अपने अब तक के जीवन पर नज़र डालूँ, तो चाहे मैं कितनी भी कोशिश करूँ, मुझे कभी भी इस बात का संतोषजनक उत्तर नहीं मिल पाएगा कि मैं यहाँ और अभी क्यों हूँ। हालाँकि, एक समय मेरा ध्यान यूनानी दर्शन पर था, लेकिन जल्द ही मैंने इसके साथ-साथ एडलरियन मनोविज्ञान का अध्ययन भी शुरू कर दिया, और आज मैं यहाँ हूँ, मेरे अपूरणीय मित्र, आपसे गहन बातचीत में। यह इसी का परिणाम है कि

Machine Translated by Google

पलों में नाचे—इसे समझाने का यही एकमात्र तरीका है। जब आप यहीं और अभी पूरी ईमानदारी से नाचे होंगे, तभी आपके जीवन का अर्थ आपको स्पष्ट होगा।

युवक: ऐसा होगा? मैं... । मुझे आप पर विश्वास है!

दार्शनिक: हाँ, यकीन मानिए। एडलर के विचारों के साथ कई सालों तक जीने के दौरान, मैंने एक बात नोटिस की है।

युवक: और वह?

दार्शनिक: बात यह है कि एक व्यक्ति की शक्ति महान है, या यूँ कहें कि "मेरी शक्ति अथाह महान है।"

युवक: आपका क्या मतलब है?

दार्शनिक: दूसरे शब्दों में, अगर "मैं" बदलूँगा, तो दुनिया बदलेगी। इसका मतलब है कि दुनिया सिर्फ़ मैं ही बदल सकता हूँ और कोई और इसे मेरे लिए नहीं बदलेगा। एडलरियन मनोविज्ञान सीखने के बाद से मुझे जो दुनिया दिखाई दी है, वह वो दुनिया नहीं है जिसे मैं पहले जानता था।

युवक: अगर मैं बदलूँगा, तो दुनिया बदलेगी। कोई और मेरे लिए दुनिया नहीं बदलेगा...

दार्शनिक: यह उस सदमे जैसा है जो किसी ऐसे व्यक्ति को होता है जो कई सालों तक निकट दृष्टि दोष से पीड़ित रहने के बाद पहली बार चश्मा लगाता है। दुनिया की पहले से धुंधली रूपरेखाएँ स्पष्ट हो जाती हैं, और रंग भी ज़्यादा चटकीले हो जाते हैं। इसके अलावा, न केवल व्यक्ति के दृश्य क्षेत्र का एक हिस्सा, बल्कि पूरा दृश्यमान संसार भी स्पष्ट हो जाता है।

मैं केवल कल्पना कर सकता हूं कि यदि आपका भी ऐसा ही अनुभव होगा तो आप कितने खुश होंगे।

युवक: काश! मुझे ये दस साल पहले पता होता, या सिर्फ़ पाँच साल पहले भी। काश, मुझे ये पाँच साल पहले पता होता, नौकरी मिलने से पहले...

दार्शनिक: नहीं, ऐसा नहीं है। आप कहते हैं कि काश आपको यह बात दस साल पहले पता होती। ऐसा इसलिए है क्योंकि एडलर के विचार अब आपके मन में गूंज रहे हैं, इसलिए आप ऐसा सोच रहे हैं।
कोई नहीं जानता कि दस साल पहले आप इसके बारे में कैसा महसूस करते। यह चर्चा ऐसी थी जिसे आपको अभी सुनना ज़रूरी था।

Machine Translated by Google

युवक: हां, मैंने निश्चित रूप से ऐसा किया!

दार्शनिक: एक बार फिर, मैं आपको एडलर के शब्द देता हूं: "किसी को तो शुरुआत करनी ही होगी।"
हो सकता है कि दूसरे लोग सहयोग न करें, लेकिन इसका आपसे कोई लेना-देना नहीं है। मेरी सलाह यही है: आपको शुरुआत करनी चाहिए। इस बात की परवाह किए बिना कि दूसरे सहयोग कर रहे हैं या नहीं।"

युवा: मैं अभी यह नहीं कह सकता कि मैं बदल गया हूँ, या वह दुनिया बदल गई है जिसे मैं उस सुविधाजनक स्थान से देख सकता हूँ। लेकिन एक बात मैं पूरे विश्वास के साथ कह सकता हूँ: यहाँ और अभी पूरी तरह से चमक रहा है! हाँ, यह इतना उज्ज्वल है कि मुझे कल का लगभग कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है।

दार्शनिक: मुझे लगता है तुमने पानी पी लिया है। तो आगे चल रहे युवा मित्र, क्या हम साथ-साथ चलेंगे?

युवक: मुझे भी तुम पर यकीन है। हाँ, चलो साथ चलते हैं। और तुम्हारे समय के लिए शुक्रिया।

दार्शनिक: आपका भी धन्यवाद।

युवक: मुझे उम्मीद है कि अगर मैं कभी फिर से यहाँ आपसे मिलने आऊँ तो आपको कोई आपत्ति नहीं होगी। हाँ, एक अनमोल दोस्त की तरह। और मैं आपके तर्कों को तोड़-मरोड़कर पेश करने के बारे में और कुछ नहीं कहूँगा।

दार्शनिक: हा-हा! आख़िरकार, तुमने मुझे एक जवान इंसान की मुस्कान दिखा ही दी। खैर, अब तो काफ़ी देर हो चुकी है। चलो अपनी-अपनी रातें गुज़ारें और नई सुबह का स्वागत करें।

युवक ने धीरे से अपने जूतों के फीते बाँधे और दार्शनिक के घर से निकल गया। दरवाज़ा खोलते ही उसने देखा कि उसके सामने बर्फ़ का एक दृश्य फैला हुआ है। पूर्णिमा का चाँद, अपनी तैरती हुई आकृति को छिपाकर, उसके पैरों के नीचे झिलमिलाती सफ़ेदी को रोशन कर रहा था। कैसी साफ़ हवा। कैसी चकाचौंध भरी रोशनी। मैं इस ताज़ी बर्फ़ पर पैर रखने जा रहा हूँ, और अपना पहला कदम रखने जा रहा हूँ। युवक ने एक गहरी साँस ली, अपने चेहरे पर उगी हल्की सी दाढ़ी को रगड़ा, और ज़ोर देकर बुदबुदाया, "दुनिया सरल है, और ज़िंदगी भी।"

Machine Translated by Google

अंतभाषण

जीवन में कई बार ऐसा होता है कि एक दिन कोई किताब हाथ में लेने पर अगली सुबह उसका परिदृश्य पूरी तरह बदल जाता है।

1999 की सर्दी का मौसम था, और मैं बीस साल का युवा था, जब मुझे इकेबुकुरो की एक किताब की दुकान पर ऐसी ही एक किताब पढ़ने का सौभाग्य मिला। यह किताब थी इचिरो किशिमी की "अडोरा शिनरिगाकु न्युमोन" (एडलरियन मनोविज्ञान का परिचय)।

यहाँ एक ऐसा विचार था, जो हर तरह से गहरा था, फिर भी सरल भाषा में व्यक्त किया गया था, जो हमारे स्वीकृत ज्ञान को उसकी जड़ों से ही उलट देता था। एक कोपरनिकस क्रांति जिसने आघात को नकार दिया और एटियलजि को उद्देश्य विज्ञान में बदल दिया।

फ्रायड और जंग के विचारकों के प्रवचनों में हमेशा कुछ न कुछ अटपटा सा लगता था, इसलिए मैं बहुत गहराई से प्रभावित हुआ। ये अल्फ्रेड एडलर कौन थे? मुझे उनके अस्तित्व के बारे में पहले कैसे पता नहीं चला? एडलर की या उनके बारे में लिखी हर किताब जो मुझे मिल सकी, मैंने खरीद ली और पूरी तरह से उनमें डूब गया और उन्हें बार-बार पढ़ा।

लेकिन तभी मुझे एक ख़ास बात ने चौंका दिया। मेरी रुचि सिर्फ़ एडलर के मनोविज्ञान में नहीं थी, बल्कि दार्शनिक इचिरो किशिमी के ज़रिए उभरी किसी चीज़ में थी: मैं किशिमी-एडलर अध्ययन की तलाश में था।

सुकरात, प्लेटो और अन्य प्राचीन यूनानी दार्शनिकों के विचारों पर आधारित, किशिमी द्वारा प्रस्तुत एडलर का मनोविज्ञान हमें एक विचारक, एक दार्शनिक के रूप में प्रकट करता है, जिसका कार्य नैदानिक मनोविज्ञान की सीमाओं से कहीं आगे तक गया। उदाहरण के लिए, "केवल सामाजिक संदर्भों में ही एक व्यक्ति एक व्यक्ति बनता है" यह कथन निश्चित रूप से हेगेलियन है; वस्तुनिष्ठ सत्य की तुलना में व्यक्तिपरक व्याख्या पर ज़ोर देते हुए, वह नीत्शे के विश्वदृष्टिकोण को प्रतिध्वनित करता है; और हुसरल और हाइडेगर के घटनाविज्ञान की याद दिलाने वाले विचार प्रचुर मात्रा में हैं।

एडलरियन मनोविज्ञान, जो इन दार्शनिक अंतर्दृष्टियों से प्रेरणा लेकर यह घोषणा करता है कि “सभी समस्याएं पारस्परिक संबंधों की समस्याएं हैं”, “लोग बदल सकते हैं और इस क्षण से खुश हो सकते हैं”, और “समस्या क्षमता की नहीं, बल्कि साहस की है”, इस भ्रमित युवा के विश्वदृष्टिकोण को पूरी तरह से बदलना था।

Machine Translated by Google

फिर भी, मेरे आस-पास लगभग कोई भी ऐसा नहीं था जिसने एडलरियन मनोविज्ञान के बारे में सुना हो। आखिरकार, मेरे मन में आया कि मैं किसी दिन किशिमी के साथ मिलकर एक किताब लिखूँ जो एडलरियन मनोविज्ञान (किशिमी-एडलर अध्ययन) का एक निर्णायक संस्करण हो, और मैंने एक के बाद एक संपादकों से संपर्क किया और बेसब्री से इस अवसर का इंतज़ार करने लगा।

मार्च 2010 में आखिरकार मैं किशिमी से मिल पाया, जो क्योटो में रहते हैं। एडलरियन मनोविज्ञान का परिचय पहली बार पढ़े हुए दस साल से ज़्यादा हो गए थे।

जब किशिमी ने मुझसे कहा, "सुकरात के विचार प्लेटो द्वारा व्यक्त किए गए थे। मैं एडलर के लिए प्लेटो बनना चाहूँगा," तो बिना कुछ सोचे मैंने उत्तर दिया, "तो, मैं आपके लिए प्लेटो बनूँगा, श्रीमान किशिमी।" और इस तरह इस पुस्तक की कल्पना की गई।

एडलर के सरल और सार्वभौमिक विचारों का एक पहलू यह है कि कई बार ऐसा लगता है कि वे स्पष्ट बातें कह रहे हैं, जबकि कई बार ऐसा लगता है कि वे पूरी तरह से अवास्तविक, आदर्शवादी सिद्धांतों का समर्थन कर रहे हैं।

तदनुसार, इस पुस्तक में, पाठक के मन में उठने वाले किसी भी संदेह पर ध्यान केंद्रित करने की आशा में, मैंने एक दार्शनिक और एक युवक के बीच संवाद का प्रारूप अपनाया है।

जैसा कि इस कथा में निहित है, एडलर के विचारों को अपनाना और उन्हें व्यवहार में लाना कोई आसान काम नहीं है। कुछ ऐसे बिंदु होते हैं जो विद्रोह करने को मजबूर करते हैं, कुछ ऐसे कथन होते हैं जिन्हें स्वीकार करना कठिन होता है, और कुछ ऐसे प्रस्ताव होते हैं जिन्हें समझने में कठिनाई हो सकती है।

लेकिन एडलर के विचारों में किसी भी व्यक्ति का जीवन पूरी तरह से बदलने की शक्ति है, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने एक दशक पहले मेरा जीवन बदल दिया था। फिर बस एक कदम आगे बढ़ने का साहस चाहिए।

अंत में, मैं इचिरो किशिमी के प्रति अपनी गहरी कृतज्ञता व्यक्त करना चाहता हूँ, जिन्होंने मुझे कभी शिष्य नहीं माना, जबकि मैं उनसे बहुत छोटा था, बल्कि एक मित्र की तरह मुझसे मिले; संपादक योशिफुमी काकियुची के प्रति, जिन्होंने हर कदम पर मेरा दृढ़ और अटूट समर्थन किया; और अंत में, इस पुस्तक के सभी पाठकों के प्रति।

आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।

फूमिताके कोगा

एडलर की मृत्यु को आधी सदी से भी ज़्यादा समय बीत चुका है, और समय अभी भी उनके विचारों की ताज़गी को नहीं पकड़ पाया है। हालाँकि उनकी तुलना फ्रायड या जंग से की जा सकती है,

Machine Translated by Google

आज जापान में एडलर का नाम बहुत कम जाना जाता है। एडलर की शिक्षाओं को एक "सामुदायिक खदान" कहा जाता है जहाँ से कोई भी कुछ न कुछ निकाल सकता है। और हालाँकि उनका नाम अक्सर अनदेखा कर दिया जाता है, फिर भी उनकी शिक्षाओं का प्रभाव दूर-दूर तक फैला हुआ है।

मैं अपनी किशोरावस्था के उत्तरार्ध से ही दर्शनशास्त्र का अध्ययन कर रहा था, और लगभग उसी समय जब मेरा बच्चा पैदा हुआ, जब मैं लगभग तीस वर्ष का था, तब मुझे पहली बार एडलरियन मनोविज्ञान का ज्ञान हुआ। यूडेमोनिक सिद्धांत, जो "सुख क्या है?" प्रश्न का अन्वेषण करता है, पश्चिमी दर्शन के केंद्रीय विषयों में से एक है। जिस व्याख्यान में मैंने पहली बार एडलरियन मनोविज्ञान के बारे में जाना, उससे पहले मैंने इस प्रश्न पर कई वर्ष विचार किया था। जब व्याख्याता ने अपने मंच से यह घोषणा की, "आज मेरा व्याख्यान सुनने वाले लोग इस क्षण से बदल सकेंगे और खुश रह सकेंगे," तो मुझे घृणा हुई। लेकिन साथ ही, मुझे यह भी एहसास हुआ कि मैंने कभी इस बारे में गहराई से नहीं सोचा था कि मैं स्वयं सुख कैसे पा सकता हूँ, और इस विचार के साथ कि "सुख पाना" शायद मेरी कल्पना से कहीं अधिक आसान है, मैंने एडलरियन मनोविज्ञान में रुचि ली।

इस तरह, मैं दर्शनशास्त्र के साथ-साथ एडलरियन मनोविज्ञान का भी अध्ययन करने लगा।
हालाँकि, मुझे जल्द ही एहसास हो गया कि मैं उन्हें दो अलग-अलग क्षेत्रों के रूप में अलग-अलग अध्ययन नहीं कर सकता।

उदाहरण के लिए, उद्देश्यवाद (teology) का विचार, एडलर के समय में अचानक प्रकट हुआ न होकर, प्लेटो और अरस्तू के दर्शन में मौजूद है। मेरे लिए यह स्पष्ट हो गया कि एडलरियन मनोविज्ञान एक ऐसी सोच थी जो यूनानी दर्शन के समान ही थी। इसके अलावा, मैंने देखा कि सुकरात द्वारा युवाओं के साथ किए गए संवाद, जिन्हें प्लेटो ने भावी पीढ़ियों के लिए लिखित रूप में दर्ज किया था, आज प्रचलित परामर्श से बहुत मिलते-जुलते हैं।

यद्यपि बहुत से लोग दर्शनशास्त्र को समझने में कठिन मानते हैं, लेकिन प्लेटो के संवादों में कोई विशेष भाषा नहीं है।

यह अजीब है कि दर्शनशास्त्र ऐसी चीज़ है जिसकी चर्चा केवल विशेषज्ञों द्वारा समझे जाने वाले शब्दों में की जाती है। क्योंकि अपने मूल अर्थ में, दर्शनशास्त्र का तात्पर्य "ज्ञान" से नहीं, बल्कि "ज्ञान के प्रति प्रेम" से है, और जो नहीं पता उसे सीखने और ज्ञान तक पहुँचने की प्रक्रिया ही महत्वपूर्ण है।

अंत में किसी को ज्ञान प्राप्त होगा या नहीं, यह कोई मुद्दा नहीं है।

आज प्लेटो के संवादों को पढ़ने वाला व्यक्ति यह जानकर आश्चर्यचकित हो सकता है कि संवाद
उदाहरण के लिए, साहस के विषय में चर्चा बिना किसी निष्कर्ष पर पहुंचे ही समाप्त हो जाती है।

सुकरात के साथ संवाद करने वाले युवा, शुरुआत में उनकी कही बातों से कभी सहमत नहीं होते। वे उनके कथनों का पूरी तरह खंडन करते हैं। यह पुस्तक सुकरात के बाद से चली आ रही दर्शनशास्त्र की परंपरा को आगे बढ़ा रही है, और इसीलिए यह एक दार्शनिक और एक युवा के बीच संवाद के स्वरूप का अनुसरण करती है।

Machine Translated by Google

एडलरियन मनोविज्ञान, जो एक और दर्शन है, के बारे में जानने के बाद, मैं उस शोधकर्ता के जीवन जीने के तरीके से असंतुष्ट हो गया जो केवल अपने पूर्ववर्तियों के लेखन को पढ़ता और उसकी व्याख्या करता है। मैं सुकरात की तरह संवाद करना चाहता था, और अंततः मैंने मनोचिकित्सा क्लीनिकों और अन्य संस्थानों में परामर्श का अभ्यास शुरू कर दिया।

स्थानों.

ऐसा करते हुए मेरी मुलाकात कई युवाओं से हुई।

ये सभी युवा ईमानदारी से जीना चाहते थे, लेकिन उनमें से कई ऐसे थे जिन्हें सांसारिक, थके हुए बुजुर्गों ने "अधिक यथार्थवादी बनने" के लिए कहा था और वे अपने सपनों को छोड़ने के कगार पर थे, वे लोग जो पारस्परिक संबंधों में उलझने के कठिन अनुभवों से गुजरे थे, जो कि जटिल थे क्योंकि वे शुद्ध थे।

ईमानदारी से जीने की चाहत रखना एक ज़रूरी बात है, लेकिन यह अपने आप में काफ़ी नहीं है। एडलर हमें बताते हैं कि सभी समस्याएँ पारस्परिक संबंधों की समस्याएँ हैं। लेकिन अगर कोई अच्छे पारस्परिक संबंध बनाना नहीं जानता, तो वह दूसरों की अपेक्षाओं को पूरा करने की कोशिश में लग सकता है। और जब उसके पास कहने के लिए कुछ होता भी है, तो भी दूसरों को ठेस पहुँचाने के डर से संवाद करने में असमर्थ होने पर, वह वह सब छोड़ सकता है जो वह वास्तव में करना चाहता है।

हालांकि लोग अपने परिचितों के बीच निश्चित रूप से लोकप्रिय हो सकते हैं, और बहुत से लोग उन्हें नापसंद भी नहीं करेंगे, लेकिन अंततः वे अपना जीवन जीने में असमर्थ हो जाएंगे।

इस पुस्तक में वर्णित युवक जैसे युवा व्यक्ति के लिए, जिसके सामने अनेक समस्याएं हैं और जो वास्तविकता के प्रति कठोर जागृति का अनुभव कर चुका है, इस दार्शनिक द्वारा प्रस्तुत विचार, कि यह दुनिया एक सरल स्थान है और आज के बाद कोई भी व्यक्ति खुश रह सकता है, आश्चर्यजनक हो सकता है।

एडलर कहते हैं, "मेरा मनोविज्ञान सभी लोगों के लिए है", और प्लेटो की तरह विशेष भाषा का प्रयोग न करते हुए, वे हमें अपने पारस्परिक संबंधों को बेहतर बनाने के लिए विशिष्ट कदम बताते हैं।

अगर एडलर की सोच को स्वीकार करना मुश्किल है, तो इसकी वजह यह है कि यह सामान्य सामाजिक सोच के विपरीत विचारों का संकलन है, और इसे समझने के लिए इसे रोज़मर्रा की ज़िंदगी में व्यवहार में लाना ज़रूरी है। हालाँकि उनके शब्द कठिन नहीं हैं, फिर भी उनमें एक तरह की कठिनाई हो सकती है, जैसे सर्दियों के बीच भीषण गर्मी की कल्पना करना, लेकिन मुझे उम्मीद है कि पाठक अपनी पारस्परिक संबंधों की समस्याओं को सुलझाने के लिए यहाँ दी गई कुंजियाँ समझ पाएँगे।

जिस दिन मेरे सहयोगी और इस पुस्तक के लेखक फुमिताके कोगा पहली बार मेरे घर आए
अध्ययन करते हुए उन्होंने कहा, “मैं आपके लिए प्लेटो बनूंगा, श्री किशिमी।”

Machine Translated by Google

आज हम सुकरात के दर्शन के बारे में इसलिए जान पा रहे हैं, क्योंकि उन्होंने कोई ज्ञात रचनाएँ नहीं छोड़ीं। प्लेटो ने उनके संवादों को लिखित रूप में लिखा था। लेकिन प्लेटो ने सुकरात के कहे शब्दों को सिर्फ़ दर्ज़ नहीं किया। प्लेटो द्वारा उनके शब्दों की सही समझ के कारण ही सुकरात की शिक्षाएँ आज भी लोगों तक पहुँचती हैं।

कोगा की असाधारण समझ की बदौलत, जिन्होंने कई वर्षों तक मेरे साथ लगातार संवाद जारी रखा, यह पुस्तक प्रकाशित हो पाई है। कोगा और मैं, दोनों ही विश्वविद्यालय के दिनों में अक्सर अपने शिक्षकों से मिलने जाते थे, और इस पुस्तक में वर्णित युवा हम दोनों में से कोई भी हो सकता है, लेकिन सबसे बढ़कर, वह आप हैं, जिन्होंने यह पुस्तक उठाई। मुझे पूरी उम्मीद है कि भले ही आपके मन में शंकाएँ बनी रहें, मैं एक दार्शनिक के साथ इस संवाद के माध्यम से जीवन की हर परिस्थिति में आपके समाधान में सहायक हो सकूँगा।

इचिरो किशिमी

Machine Translated by Google

नापसंद होने का साहस, इचिरो किशिमी और फुमिताके कोगा द्वारा

"द करेज टू बी डिस्लाइक्ड" के लिए इस रीडिंग ग्रुप गाइड में एक परिचय, चर्चा के प्रश्न और आपके बुक क्लब को बेहतर बनाने के लिए सुझाव शामिल हैं। सुझाए गए प्रश्न आपके रीडिंग ग्रुप को चर्चा के लिए नए और दिलचस्प पहलू और विषय खोजने में मदद करने के लिए हैं। हमें उम्मीद है कि ये विचार आपकी बातचीत को समृद्ध करेंगे और पुस्तक के प्रति आपके आनंद को बढ़ाएँगे।

परिचय

"द करेज टू बी डिस्लाइक्ड" एक युवक और एक दार्शनिक के बीच अल्फ्रेड एडलर के सिद्धांतों पर चर्चा के दौरान हुई बातचीत पर आधारित है। बीसवीं सदी के एक कम-ज्ञात मनोवैज्ञानिक, एल्डर, जिनका काम फ्रायड और जंग के समकक्ष है, खुशी के प्रति एक मुक्तिदायक दृष्टिकोण में विश्वास करते हैं जिसमें प्रत्येक मनुष्य के पास अतीत या भविष्य की चिंता किए बिना एक सुखी और पूर्ण जीवन जीने की शक्ति और क्षमता हो। उनका संवाद पाँच रातों तक चलता है, और पाठक को उस युवक के साथ यात्रा करने के लिए आमंत्रित किया जाता है, जब वह एल्डर के ज्ञान की गहराई से जूझता है, उससे लड़ता है और अंततः उससे प्रभावित होता है।

चर्चा के लिए विषय और प्रश्न

पहली रात: आघात से इनकार 1. क्या आप भी

उस युवक की तरह शुरू से ही दार्शनिक के विचारों को अस्वीकार करने के लिए दृढ़ संकल्पित हैं?
ऐसा क्यों हो सकता है?

2. “हर कोई चाहता है कि वह बदल सके,” युवक कहता है। क्या आप सहमत हैं? अगर आप अपने बारे में एक चीज़ बदल सकते, तो वह क्या होती और क्यों?
3. आपके पास कौन-से "उपकरण" हैं? 1 से 10 के पैमाने पर आकलन करें कि आप इस समय अपने जीवन में खुशियाँ लाने के लिए अपने उपकरणों का कितनी सफलतापूर्वक उपयोग कर रहे हैं?

Machine Translated by Google

दूसरी रात: सभी समस्याएं पारस्परिक संबंधों की समस्याएं हैं

4. क्या आपको यह सुनकर सुकून मिलता है कि "दूसरों के साथ अपने रिश्तों में चोट न पहुँचना मूलतः असंभव है"? क्यों या क्यों नहीं?

5. उस समय का वर्णन करें जब आपकी स्वयं की हीनता की भावना ने आपके जीवन में बदलाव लाने या आगे बढ़ने के लिए एक प्रकार के लांचपैड के रूप में कार्य किया हो।
6. क्या आप इस बात से सहमत हैं कि प्यार करना ज़िंदगी का सबसे मुश्किल काम है? आप ऐसा क्यों सोचते हैं?

तीसरी रात: अन्य लोगों की चीजों को त्यागें

7. दार्शनिक के प्रश्न का उत्तर दें: कोई व्यक्ति दूसरों से प्रशंसा क्यों चाहता है?
   (पृष्ठ 116)
8. दार्शनिक स्वतंत्रता की निम्नलिखित परिभाषा प्रस्तुत करते हैं: "स्वतंत्रता होना है
   दूसरे लोगों द्वारा नापसंद किया जाना।" आप स्वतंत्रता को कैसे परिभाषित करेंगे?
9. क्या आपमें नापसंद किए जाने का साहस है? या क्या आप अपने जीवन में किसी ऐसे व्यक्ति को जानते हैं जो नापसंद किया जाता है? अगर हाँ, तो क्या उनके या आपके रिश्ते, जैसा कि दार्शनिक कहते हैं, "हल्केपन की बातें" लगते हैं?

चौथी रात: जहां विश्व का केंद्र है 10. आप अपने जीवन में सामुदायिक भावना कहां

से प्राप्त करते हैं?

11. क्या आपका जीवन इसलिए सार्थक है क्योंकि आप किसी के काम आ रहे हैं? ज़रा सोचिए कि हम इस सार्थकता को कैसे प्रकट करते हैं—उन नौकरियों के बारे में सोचिए जो हम करते हैं, उन जगहों के बारे में सोचिए जिन्हें हम रहने के लिए चुनते हैं, या उन अनुभवों के बारे में सोचिए जिन्हें हम स्वीकार या अस्वीकार करते हैं।

12. दार्शनिक युवाओं को वही सलाह देते हैं जो एडलर ने एक बार दी थी: "किसी न किसी को तो शुरुआत करनी ही होगी।" यानी, एक सार्थक जीवन, सामुदायिक भावना पैदा करने के लिए, इसकी शुरुआत आपको खुद से करनी होगी, चाहे आपके आस-पास के लोग कुछ भी कर रहे हों। आपको यह सलाह कितनी व्यावहारिक लगती है? आप "शुरुआत" कैसे कर सकते हैं?

चौथी रात: जहाँ दुनिया का केंद्र है 13. क्या आपको यह पढ़कर आश्चर्य, सुकून और/

या रोमांच हुआ कि "सौ प्रतिशत व्यक्ति जैसी कोई चीज़ नहीं होती"? जैसा कि दार्शनिक सुझाव देते हैं, आप इस तथ्य को स्वयं सक्रिय रूप से कैसे स्वीकार कर सकते हैं?

14. श्रम एक ऐसा तरीका है जिससे हम स्वयं को उपयोगी और सार्थक महसूस करते हैं, और इसलिए खुश होते हैं।
   आपके काम के कौन से पहलू आपको संतुष्टि का एहसास दिलाते हैं? क्या आपके श्रम के कुछ पहलू आपकी खुशी में खलल डालते हैं?

15. बताइए कि आप वर्तमान पर कैसे ध्यान केंद्रित करने की योजना बना रहे हैं। वर्तमान क्षण में जीने पर ध्यान केंद्रित करने के लिए आप किस प्रकार की कार्य योजना बना सकते हैं?

Machine Translated by Google

अपने बुक क्लब को बढ़ाएँ

1. "नापसंद करने का साहस" एक ऐसी किताब है जो पाठकों को एक खुशहाल और प्रामाणिक जीवन जीने का साहस सिखाती है। इस दार्शनिक की सारी सलाह आपके मन को खुद को वैसे ही स्वीकार करने के लिए प्रशिक्षित करने पर आधारित है जैसे आप हैं, और बदले में दूसरों को भी वैसे ही स्वीकार करने के लिए। अपने मन को शांत करने के लिए, अपने बुक क्लब के साथ ध्यान में कुछ समय बिताएँ। बत्तियाँ बुझा दें और एक गोलाकार में बैठ जाएँ। साथ मिलकर, विश्राम तकनीकों का अभ्यास करें, जिसमें नाक से गहरी साँस लेना और मुँह से साँस छोड़ना शामिल है। कल्पना करें कि आपका पूरा शरीर हवा से भर रहा है और फिर पूरी तरह से खाली हो रहा है। पृष्ठभूमि में, कुछ सुकून देने वाला संगीत या समुद्र की आवाज़ें बजाएँ।

   अपने आप को शांत महसूस करें और पुस्तक में उन अवधारणाओं पर चर्चा करने के लिए तैयार हो जाएं जो आपको सबसे अधिक चुनौतीपूर्ण लगती हैं।

2. "द करेज टू बी डिस्लाइक्ड" की संरचना सुकरात के संवादों से प्रेरित है, जो प्लेटो के संवादों से ली गई एक साहित्यिक शैली है जिसमें सुकरात एक मुख्य पात्र है जो बातचीत के माध्यम से जीवन के अर्थ से जुड़े सवालों के जवाब ढूँढ़ने की कोशिश करता है। सत्य की खोज की इस प्राचीन खोज के अपने संस्करण में भाग लें।

   अपने बुक क्लब में एक सुकराती मंडली का आयोजन करवाएँ। कुछ ऐसे प्रश्नों की सूची बनाएँ जिन पर आप चर्चा करना चाहते हैं और व्यक्तिगत रूप से उनके उत्तर तैयार करें। जब आपका समूह इकट्ठा हो जाए, तो एक आंतरिक मंडली और एक बाहरी मंडली बनाएँ। आंतरिक मंडली चर्चा करेगी, जबकि बाहरी मंडली देखेगी, सुनेगी और नोट्स लेगी। दोपहर के भोजन के दौरान, चर्चा करें कि मंडली आपकी नियमित बुक क्लब मीटिंग से कैसी लगी। क्या बातचीत का लहजा बदला? सुकराती मंडली के नियम यहाँ देखे जा सकते हैं: http://www.corndancer.com/tunes/tunes_print/soccirc.pdf

3. अपने बुक क्लब के साथ प्रकृति की सैर पर जाएँ। अपनी पाँचों इंद्रियों का उपयोग करके अपने आस-पास की हर चीज़ पर ध्यान दें—आप क्या सुनते हैं? सूंघते हैं? देखते हैं? स्वाद लेते हैं? इस पल में आप कैसा महसूस कर रहे हैं? क्या आप खुश हैं? अपनी सैर के दौरान जितना हो सके उतना "डेटा" इकट्ठा करें, अपने नीचे ज़मीन, अपने आस-पास की हवा और ऊपर आसमान को महसूस करें। संक्षेप में, "यहाँ और अभी पर... पूरी ईमानदारी और ईमानदारी से प्रकाश डालें।" सैर पूरी होने के बाद, अपने बुक क्लब के साथ फिर से मिलें और अनुभव के बारे में नोट्स का आदान-प्रदान करें। उस पल में जीना कैसा था?

   क्या यह आपके लिए कोई नया अनुभव था, या ऐसा कुछ जिसे आप अक्सर आज़माते हैं? क्या आप अतीत और/या भविष्य को नज़रअंदाज़ करने में सफल रहे? क्यों या क्यों नहीं?

Machine Translated by Google

लेखकों के बारे में

इचिरो किशिमी का जन्म क्योटो में हुआ था, जहाँ वे वर्तमान में रहते हैं। वे एडलरियन मनोविज्ञान पर लिखते और व्याख्यान देते हैं और जापानीज़ सोसाइटी ऑफ़ एडलरियन साइकोलॉजी के प्रमाणित परामर्शदाता और सलाहकार के रूप में मनोरोग क्लीनिकों में युवाओं को परामर्श प्रदान करते हैं। वे अल्फ्रेड एडलर की चुनिंदा रचनाओं - "द साइंस ऑफ़ लिविंग" और "प्रॉब्लम्स ऑफ़ न्यूरोसिस" का जापानी भाषा में अनुवादक हैं। इसके अलावा, वे "एडलरियन साइकोलॉजी का परिचय" के लेखक भी हैं, और कई अन्य पुस्तकें भी लिखते हैं।

फुमितके कोगा एक पुरस्कार विजेता पेशेवर लेखक और रचनाकार हैं। उन्होंने व्यवसाय-संबंधी और सामान्य गैर-काल्पनिक साहित्य की कई बेस्टसेलिंग रचनाएँ प्रकाशित की हैं। अपने बीसवें दशक के उत्तरार्ध में उनका सामना एडलरियन मनोविज्ञान से हुआ और वे इसके पारंपरिक ज्ञान—विरोधाभासी विचारों—से गहराई से प्रभावित हुए। इसके बाद, कोगा ने क्योटो में इचिरो किशिमी से कई बार मुलाकात की, उनसे एडलरियन मनोविज्ञान का सार सीखा और इस पुस्तक में प्रयुक्त यूनानी दर्शन की शास्त्रीय "संवाद प्रारूप" पद्धति के लिए नोट्स तैयार किए।

SimonandSchuster.com पर लेखकों से मिलें, वीडियो देखें और बहुत कुछ

Authors.SimonandSchuster.com/Ichiro-Kishimi

Authors.SimonandSchuster.com/Fumitake-Koga @AtriaBooks

Facebook.com/AtriaBooks @AtriaBooks

Machine Translated by Google

हमें आशा है कि आपको यह साइमन एंड शूस्टर ईबुक पढ़ने में आनंद आया होगा।

हमारी मेलिंग सूची में शामिल होने पर एक मुफ़्त ई-बुक पाएँ। साथ ही, साइमन एंड शूस्टर की नई रिलीज़, डील्स, सुझाई गई किताबें और अन्य जानकारियों के बारे में अपडेट पाएँ। साइन अप करने और नियम व शर्तें देखने के लिए नीचे क्लिक करें।

साइन अप करने के लिए यहां क्लिक करें

क्या आप पहले से ही सब्सक्राइबर हैं? अपना ईमेल दोबारा दें ताकि हम इस ई-बुक को रजिस्टर कर सकें और आपको और भी सामग्री भेज सकें जो आप पढ़ना चाहते हैं। आपको अपने इनबॉक्स में विशेष ऑफ़र मिलते रहेंगे।

Machine Translated by Google

साइमन एंड शूस्टर, इंक. की एक छाप.
1230 एवेन्यू ऑफ द अमेरिकास न्यूयॉर्क, NY 10020
www.SimonandSchuster.com

कॉपीराइट © 2013 इचिरो किशिमी और फुमिताके कोगा द्वारा

अंग्रेज़ी अनुवाद कॉपीराइट © 2017 इचिरो किशिमी और फुमिताके कोगा द्वारा

जापान में पहली बार 2013 में डायमंड इंक, टोक्यो द्वारा किरावारेरु युकी के रूप में प्रकाशित

इस पुस्तक या इसके किसी भी भाग को किसी भी रूप में पुनः प्रकाशित करने के अधिकार सहित, सभी अधिकार सुरक्षित हैं। अधिक जानकारी के लिए,
एट्रिया बुक्स सब्सिडियरी राइट्स डिपार्टमेंट, 1230 एवेन्यू ऑफ़ द अमेरिकाज़, न्यूयॉर्क, NY 10020 पर संपर्क करें।

पहला एट्रिया बुक्स हार्डकवर संस्करण मई 2018

ATRIA BOOKS और कोलोफ़ोन साइमन एंड शूस्टर, इंक. के ट्रेडमार्क हैं।

थोक खरीद पर विशेष छूट के बारे में जानकारी के लिए कृपया साइमन एंड शूस्टर स्पेशल सेल्स से 1-866-506-1949 या
business@simonandschuster.com पर संपर्क करें।

साइमन एंड शूस्टर स्पीकर्स ब्यूरो आपके लाइव कार्यक्रम में लेखकों को ला सकता है। अधिक जानकारी के लिए या कार्यक्रम बुक करने के लिए,
साइमन एंड शूस्टर स्पीकर्स ब्यूरो से 1-866-248-3049 पर संपर्क करें या हमारी वेबसाइट www.simonspeakers.com पर जाएँ।

जेसन स्नाइडर द्वारा आंतरिक डिजाइन
जैकेट डिज़ाइन: अल्बर्ट टैंग
जैकेट कला © एलिनेसियस/डिपॉज़िटफ़ोटोज़

लाइब्रेरी ऑफ कांग्रेस कैटलॉगिंग-इन-पब्लिकेशन डेटा नाम: किशिमी, इचिरो, 1956-
लेखक। | कोगा, फूमिटेक, 1973- लेखक।
शीर्षक: नापसंद किये जाने का साहस: जापानी घटना जो आपको दिखाती है कि कैसे अपना जीवन बदलें और वास्तविक खुशी प्राप्त करें / इचिरो किशिमी, फुमितके कोगा।
अन्य शीर्षक: किरावारेरु युकी. अंग्रेज़ी विवरण: न्यूयॉर्क:
एट्रिया बुक्स, 2018.
पहचानकर्ता: LCCN 2018002432 (प्रिंट) | LCCN 2018009555 (ईबुक)

Machine Translated by Google

विषय: एलसीएसएच: एडलर, अल्फ्रेड, 1870-1937 | आत्म-साक्षात्कार (मनोविज्ञान) | एडलरियन मनोविज्ञान | जीवन का आचरण | विचार और सोच | बीआईएसएसी: स्व-सहायता / व्यक्तिगत विकास / खुशी | स्व-सहायता / प्रेरक और प्रेरणादायक | दर्शन / स्वतंत्र इच्छा और नियतिवाद।

वर्गीकरण: LCC BF637.S4 (ईबुक) | LCC BF637.S4 K553513 2018 (प्रिंट) | DDC 158—dc23 LC रिकॉर्ड https://lccn.loc.gov/2018002432 पर उपलब्ध है

आईएसबीएन 978-1-5011-9727-7

आईएसबीएन 978-1-5011-9729-1 (ईबुक)

यह अंग्रेजी संस्करण डायमंड, इंक. सी/ओ टटल-मोरी एजेंसी, इंक., टोक्यो के माध्यम से चांडलर क्रॉफर्ड एजेंसी, मैसाचुसेट्स, यूएसए के साथ व्यवस्था द्वारा प्रकाशित किया गया है।